बरेलवियत

लेखक

अल्लामा एहसान इलाही ज़हीर शहीद

तर्जुमा

सै॰ शौकत सलीम सहसवानी

विषय सूची

क्या-? .... कहाँ-?

अल्लामा एहसान इलाही ज़हीर शहीद रह०
एक नज़र में

नाम– अल्लामा एहसान इलाही ज़हीर बिन हाजी ज़ुहूर इलाही साहब

स्थान व जन्मतिथि– सियालकोट–1940 ई०

शिक्षा एवं प्रशिक्षण– प्राइमरी शिक्षा हिफ्ज़ कुरआन से लेकर दर्से निज़ामियां में और आलिम फ़ाज़िल तक जामिया इस्लामिया गूजरांवाला और जामिया सलफ़िया फ़ैज़ाबाद से हासिल की। उच्च शिक्षा के लिए इस्लामिक यूनिवर्सिटी मदीना तशरीफ़ ले गए। 1969 ई० में उच्च श्रेणी से पास करके वतन आ गए, और पंजाब यूनिवर्सिटी से छः विषयों में एम०ए० किया, अर्थात अर्बी, उर्दू, फ़ारसी, फ़ल्सफ़ा, इतिहास, एम०ओ०एल० (क़ानून) और इस्लामियात सभी परीक्षाएं अच्छे नम्बरों से पास कीं। आप कई ज़बानों में समान महारत रखते थे।

किताबें– शिक्षा के दौरान ही से लिखने व संपादन का काम शुरू कर दिया था। लगभग बीस बड़ी किताबें सम्पादित कीं इसके अलावा असंख्य लेख व छोटी पुस्तिकाएं लिखी। इनकी अन्तिम किताब शहादत की

घटना से केवल सात घंटे पहले पूरी हुई थी। कुछ महत्व पूर्ण किताबों के नाम ये हैं-

1. अल्क़ादियानियत दरासात व तहलील .... अरबी
2. मिर्ज़ाइयत और इस्लाम .... उर्दू
3. क़ादियानियत .... अंग्रेज़ी
4. अलबाबिया अर्ज़ व नक़्द .... अरबी
5. अलबहाइया नक़्द व तहलील .... अरबी
6. अश्शीआ वस सुन्नह .... अरबी
7. अश्शीआ वस सुन्नह .... फ़ारसी
8. अश्शीआ वस सुन्नह .... अंग्रेज़ी
9. अश्शीआ व अहले बैअत .... अरबी
10. अश्शीआ वल कुरआन .... अरबी
11. अल बरेलवियत अक़ाइद व तारीख़ .... अरबी
12. अत्तसव्वुफ़ .... अरबी

इनमें अधिकांश किताबों के दस से अधिक एडीशन निकल चुके हैं जिसमें अश्शीआ वस्सुन्नह अरबी का 31 वां एडीशन मिस्र से पिछले साल निकला है। दुनिया की अक्सर ज़िन्दा ज़बानों में उनकी किताबों के अनुवाद हो चुके हैं। अरबी, उर्दू, फ़ारसी, अंग्रेज़ी के अलावा तुर्की, थाई, इन्डोनेशियाई और मालदीपी भाषाओं में इनकी नई किताबें कई कई बार और कई कई अनुवादों के साथ निकल चुकी हैं। अश्शीआ वस सुन्नह के केवल इन्डोनेशी भाषा में तीन अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं जिनमें एक

पर भूमिका इन्डोनेशिया के प्रधान मंत्री डाक्टर मुहम्मद नासिर ने लिखा है।

पत्रकारिता– पत्रकारिता के मैदान में लम्बे समय तक रहे, और विभिन्न समयों में साप्ताहिक अल एअ़तिसाम, साप्ताहिक 'अहले हदीस', साप्ताहिक 'अल इस्लाम' के सम्पादक रहे और फिर अपना व्यक्तिगत मासिक 'तरजुमानुल हदीस' निकाला। जिसके आजीवन सम्पादक रहे।

राजनीति– अपनी धार्मिक, शैक्षिक और पंचारिक गतिविधियों में व्यस्त होने के कारण 1968 ई० तक आप राजनीति से दूर रहे। 1969 ई० में राजनीति के मैदान में क़दम रखा, भुट्टू के दौर में कई बार जेल गए। आपके बुलन्द इरादों में फ़र्क़ न आया बल्कि हिम्मत व साहस के साथ डटे रहे। आप इस शेअ़र के अर्थ पर पूरे उतरे–

आईने जवां मर्दां हक़ गोई व बेबाकी
अल्लाह के शेरों को आती नहीं रोबाही

- तहरीक इस्तिक़लाल में बढ़चढ़ कर हिस्सा लिया यहाँ तक कि इसके केन्द्रीय सूचना सचिव भी रहे। 1977 ई० में आप तहरीके इस्तिक़लाल के कार्यकारी नेता बनाए गए।
- बंगला देश ना मन्जूर तहरीक में भी भरपूर हिस्सा लिया।
- तहरीक निज़ामे मुस्तफ़ा के लिए बड़ी कोशिशें कीं।
- ज़ियाउल हक़ साहब की सरकार ने आपको उलमा की एड वाइज़री कौनसिल का सदस्य मनोनीत किया था मगर आपने इससे त्याग पत्र दे दिया।

- तिहरीके इस्तिक़लाल से अलग होने के बाद जमीअत अहलेहदीस को दोबारा संगठित किया और उसे बड़ी भारी सफ़लता दिलायी।
- अहले हदीस यूथ फ़ोर्स की स्थापना की जिसके द्वारा नवजवानों ने अहले हदीस में जिहाद की रूह फूंकी।
- जमीयत अहले हदीस के महा सचिव रहे।
- आपकी राजनैतिक गतिविधियों से भय भीत होकर पाकिस्तान सरकार ने अनेकों बार झूठे मुक़द्दमों में आपको फंसाया और जाइदाद की कुर्की के आदेश जारी किए मगर आपकी दृढ़ता में कण भर भी कमज़ोरी न आयी।

विदेशी दौरे

आपने थोड़ी अवधि में अपनी शंक्षिक व वैचारिक किताबों और बे मिसाल खुतबात द्वारा इल्मी व दीनी क्षेत्रों में जो स्थान प्राप्त कर लिया था उसे देखते हुए दुनिया के कोने कोने से सम्मेलनों, सेमीनारों में भाग लेने की दावतें आती रहती थीं जिनमें आप अधिकतर भाग लेते रहते थे। सऊदी अरब, कुएत, क़तर, संयुक्त अरब इमारात व मिस्र में तो आप का अक्सर जाना रहता था इसके अलावा अमेरिका, ब्रिटेन, कनाडा, सूडान, थाइलैन्ड, इन्डोनेशिया, मलेशिया के भी अनेक दौरे किए थे।

तक़रीर (भाषण)

यह आपका विशेष मैदान था बल्कि लोक प्रिय चीज़ थी। आपकी ज़ोरदार तक़रीर, शोला बयानी और प्रभाव शाली का एक जमाना क़ाइल है आज से लग भग चौदह साल पहले पाकिस्तान के सुख्यात अदीब,

पत्रकार व ख़तीब आग़ा शोरिश काशमीरी ने अपनी किताब तहरीक ख़त्मे नबूवत में अल्लामा के बारे में यह शब्द लिखे थे।

"अल्लामा साहब एक शोला बयान ख़तीब, उच्च दर्जे के अदीब, खुले दिमाग़ के पत्रकार और बहुत सी भाषाओं में महारत रखने के बावजूद दूर अन्देश के एक उच्च आलिम हैं।"

"अल्लामा साहबे फ़न्ने ख़िताबत की नज़ाकतों से पूरी तरह परिचित थे और एक श्रेष्ठ ख़तीब हैं। आपकी तक़रीर सुनकर यह कहना पड़ता।

असर लुभाने का प्यारे तेरे बयान में है
किसी की आँख में जादू तेरी ज़बान में है

अन्तिम सफ़र

आप 23 मार्च की रात को लाहौर में जमीयत अहले हदीस की एक सभा को संबोध कर रहे थे और अल्लामा इक़बाल के शेअ़र-

काफ़िर हो तो शमशीर पे करता है भरोसा
मोमिन हो तो बे तेग़ भी लड़ता है सिपाही

की दूसरी लाइन पढ़ रहे थे कि ज़बरदस्त धमाका हुआ और तारीख़ की महानतम घटना पेश आ गयी जिसमें आप सख़्त घाइल हुए तुरन्त अस्पताल ले जाया गया। जब यह ख़बर सऊदी अरब पहुँची तो ख़ादिमुल हरमैन शाह फ़हद बिन अब्दुल अज़ीज़ के हुक्म से रियाज़ बुला लिया गया। मगर हज़ार कोशिशों के बावजूद आप ठीक न हो सके और 31 मार्च 1988 को रियाज़ में जान अल्लाह के हवाले कर दी। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

उनकी इच्छानुसार जन्नतुल बक़ीअ मदीना मुनव्वरा में हज़ारों उलमा व मशाइख़ और सोगवारों की मौजूदगी में दफ़न कर दिया गया।

–रज़ाउल्लाह अब्दुल करीम मदनी
ख़ादिम अल मअ़हद इस्लामी अस्सलफ़ी
रछा- बरेली, यू० पी०

अनुवादक की ओर से

शहीदे इस्लाम अल्लामा एहसान इलाही ज़हीर रहिम० की यह किताब भी बाक़ी किताबों की तरह कुव्वते इस्तिदलाल और इस्लामी आत्मग्लानि का दर्पण है शिक्षा के साथ बरेलवी शिक्षाओं के प्रचार प्रसार और लोक प्रियता में यद्यपि बड़ी कमी आयी है मगर इसका एक नुक़सान यह भी हुआ कि आधुनिक वर्ग धर्म से दूर होता चला गया, आधुनिक वर्ग ने जब इस्लाम के नाम पर बिदअत व बुराइयों को होते हुए देखा तो उसने तहक़ीक़ के बजाए यह सोच लिया कि शायद इस्लाम इन्हीं सब चीज़ों का नाम है। अतएँव बरेलवी विचार धारा ने नयी नस्ल को इस्लाम से दूर करने अनेश्वर वाद का नसीहत करता की गोद में फेंक दिया।

इन हालात में किसी ऐसी किताब की बड़ी सख़्त ज़रूरत थी जो नयी नस्ल और आधुनिक शिक्षा प्राप्त वर्ग को यह बतलाती कि वह शिर्क वाले कामों तथा बिदअतों को जिनको तुम अपने आस पास देख रहे हो इनका किया जाना यद्यपि धर्म के नाम पर हो रहा है मगर किताब व सुन्नत की पाकीज़ा शिक्षाओं का उसे कोई सम्बन्ध नहीं।

अल्लामा साहब की यह किताब इस ज़रूरत को पूरा करने का एक

प्रभावी साधन है। काफ़ी समय से आपकी उर्दू किताबों का उर्दू अनुवाद प्रकाशित कराने की मांग हो रही थी ताकि दूसरे देशों की तरह पाकिस्तान की जनता भी इन किताबों से लाभ उठा सके। आख़िर कार "तर्जुमानुस्सुन्नह" ने आपकी किताबों के उर्दू अनुवाद प्रकाशित कराने का फ़ैसला कर लिया। इस सिलसिले में आपकी किताब "अल बरेलवियत" का हिन्दी अनुवाद पाठकों के सामने पेश है आशा है कि इन्शाअल्लाह इस किताब का अध्ययन बहुत से लोगों के लिए सीधे रास्ते पर आने का ज़रिया बनेगा और यह बात लेखक मरहूम के दर्जों की बुलन्दी का कारण बनेगी।

अल्लामा रह० इस किताब में एक ऐसा अध्याय भी शामिल करना चाहते थे जो रज़ा ख़ानी फ़िक़्ह के कुछ ऐसे मसाइल पर आधारित था जो खेल मानसिक वासना की पूर्ति के लिए ही लिखे गए हैं लेकिन नैतिक्ता का तक़ाज़ा था कि उनको इस किताब का हिस्सा न बनाया जाए। आप फ़रमाते थे कि अरबी भाषा उन अश्लील मसाइल के योग्य नहीं है वे सारे हवाले व लेख मेरे पास सुरक्षित हैं।

उर्दू अनुवाद करते समय मैं भी इसी नतीजे पर पहुँचा हूं कि उनके उल्लेख की ज़रूरत महसूस हुई तो इन्शाअल्लाह अगले एडीशन की भूमिका में उनका उल्लेख कर दिया जाएगा। अनुवाद करते समय मैंने अरबी इबारतों का अनुवाद करने के बजाए बरेलवी हज़रात की अस्ल किताबों की इबारतों को ही नक़ल कर दिया है ताकि अनुवाद के बाद अनुवाद से अर्थ में कोई परिवर्तन न आए।

चूंकि बहुत ही कम अवधि में इस किताब के अनुवाद और प्रकाशन का काम पूरा हुआ है इसलिए निश्चय ही इस एडीशन में इल्मी या फ़न्नी कोताहियां या कमियां पाठकों को नज़र आएंगी। इन्शाअल्लाह अगले एडीशन में इनको दूर करने की पूरी पूरी कोशिश की जाएगी। पाठक अपनी बेहतरीन रायों से हमें अवगत कराएं।

कुरआन मजीद की आयतों का अनुवाद शाह रफ़ीउद्दीन मुहद्दिसे देहलवी रहिम० के तर्जुमा कुरआन से नक़ल किया गया है बाद में अन्दाज़ा हुआ कि इसमें थोड़ी अस्पष्टता है अगले एडीशन में इस कमी को भी दूर कर दिया जाएगा इन्शाअल्लाह।

अताउर्रहमान साक़िब
इदारा तर्जुमा नुस्सुन्नह
लाहौर
मई–1988

फ़ज़ीलतुश्शैख़ अतिया मुहम्मद सालिम शरअी अदालत मदीना मुनव्वरा व मुदर्रिस व ख़तीब मस्जिदे नबवी की ओर से

तमाम प्रशंसा अल्लाह के लिए। मुझे उस्ताद एहसान इलाही ज़हीर (रहिम०) की किताब "अलबरेलावियत" पढ़ने का अवसर मिला। किताब पढ़कर मुझे इस बात पर सख़्त हैरत हुई कि मुसलमानों में इस प्रकार का गिरोह भी मौजूद है जो न केवल दीन में नयी नयी बातें पैदा करता है बल्कि उसके बुनियादी अक़ीदे ही इस्लाम से टकरा रहे हैं।

और यदि इस किताब के लेखक की इल्मी ईमानदारी पूरी दुनिया में मान्य न होती तो हमें विश्वास ही न आता कि इस प्रकार का गुरोह पाकिस्तान में मौजूद है। इस किताब के उच्च व श्रेष्ठ लेखक ने इस गिरोह के अक़ीदे व विचार धारा से पर्दा हटा कर यह साबित कर दिया है कि किताब व सुन्नत के साथ उनका कोई संबन्ध नहीं अत: इस समुदाय को

चाहिए कि वह उन अक़ीदों से तौबा करें और तौहीद व रिसालत की धारणा से परिचित होकर अपनी अस्तित्व को संवारें तथा इस ओर ध्यान दें।

इस किताब के अध्ययन के बाद हमें पता चला कि उनके अक़ीदे का आधार कुरआन व हदीस के बजाए अन्ध विश्वास और काल्पनिक क़िस्से व कहानियां हैं। लेखक एहसान इलाही ज़हीर (रहिम०) ने इस गिरोह के अनुयायियों को हिदायत व रहनुमाई और सीधे रास्ते की ओर आने की दावत देकर वास्तविक अर्थों में इस गिरोह पर बहुत बड़ा एहसान किया है अल्लाह तआला उनकी इस सराहनीय कोशिश को कुबूल फ़रमाए-आमीन।

जहाँ तक लेखक की शैली का संबन्ध है तो वह किसी परिचय का मोहताज नहीं। उनकी किताबों का अध्ययन करने वाला हर पाठक उनके अदबी शौक़ व लगन और दलीलें पेश करने की कला से अच्छी तरह परिचित है। इस किताब के लेखक की इस विषय पर सेवाएं सराहनीय हैं जिस प्रकार इल्मी शोध और भरपूर तरीक़े के साथ उन्होंने इस विषय पर क़लम उठाया है इसी के आधार पर उनकी किताबों को शैक्षिक संस्थानों और शोध संम्थानों में हवाले की हैसियत से स्थान मिला है।

लेखक (रहिम०) की बहुत बड़ी विशेषता यह है कि उनको अपनी मादरी भाषा के अलावा दूसरी बहुत सी भाषाओं पर भी पूरा योग्यता हासिल है जिसकी वजह से उन्होंने क़ादियानी, बाबी इस्माईली, बहाई, शिया और बरेलवी फ़िरकों पर जो इल्मी सामग्री पेश की है वह इल्मी व हतक़ीक़ी सामग्री अत्यन्त सराहनीय व उत्तम कार्य है।

इस पुस्तक के अध्ययन के बाद कुछ बातों का स्पष्टीकरण ज़रूरी हो जाता है. यह बताना भी ज़रूरी है कि उनकी यह तहरीक इल्मी है न वैचारिक और न ही अदबी। उनकी सारी गतिविधियों से केवल अंग्रेज़ी साम्राज्य को लाभ पहुँचाया। इस आन्दोलन के अलावा दूसरे आन्दोलन जो अंग्रेज़ों के हित में थी वह मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी का आन्दोलन था।

दोनों आन्दोलन साम्राजियों की छत्र छाया में परवान चढ़ी। जनाब अहमद रज़ा बरेलवी का वहाबियों का विरोध करना उन पर कुफ़्र का फ़तवा लगाना, जिहाद को हराम क़रार देना, ख़िलाफ़त आन्दोलन और ब्रिटिश साम्राज्य के बाइकाट के आन्दोलन का विरोध करना, अंग्रेज़ों के विरूध संघर्ष में लगे मुस्लिम रहनुमाओं को काफ़िर कहना और इस प्रकार की दूसरी गतिविधियां साम्राज्य की सेवा और उसके हाथों को मज़बूत करने के लिए थी। इस बारे में यह बात भी बड़ी महत्व पूर्ण और ध्यान देने योग्य है कि जनाब अहमद रज़ा ख़ां साहब का उस्ताद मिर्ज़ा गुलाम क़ादिर बेग, मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी का भाई था।

अंग्रज़ों की ओर से इस प्रकार के आन्दोलनों के साथ सहयोग करना भी अक़ल से परे नहीं इसलिय यह कहना कि इस आन्दोलन के पीछे साम्राजियों का खुफ़िया हाथ था यह ग़ैर मन्तिक़ी बात नहीं है और यदि इस प्रकार के आन्दोलनों के संस्थापकों को अंग्रेज़ी सरकार के पतन का पहले पता होता तो वे अपने दृष्टिकोण को निश्चय ही बदल लेते लेकिन उनकी सोच इसके विपरीत थी।

इस समप्रदाय के अनुयायी एक ओर तो इतनी उदारता से काम लेते हैं कि उनका औलिया किराम और नेक लोगों के बारे में यह अक़ीदा है कि वे खुदाई इख़्तियारात के मालिक और लाभ व हानि पर समर्थ है दुनिया व आख़िरत के सारे ख़ज़ाने इन्हीं के हाथों में है और दूसरी ओर इतना पक्का विश्वास रखते हैं कि यह अक़ीदा भी बना लिया है कि जो व्यक्ति अपने जीवन में नमाज़ रोज़ा छोड़े हुए रहा हो उसके मरने के बाद उसके नाते रिश्तेदार उसकी नमाज़ रोजों का फ़िदया देकर गुनाह माफ़ करा कर उसे जन्नत में दाख़िल करवा सकते हैं।

इस प्रकार के अक़ीदों का तो अज्ञानता काल में भी वजूद न था। बरेलवियों ने अपने सिवा सब पर कुफ़्र का फ़तवा लगा दिया यहाँ तक कि इन्होंने अपने फ़िक़ूही भाई देवबन्दियों को भी माफ़ नहीं किया और उनके निकट हर वह व्यक्ति काफ़िर व मुर्तद है जो उनके इमाम व संस्थापक के दृष्टिकोणों से सहमत न हो। लेखक ने इस किताब के एक मुस्तक़िल अध्याय में इस की व्याख्या की है।

जनाब अहमद रज़ा साहब ने इमाम इब्ने तैमिया और इमाम मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब पर कुफ़्र के फ़तवे लगाए हैं इनका अपराध केवल यह था कि वह लोगों को किताब व सुन्नत का अनुसरण और बिदअत व खुराफ़ात से बचने की दावत देते थे और ग़ैर अल्लाह की इबादत जैसे शिर्क वाले अक़ीदे से बचने की नसीहत करते थे और पूरी उम्मत को ला इलाहा इल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह के परचम तले जमा करना चाहते थे।

इस ज़माने में भी एकता की केवल यही सूरत है कि हम उन तमाम उक़ीदों व दृष्टिकोणों को छोड़ दें जो कुरआन व हदीस के विरोधी हों। नबवी दौर और ख़िलाफ़ते राशिदा के बाद की ईजाद हो और इस्लामी उसूलों व नियमों से टकराते हों इसमें कोई शक़ नहीं कि अल्लाह के अलावा ग़ैर से मदद मांगना, नेक बन्दों को हर काम पर समर्थ समझना या उनको अल्लाह के इख़्तियारात में शरीक समझना, क़ब्रों पर जाकर अपनी हाजत मांगना और इसी प्रकार के दुसरे असत्य अक़ीदे इस्लाम की, तौहीद की धारणा के विरोधी हैं हमें चाहिए कि इनसे बचने का प्रयास करें और केवल अल्लाह की ज़ात को ही तमाम इख़्तियारात का मालिक समझें।

दुआ है कि अल्लाह तआला हमें किताब व सुन्नत पर ग़ौर करने और बुजुर्गों के रास्ते पर चलने का सौभाग्य प्रदान करे।

अतिया मुहम्मद सालिम
क़ाज़ी शरअी अदालत
मदीना मुनव्वरा व
मुदर्रिस मस्जिदे नबवी शरीफ़

भूमिका

दूसरे बहुत से ग़ैर इस्लामी समुदायों पर किताबें लिखने के बाद में हिन्द व पाक में बड़ी संख्या में पाए जाने वाले गिरोह "बरेलवियत" पर अपनी यह किताब पाठकों के अध्ययन के लिए पेश कर रहा हूँ। इस गिरोह के अक़ीदे कुछ दूसरे इस्लामी देशों में तसव्वुफ़ के नाम पर प्रचलित हैं ग़ैर अल्लाह से विनती और उनके नाम की मिन्नतें मानना जैसे अक़ीदे पूर्वकाल में भी प्रचलित रहे हैं। बरेलवियों ने इन तमाम मुश्रिकाना अक़ीदों और ग़ैर इस्लामी रस्मों व रिवाजों को संगठित रूप देकर एक गिरोह की सूरत ले ली है।

इस्लामी इतिहास के अध्ययन के बाद यह बात स्पष्ट हो जाती है कि ये तमाम अक़ीदे और रस्में हिन्दू संस्कृति और दूसरे धर्मों के द्वारा मुसलमानों में दाख़िल हुई और अंग्रेज़ी साम्राज्य के ज़रिए से परवान चढ़ी हैं।

इस्लाम संघर्ष करने का पाठ सिखाता है मगर बरेलवी विचार धारा व शिक्षा ने इस्लाम को रस्म व रिवाज का पुलिन्दा बना दिया है। नमाज़ रोज़े की ओर दावत देने की बजाए उनके धर्म में उर्स क़व्वाली, पीर परस्ती

और नज़्र व नियाज़ देकर गुनाहों की बख़्शिश आदि जैसे अक़ीदों को अधिक महत्व हासिल है।

मैं बरेलवियत के विषय पर क़लम नहीं उठाना चाहता था क्योंकि मैं समझता था कि बरेलवियत चुंकि जिहालत की पैदावार है इसलिए जैसे जैसे जिहालत का दौर ख़त्म होता जाएगा वैसे वैसे बरेलवियत के विचार भी ख़त्म होते जाएंगे। मगर अब मैंने देखा कि बरेलवी लोग बिदअतों और शिर्क के कामों के प्रचार व प्रसार में एक जुट होकर संघर्ष में व्यस्त हैं और इस सिलसिले में उन्होंने हाल ही में "हिजाज़ कान्फ़्रेन्स" के नाम से बहुत सी सभाएं भी आयोजित करना शुरू कर दी है जिनमें वे किताब व सुन्नत के अनुयाइयों को लान तान का निशान बना रहे हैं और उनको रसूल सल्ल० का गुस्ताख़ और अन्य उपाधियों से नवाज़ रहे हैं तो बहुत सी ग़लतफ़हमियों को दूर करने के लिए और आधुनिक वर्ग को यह जताने के लिए कि इस्लाम अंध विश्वास और दूसरे जाहिलाना विचारों से सुरक्षित है और किताब व सुन्नत की शिक्षाएं अक़्ल व प्रकृति के ठीक मुताबिक़ है। आप लोगों को इस हक़ीक़त से सचेत करने के लिए मैंने ज़रूरी समझा कि एक ऐसी किताब लिखी जाए जो "बरेलवियत" और इस्लामी शिक्षाओं के बीच फ़र्क को सपष्ट करे ताकि शरीअते इस्लामिया को इन अक़ीदों से पाक किया जा सके जो इस्लाम के नाम पर इसमें दाख़िल हो गए हैं यद्यपि इस्लामी शरीअत का इनसे कोई संबन्ध नहीं।

बरेलवी लोगों ने हर उस व्यक्ति को काफ़िर क़रार दिया है जो उनके गढ़े हुए क़िस्से कहानियों पर ईमान नहीं रखता और उनकी बिदअतों को

इस्लाम का हिस्सा नहीं समझता।

हमारे देश की जनता हक़ीक़त से बेख़बर होने की वजह से उन लोगों को गुसताख़ समझती रही जो सही अर्थो में इस्लामी अक़ीदों पर अमल करते और नबी सल्ल० से जुड़े इस्लाम पर ही ईमान रखते थे और यह बात हक़ के प्रचार व प्रसार के रास्ते में पेश आने वाली रूकावटों में से एक रूकावट थी, मैंने इस किताब के द्वारा इस रूकावट को दूर करने की कोशिश की है।

मैंने बरेलवियों की किताबों का अध्ययन किया तो मैंने देखा कि उनकी क़िताबों में हमारी जानकारी से कहीं बढ़कर ग़ैर इस्लामी अक़ीदे मौजूद हैं। शिर्क व बिदअत की ऐसी ऐसी क़िस्में उनकी किताबों में मौजूद हैं। जिनसे अज्ञानता के काल के मुशरिक भी अनभिज्ञ थे।

बहरहाल आशा है कि यह किताब इन्शा अल्लाह शिर्क व बिदअत के ख़ातमें और तौहीद व सुन्नत के प्रचार व प्रसार में महत्वपूर्ण रोल अदा करेगी। जो लोग एकता व इत्तिफ़ाक़ की दावत देते हैं उन्हें यह राज़ समझ लेना चाहिए कि उस समय तक मुस्लिम समुदाय के बीच एकता नहीं हो सकती जब तक अक़ीदों व दृष्टिकोणों में समानता न हो, अक़ीदा एक हुए बिना एकता की आशा रखना बेकार है अतएवं हमें उम्मत के सामने सही इस्लामी अक़ीदा पेश करना चाहिए ताकि जो लोग इसे स्वीकारते चले जाएं वे एक उम्मत के रूप में आ जाएं और अक़ीदा वही अपनाना चाहिए जो किताब व सुन्नत पर आधारित हो और यदि हम मामूली सा भी मुख़्लिसाना संघर्ष कर लें तो यह समझना कोई मुश्किल

नहीं कि कौन सा अक़ीदा किताब व सुन्नत के अनुसार है, आख़िर में इस सिलसिले में उन तमाम लोगों का शुक्र अदा करता हूँ जिन्होंने इस किताब की तैयारी में मुझसे सहयोग किया।

मुझे बड़ी ख़ुशी है कि मैं मुक़द्दमें की ये पंक्तियां आधी रात के समय मस्जिदे नबवी शरीफ़ में बैठकर लिख रहा हूँ अल्लाह से दुआ है कि वह इस कोशिश को क़ुबूल करे और हमें हक़ बात समझने और उस पर अमल करने का सौभाग्य प्रदान करे।

एहसान इलाही ज़हीर
मदीना मुनव्वरा
23 मार्च 1983

बिस्मिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम

बरेलवियत

इतिहास व संस्थापक

बरेलवियत पाकिस्तान में पाए जाने वाले हनफ़ियों के विभिन्न विचारधारा रखने वालों में से एक विचार धारा है बरेलवी जिन अक़ीदों को मानते हैं उनकी स्थापना व संगठन का काम बरेलवी विचारधारा के अनुयायियों के पीर अहमद रज़ा बरेलवी ने अंजाम दिया। बरेलवी शब्द का इस्तेमाल भी इसी कारण होने लगा। इसके बारे में विस्तार से जानने के लिए देखें दाइरतुल मआरिफ़ुल इस्लामिया उर्दू 1-485

जनाब अहमद रज़ा हिन्दुस्तान के उत्तर प्रदेश राज्य में बरेली शहर में पैदा हुए। बरेलवियों के अलावा हनफ़ियों के दूसरे गिरोहों में देवबन्दी और तौहीदी उल्लेखनीय योग्य हैं। बरेलवियत के संस्थापक एक इल्मी घराने में पैदा हुए। इनके वालिद नक़ी अली और दादा रज़ा अली की गणना हनफ़ियों के प्रख्यात उलेमा में होती है। इनकी पैदाइश 14 जून 1865 को हुई। इनका नाम मुहम्मद रखा गया। वालिदा ने इनका नाम अम्मन मियां रखा। बाप ने अहमद मियां और दादा ने अहमद रज़ा। लेकिन अहमद रज़ा इन नामों में से किसी नाम पर भी सन्तुष्ट न हुए और

अपना नाम अब्दुल मुस्तफ़ा रखा। (देखें-तज़किरा उलमाए हिन्द 64, हयात आला हज़रत 1-1, आला हज़रत-बसतवी-25, ''मनहु-व अहमद रज़ा'' शुजाअत क़ादरी-15)

अहमद रज़ा पत्र व्यवहार में अपने इसी नाम का अधिक इस्तेमाल करते थे। अहमद रज़ा का रंग अत्यन्त काला था उनके विरोधी प्राय: चेहरे के कालेपन का ताना देते थे। उनके खि़लाफ़ लिखी जाने वाली एक किताब का नाम ही ''अत्तीनुल लाज़िब अलल असव दिल काज़िब'' अर्थात काले झूठे के चेहरे पर चिपक जाने वाली मिट्टी रखा गया। किताब में खन्डन की दलीलों का उल्लेख करके काले को गोरे करने की नाकाम सी कोशिश कोई अर्थ नहीं रखती। अल्लामा साहब ने हरमैन शरीफ़ैन कानफ्रेन्स से सम्बोध करते हुए इस बात का उल्लेख जिस प्रकार किया है उसका सार यह है-

1- कुछ लोगों को आपत्ति है कि हमने जनाबं अहमद रज़ा साहब की रंगत का उल्लेख कियों किया यद्यपि यह आपत्ति जनक बात नहीं है।

2- इसके जवाब में कुछ लोगों ने काले को गोरा साबित करने के लिए अपनी किताबों के पन्नों को भी अकारण काला किया है।

3- जवाब में कहा गया है कि आला हज़रत का रंग काला तो नहीं था अलबत्ता गहरा गन्दुमी था और रंग की चमक दमक भी ख़त्म हो चुकी थी हम कहते हैं कि गहरा गन्दुमी रंग की कौन सी क़िस्म है क्या ज़रूरत है इन चक्करों में पड़ने की ? सीधे तौर पर क्यों नहीं मान लिया जाता कि उनका रंग काला था।

4- इस प्रकार जवाब में जिन लोगों के हवाले से बयान किया गया है कि आला हज़रत का रंग काला नहीं था बल्कि सफ़ेद था उनमें से अब कोई भी मौजूद नहीं यह तथा कथित दलील है।

5- आज भी अहमद रज़ा की सारी औलाद का रंग काला है बहर हाल यह दोष की बात नहीं है। कुछ लोगों ने हमारे हवाले को ग़लत साबित करने की कोशिश की है अतएवं हमने उनका खंडन ज़रूरी समझा।

इस बात को उनके भतीजे ने भी माना है। वे लिखते हैं- ''छोटी उम्र में आपका रंग गहरा गंदुमी था लेकिन सख़्त परिश्रम ने आपकी रंगत की चमक दमक ख़त्म कर दी थी।

जनाब अहमद रज़ा काफ़ी कमज़ोर थे पतले दुबले थे। दर्द गुर्दा और दूसरी कमज़ोर कर देने वाली बीमारियों का शिकार थे। कमर के दर्द का शिकार रहते इसी तरह सर दर्द और बुख़ार की भी शिकायत भी आम तौर पर रहती। इनकी दायीं आँख में ख़राबी थी इसमें तकलीफ़ रहती और वह पानी उतर आने से बे नूर हो गयी थी। काफ़ी समय तक ये इलाज कराते रहे मगर यह बीमारी ठीक न हो सकी। (आला हज़रत-20, हयात आला हज़रत 1-35, हसनैन रज़ा-20, बसतवी-28, मलफ़ूज़ात आला हज़रत 63, मलफ़ूज़ात 20-21)

जनाब अब्दुल हकीम क़ादिरी साहब को शिकायत है कि मैंने आला हज़रत की आँख की ख़राबी का उल्लेख क्यों किया यद्यपि यह भी इन्सानी हुलिए का एक हिस्सा है और इस पर गुस्सा होने की बात किसी

भी तरह उचित नहीं जवाब में जनाब क़ादिरी साहब ने लिखा-"असल में यह बात बिल्कुल हक़ीक़त के ख़िलाफ़ है। हुआ यह कि **1300** हिजरी में लगातार एक महीना तक बारीक लिखी किताबें देखी हैं गर्मी की सख़्ती के कारण एक दिन गुस्ल किया। सर पर पानी पड़ते ही मालूम हुआ कि कोई चीज़ दिमाग़ से दायीं आँख में उतर आयी है। बायीं आँख बन्द करके दायीं आँख से देखा तो बीच की पुतली में एक काला घेरा नज़र आया।"

जनाब क़ादिरी साहब ने यह वाक्य मलफ़ूज़ात से नक़ल किया है लेकिन इल्मी बे ईमानी का सबूत देते हुए पूरी इबारत लिखने का बजाए इबारत का अगला भाग गोल कर गए हैं इससे ठीक आगे मलफ़ूज़ात में लिखा है। "दायीं आँख के नीचे वस्तु का कितना हिस्सा होता है (अर्थात जिस वस्तु को दायीं आँख से देखते हैं वह दबा हुआ मालूम होता है)

इस वाक्य को छोड़ने का मतलब इसके अलावा और क्या हो सकता है कि क़ादिरी साहब अपने आला हज़रत की आँख की ख़राबी को छुपाना चाहते हैं यद्यपि यह ऐसी चीज़ नहीं है जिसके उल्लेख पर नदामत महसूस की जाए किसी आँख में दोष का पाया जाना इन्सान के बस की बात नहीं यह तो ख़ुदा के इख़्तियार की बात है अत: हम क़ादिरी साहब से निवेदन करेंगे कि नदामत स्पष्ट करने की बजाए हक़ीक़त को मान लें।

• एक बार उनके सामने खाना रखा गया। उन्होंने सालन खा लिया मगर चपातियों को हाथ भी न लगाया। उनकी बीवी ने कहा क्या बात है ? उन्होंने जवाब दिया कि मुझे चपातियां दिखायी ही नहीं यद्यपि वे

सालन के पास ही रखी हुई थीं।

जनाब बरेलवी भूल जाने का भी शिकार थे उनकी विस्मरण शक्ति कमज़ोर थी। एक बार ऐनक ऊँची करके माथे पर रख ली। बात चीत करने के बाद तलाश करने लगे। ऐनक न मिली और भूल गए कि ऐनक उनके माथे पर है। काफ़ी देर परेशान रहे अचानक उनका हाथ माथे पर लगा तो ऐनक पर आकर रूक गयी तब पता चला कि ऐनक तो माथे पर ही थी। एक बार वे प्लेग का शिकार हुए और खून की उल्टी की। वे बड़े तेज़ स्वभाव थे बहुत जल्द उनको गुस्सा आ जाता था (अनवारे रज़ा-36, हयात आला हज़रत-64-22, अनवारे रज़ा-358, अलफ़ाज़िल बरेलवी-119)

ज़बान के मसले में बड़े ही असावधान थे और लान तान करने वाले थे अश्लील कलमात का अधिकांश इस्तेमाल करते। कभी कभी इस मसले में सीमा का उल्लंघन कर जाते और ऐसे ऐसे वाक्य कहते कि उनका कहा जाना किसी पढ़े लिखे व विद्वान से तो अलग किसी आम आदमी के योग्य भी न होता।

अश्लील भाषा

बरेलवियत के संस्थापक जनाब अहमद रज़ा अत्यन्त अश्लील और गन्दी भाषा इस्तेमाल करते थे यहाँ हम उनकी असभ्य भाषा के कुछ नमूनों का उल्लेख कर रहे हैं। वे अपनी किताब ''वुक़आतुस्सनान'' में लिखते हैं-

''ज़रबते मर्दां व पिदी नेमत रहमान पुशीदी-थानवी साहब। इस दसवीं कहावी पर आपत्ति में हमारे अगले मतन पर फिर नज़र डालिए देखिए वे

रसलया वाले पर कैसे ठीक उतर गए क्या इतनी महान चोटों के बाद भी न सूजी होगी।"

"रसलया कहती है मैं नहीं जानती मेरी ठहराई पर उतर---देखूं तो उसमें तुम मेरी डेढ़ गिहर कैसे खोल लेते हो ?" "वक़आतुस्सनान"

"उफ री रसलया तेरा भोलापन ! खून पोंछती जा और कह खुदा झूठ करे।" (वुक़आतुस्सनान-60)

"रसलया वाले ने अपनी दोशक़ी में तेरा एहतिमाल भी दाखिल भी कर ले। (27)

अपनी किताब खलिसुल एतिक़ाद में मौलाना हुसैन अहमद मदनी के बारे में लिखते हैं-

"कभी कभी बेशर्म से बेशर्म नापाक, घिनौनी सी घिनौनी, बेबाक़ सी बेबाक़ पाजी कम्पनी गन्दी क़ौम ने अपने पति के मुक़ाबिल बे धड़क ऐसी हरकतें कीं ? आँखें मीजकर 'गन्दा मुंह फाड़कर' उनपर गर्व किए। उन्हें बाज़ार में प्रकाशित किया ? और उनपर गर्व ही नहीं बल्कि सुनते हैं कि इनमें कोई नयी नवेली शर्मदार, बांकी नुकीली, मीठी, रसीली अलबेली, चंचल, अयोध्या बाशी आँख यह तान लेती अवेजी है--

नाचने ही को जो निकले तो कहाँ घूंघट

इस फ़ाहिशा आँख ने कोई नया ग़मज़ा तराशा और उनका नाम रखा है "शिहाब साक़िब"। (ख़ालिसुल एतिक़ाद-22)

कुफ़्र पार्टी वहाबिया का बुजुर्ग इब्लीस लईन---ख़बीसो ! तुम काफ़िर ठहर चुके हो। इब्लीस के मसख़रे, दज्जाल के गधे--- अरे

मुनाफ़िक़ो--- वहाबियो की पोच, ज़लील इमारत क़ारून की भान्ति तहतुस्सरा पहुँचती है नजदियत के कव्वे, सिसकते, वहाबियत के बूम बिलकते और मज़बूह गुस्ताख़ भड़कते। (2-20)

शाह इस्माईल शहीद के बारे में फ़रमाते हैं- "सरकश, ताग़ी शैतान, लअीन, बन्दा दाग़ी।" (अलउमन बलउला-112)

फ़तावा-ए-रिज़विया में फ़रमाते हैं- "ग़ैर मुक़ल्लिद व देवबन्दी जहन्नम के कुत्ते हैं राफ़ज़ियों (शीओं) को इनसे बुरा कहना शीओं पर ज़ुल्म करना जैसा है। (6-90)

"जो शाह इस्माईल और नज़ीर हुसैन आदि का अनुयायी हो, इब्लीस का बन्दा व जहन्नम का कुन्दा है। ग़ैर मुक़ल्लिद सब बे दीन पक्के शैतान पूरे लानत वाले हैं। (सुबहानुस्सुबूह 134)

•

इनके एक अनुयायी भी यह कहने पर मजबूर हो गए हैं कि "आप विरोधियों के पक्ष में सख़्त दुष्ट स्वभाव के थे और इस बारे में शरअी सावधानी की भी पाबन्दी नहीं करते थे। यही कारण था कि लोग उनसे नफ़रत करने लगे बहुत से उनके निष्ठा वान दोस्त भी उनकी इस आदत के कारण उनसे दूर होते चले गए। इनमें मौलवी मुहम्मद यासीन भी हैं जो मदरसा इशाअतुलउलूम के सम्पादक थे और जिनको जनाब अहमद रज़ा अपने उस्ताद का दर्जा देते थे वे भी इन से अलग हो गए।

इस पर तुर्रा यह की मदरसा मिसबाहुत्तहज़ीब जो उनके पिता ने बनवाया था वह उनके बुरे स्वभाव, तीखे बोल, गन्दी ज़बान और

मुसलमानों को काफ़िर क़रार देने के कारण उनके हाथ से जाता रहा और उसके संचालक उनसे अलाहिदा होकर वहाबियों से जा मिले और हालत यह हो गयी थी कि बरेलवियत के मर्कज़ में अहमद रज़ा साहब की हिमायत में कोई मदरसा बाक़ी न रहा जबकि बरेलवियों के आला हज़रत वहाँ अपनी तमाम गतिविधियों सहित मौजूद थे। (मक़द्दमा मुक़ालाते रज़ा-30, हयात आला हज़रत-211, 212)

जहाँ तक बरेलवी लोगों का संबंध है तो दूसरे असत्य समुदायों की भान्ति अपने इमाम व रहनुमा के गुणों व विशेषताओं का बखान करते समय बहुत सी झूठी हिकायतों का और मन गढ़त कहानियों का सहारा लेते हुए नज़र आते हैं। बरेलवी इस बात का बिलकुल ध्यान नहीं रखते कि झूठ किसी के सम्मान व महत्व में वृद्धि की बजाए उसके अनादर व अपमान तथा उपहास का कारण होता है।

अतएवं उनके बारे में कहा जाता है कि-

"आपकी सूझ बूझ व बुद्धि का यह हाल था कि चार साल की छोटी सी उम्र में जिसमें साधारण तथा दूसरे बच्चे अपने वजूद से भी अनभिज्ञ होते हैं कुरआन मजीद नाज़िरा ख़त्म कर लिया। आपकी रस्म बिस्मिल्लाह ख़्वानी के समय एक ऐसी घटना पेश आयी जिसने लोगों को अचम्भे में डाल दिया। आपके उस्ताद मोहतरम ने आपको बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम पढ़ाने के बाद अलिफ़ बा ता सा पढ़ाया। पढ़ाते पढ़ाते जब लाम अलिफ़ (ला) की नौबत आयी तो आपने ख़ामोशी अपनाली। उस्ताद ने दोबारा कहा कि मियां कहो "लाम अलिफ़" हुज़ूर ने फ़रमाया कि ये दोनों तो

पढ़ चुके फिर दोबारा क्यों ? उस समय आपके दादा मौलाना रज़ा अली ख़ां साहब ने फ़रमाया-"बेटा उस्ताद का कहा मानो" आपने उनकी ओर देखा। आपके दादा ने अपनी सूझ बूझ से समझ लिया कि बच्चे को संदेह है कि यह अलग अलग अक्षरों का बयान है अब इसमें एक शब्द मिला हुआ क्यों आया। यद्यपि बच्चे की उम्र के हिसाब से इस रहस्य को खोलना उचित न था मगर आपके दादा ने सोचा कि यह बच्चा आगे चलकर इल्म का सूरज बनकर आकाश पर चमकने वाला है अभी से राज़ व नियाज़ के पर्दे इसकी निगाह व दिल पर से हटा दिए जाएं अतएवं फ़रमाया-बेटा तुम्हारा कहना सही है लेकिन पहले जा अक्षर अलिफ़ पढ़ चुके हो वह असल में हमज़ा है और यह अलिफ़ है लेकिन अलिफ़ हमेशा साकिन होता है और साकिन के साथ चूंकि शुरूआत असंभव है इसलिए एक अक्षर अर्थात लाम अव्वल में मिलाकर इसको बोला जाता है। हज़रत ने इसके जवाब में कहा, तो कोई भी अक्षर मिला देना काफ़ी था लाम ही की क्या ख़ास बात है बा ता दाल और सीन भी शुरू में ला सकते थे।

आपके दादा ने अत्यन्त जोश व मोहब्बत में आपको गले लगा लिया और दिल से बहुत सी दुआएं दीं। फिर फ़रमाया कि लाम और अलिफ़ में सूरतन ख़ास मुनासिबत है और ज़ाहिर में लिखने में भी दोनों की शक्ल एक ही है और सीरतन इस वजह से कि लाम का दिल अलिफ़ है और अलिफ़ का दिल लाम। (बसतवी-27)

इस बिना अर्थ वाले वाक्य को देखिए और अन्दाज़ा लगाइए कि बरेलवी चार साल की उम्र में अपने आला हज़रत की बुद्धिमानी व सूझ

बूझ बयान करने में किस प्रकार के इल्मे कलाम का सहारा ले रहे हैं और बेकार क़िस्म के क़ाइदे क़ानून को आधार बनाकर उनके द्वारा अपने इमाम की इल्मीयत साबित करने की कोशिश कर रहे हैं।

स्वयं अहले ज़बान अरब में से तो किसी को तौफ़ीक़ नहीं हुई कि वह इस ला अर्थात क़ाइदे को पहचान सके और उसकी व्याख्या कर सके लेकिन इन ग़ैर अरबों में अलिफ़ और लाम के बीच सूरत व सीरत के लिहाज़ से मुनासिबत को पहचान कर इसकी व्याख्या कर दी। असल में बरेलवी क़ौम अपने इमाम को अम्बिया व रसूलों से मिसाल ही नहीं देती बल्कि उनपर प्रमुखता भी देना चाहती है और यह जताना चाहती है कि उनके इमाम व रहनुमा को किसी की ओर से शिक्षा देने की आवश्यक्ता न थी बल्कि अल्लाह की ओर से उनका सीना इल्म व हिक्मत का मर्कज़ बन चुका था और सारे इल्म उनको ईश्वर की ओर से प्रदान किए जा चुके थे। इस बात को खोल कर नसीम बसतवी ने अपनी "अलबरेलवी"-26 में और अनवारे रज़ा में 355 पृष्ठ पर लिखा है वे लिखते हैं-

"आलिमुल ग़ैब ने आपका मुबारक सीना इल्म व मारफ़त का ख़ज़ाना और ज़ेहन व दिमाग़, दिल व आत्मा ईमान व यक़ीन की पवित्र धारा, एहसास व कल्पना से ओत प्रोत कर दिया था लेकिन चूंकि हर इन्सान का इस दुनिया के साधनों से भी किसी न किसी तरीक़ा से समपर्क रहता है इसलिए देखने में आला हज़रत रज़ियल्लाहु अन्हु (मआज़ल्लाह) को भी इन साधनों के रास्ते पर चलना पड़ा।"

अर्थात दिखावे के तौर पर तो जनाब अहमद रज़ा ने अपने उस्तादों

से इल्म हासिल किया परन्तु वास्तविक रूप से वे उनकी शिक्षा के मोहताज न थे क्योंकि उनका उस्ताद स्वयं अल्लाह था।

जनाब बरेलवी स्वयं अपने बारे में लिखते हैं-

"सर का दर्द और बुख़ार वे मुबारक रोग हैं जो अम्बिया अलैहि० को होते थे।"

आगे चल कर लिखते हैं-

"अलहमदु लिल्लाह कि मुझे प्राय: बुख़ार की हरारत व दर्दे सर रहता है।" (मलफ़ूज़ात 1-64)

जनाब अहमद रज़ा असल में यह आभास कराना चाहते हैं कि उनका जिस्मानी हाल अम्बिया किराम के जैसा है। अपनी पवित्रता साबित करने के लिए एक जगह लिखते हैं- "मेरी पैदाइश की तारीख़ अब जदी हिसाब से (अल्फ़ा बेटा) कुरआन करीम की इस आयत से निकलती है जिसमें इर्शाद है-

"ये वे लोग हैं जिनके दिलों में अल्लाह तआला ने ईमान लिख दिया है और उनकी रूहानी पुष्टि कर दी है।"

और इनके बारे में इनके अनुयायियों ने लिखा है-

"आपके उस्ताद किसी आयते करीम में बार बार ज़बर बता रहे थे और आप ज़ेर पढ़ते थे यह देखकर आपके दादा ने आपको अपने पास बुला लिया और कुरआन मजीद मंगा कर देखा तो उसमें कातिब की ग़लती से ज़बर लिख दिया गया था अर्थात जो ज़ेर आप की ज़बान से निकल रहा था वही सही था फिर आपके दादा ने आपसे फ़रमाया कि

मौलवी साहब जिस तरह बताते थे उस तरह क्यों नहीं पढ़ते थे आपने कहा कि मैं इरादा करता था कि जिस तरह वे बताते हैं उसी तरह पढ़ें मगर ज़बान पर क़ाबू न पाता था। (हयात आला हज़रत-1, बसतवी-28, आला हज़रत 22)

अब्दुल हकीम क़ादिरी साहब लिखते हैं-

"आला हज़रत की ज़बान व क़लम हर प्रकार की ग़लतियों से पाक थी और इसके बावजूद कि दुनिया में हर विद्वान से कोई न कोई ग़लती होती है मगर आला हज़रत ने एक बिन्दु की भी ग़लती नहीं की।"

एक दूसरे साहब लिखते हैं-

"आला हज़रत ने अपनी पाक ज़बान से कभी ग़ैर शरअी शब्द नहीं कहा। अल्लाह ने आपको हर प्रकार की ग़लतियों से बचाकर रखा।"

और यह कि - "आला हज़रत बचपन से ही ग़लतियों से पाक थे। सीधे रास्ते की पैरवी आपके अन्दर प्रवेश कर दी गयी थी।"

(याद आ! ग हज़रज-32, फ़तावा रिज़विया 2-5)

"अनवारे रज़ा"

आला हज़रत ग़ौसे आज़म के हाथ में इस तरह थे जैसे कातिब के हाथ में क़लम और ग़ौसे आज़म नबी सल्ल० के हाथ में इस तरह थे जैसे कातिब के हाथ में क़लम और स्वयं नबी सल्ल० वहयि के सिवा कुछ इर्शाद न फ़रमाते थे।"

एक बरेलवी कवि अपने आला हज़रत के बारे में इर्शाद फ़रमाते हैं

है हक़ की रज़ा अहमद की रज़ा
अहमद की रज़ा मरज़ी-ए रज़ा
(अर्थात अहमद रज़ा बरेलवी) बाग़े फ़िर्दौस-७

उनके एक और अनुयायी लिखते हैं- "आला हज़रत का वजूद अल्लाह तआला की निशानियों में से एक निशानी था।"

(अन्वारे रज़ा-100)

सहाबा किराम रज़ि० का एक गुसताख़ अपने इमाम व रहनुमा के बारे में कहता है- "आला हज़रत की ज़ियारत ने सहाबा किराम की ज़ियारत का शौक़ कम कर दिया है।" (वसाया शरीफ़-24)

बढ़ा चढ़ा कर बोलने में अक़ल का दामन हाथ से छोड़ दिया जाता है। एक बरेलवी लेखक इस सिद्धान्त का चरितार्थ बनते हुए लिखते हैं कि-

"साढ़े तीन साल की उम्र शरीफ़ के ज़माने में एक दिन अपनी मस्जिद के सामने मौजूद थे एक साहब अरबी लिबास में तशरीफ़ लाए और आपसे अरबी भाषा में बात की। आपने (साढ़े तीन साल की उम्र में) बेहतरीन अरबी में उनसे बात की और इसके बाद उनकी सूरत देखने में नहीं आयी।" (हयात आला हज़रत-22)

एक साहब लिखते हैं-

"एक दिन उस्ताद साहब ने फ़रमाया-अहमद मियां तुम आदमी हो कि जिन्न ? मुझे पढ़ाते हुए देर लगती है लेकिन तुम्हें याद करते हुए नहीं लगती। 10 साल की उम्र में उनके पिता जो उनको पढ़ाते भी थे एक दिन कहने लगे तुम मुझसे पढ़ते नहीं बल्कि मुझे पढ़ाते हो।"

(मुक़द्दमा फ़तावा रिज़विया-2-6)

यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि उनका उस्ताद मिर्ज़ा गुलाम क़ादिर बेग मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी का भाई था। जनाब बस्तवी साहब छोटी उम्र में अपने इमाम के इल्म व फ़ज़्ल को बयान करते हुए लिखते हैं-

"14 साल की उम्र में आप सनद व दस्तारे फ़ज़ीलत से सुशेभित हुए। इसी दिन दूध पिलाने के एक मसले का जवाब लिखकर अपने पिता की सेवा में पेश किया जो बिल्कुल सही था। आपके बाप ने आपके जवाब से आपकी बुद्धिमानी व सूझ बूझ का अनुमान लगा लिया और उसी दिन से फ़तवे लिखने का काम आपके हवाले कर दिया।"

इससे पहले आठ साल की उम्र में आपने एक मसला विरासत का जवाब लिखा-

"घटना इस प्रकार थी कि आपके पिता बाहर गाँव गए हुए थे क़हीं से सवाल आया। आपने उसका जवाब लिखा और पिता जी की वापसी पर उनको दिखाया जिसे देखकर इर्शाद हुआ-मालूम होता है यह मसला अम्मन मियां (आला हज़रत) ने लिखा है इनको अभी न लिखना चाहिए था मगर इसी के साथ यह भी फ़रमाया कि हमें इस जैसा मसला कोई बड़ा लिखकर दिखाए तो जानें।" (आला हज़रत बरेलवी-32)

इससे साबित होता है कि आला हज़रत ने आठ साल की उम्र में फ़तवा लिखने का काम शुरू कर दिया था। मगर स्वयं आला हज़रत फ़रमाते हैं-

"सबसे पहला फ़तवा मैंने 1286 हिजरी में लिखा था जब मेरी उम्र तेरह साल थी और इसी तारीख़ को मेरे ऊपर नमाज़ और दूसरे अहकाम फ़र्ज़ हुए थे।" (मनहु व अहमद रज़ा-17)

अर्थात बसतवी साहब कह रहे हैं कि आला हज़रत ने आठ साल की उम्र में ही विरासत जैसे पेचीदा मसले के बारे में फ़तवा दे दिया था जब कि स्वयं आला हज़रत इसका खंडन करते हुए कह रहे हैं कि मैंने सब से पहला फ़तवा तेरह साल की उम्र में दिया था। इससे भी अधिक मज़े की बात यह है कि बरेलवी लोगों का यह दावा है कि अहमद रज़ा बरेलवी साहब ने चौदह साल की उम्र में ही पूरी शिक्षा प्राप्त करके सनद हासिल कर ली थी। (हयात आला हज़रत-33) मगर कई जगह स्वयं इसका खंडन भी कर जाते हैं अतएव हयात आला हज़रत के लेखक ज़फ़रूद्दीन बिहारी लिखते हैं-

"आला हज़रत ने मौलाना अब्दुल हक़ खै़राबादी से मनतक़ी विद्या सीखनी चाही लेकिन वे उन्हें पढ़ाने को तैयार न हुए। इसका कारण यह बताया कि अहमद रज़ा विरोधियों के ख़िलाफ़ अत्यन्त सख़्त ज़बान इस्तेमाल करने के आदी हैं। बस्तवी कहते हैं कि यह घटना उस समय की है जब उनकी उम्र बीस साल थी। (बिहारी-33, नसीम बसतवी-35)

इसी तरह बरेलवी साहब के एक अनुयायी लिखते हैं-

"आला हज़रत ने सय्यद आले रसूल शाह के सामने 1294 हिज्री में शार्गिदी इख़्तियार की और उनसे हदीस और दूसरे उलूम में सनद प्राप्त की।"

ज़फ़र बिहारी साहब कहते हैं- "आपने सय्यद आले रसूल शाह के बेटे

अबुल हुसैन अहमद से 1296 हिजरी में कुछ उलूम हासिल किए।"

(अनवारे रज़ा-356, हयात आला हज़रत-34-35)

बहरहाल एक ओर तो बरेलवी लोग यह आभास दिलाना चाहते हैं कि अहमद रज़ा 13 या 14 साल की उम्र ही में सारे उलूम से फ़ारिग़ हो चुके थे। दूसरी ओर बे ध्यानी में उसे झुठला भी रहे हैं। अब कौन नहीं जानता कि 1272 हिजरी अर्थात अहमद रज़ा साहब की तारीख़ पैदाइश और 1296 के बीच चौबीस साल की अवधि है और यदि जनाब अहमद रज़ा ने 1296 हिजरी में भी कुछ उलूम हासिल किए हों तो चौदह साल की उम्र में सनद हासिल करने की क्या तुक है ?

मगर बहुत समय पहले किसी ने कह दिया था कि झूठे का हाफ़िज़ा नहीं होता।

•

परिवार व व्यवसाय

जनाब अहमद रज़ा के परिवर के बारे में केवल इतना ही पता चला है कि उनके बाप और दादा की गिनती हनफ़ी उलमा में होती है अलबत्ता जनाब बरेलवी साहब के विरोधियों की ओर से आरोप है कि उनका संबन्ध शीआ परिवार से था उन्होंने सारी उम्र तक़य्या किए रखा और अपनी असलियत का पता न चलने दिया ताकि वे अहले सुन्नत के बीच शीआ अक़ीदों को रिवाज दे सकें। इनके विरोधी इस बात के सबूत के लिए जिन तरीक़ों को पेश किया करते हैं उनमें से कुछ का यहाँ उल्लेख किया जाता है-

1. जनाब अहमद रज़ा के बाप दादा के नाम शीआ नामों से मिलते जुलते हैं उनका शजर-ए-नसब है- अहमद रज़ा बिन नक़ी अली बिन रज़ा अली बिन काज़िम अली। (हयात आला हज़रत-2)

2. बरेलवियों के आला हज़रत ने उम्मुल मोमिनीन हज़रत आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा के ख़िलाफ़ अशोभनीय शब्दों का इस्तेमाल किया है अक़ीदा अहले सुन्नत से जुड़ा कोई व्यक्ति इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता। अपने एक क़सीदे में उन्होंने लिखा है-

तंग व चुस्त उनका लिबास और वह जोबन का उभार
मसली जाती है क़बा सर से कमर तक लेकर
यह फटा पड़ता है जोबन मेरे दिल की सूरत
कि हुए जाते हैं जामा से बरों सीना व बर

(हदाइक बख़्शिश- 3-23)

3. उन्होंने मुसलमानों में शीआ मज़हब से लिए गए अक़ीदों का प्रचार करने में भरपूर रोल अदा किया। कोई असली शीया अपने इस उद्देश्य में इतना सफल न होता जितनी सफलता अहमद रज़ा साहब को इस सिलसिले में तक़य्या के लुबादे में प्राप्त हुई है। उन्होंने अपने तशीअ पर पर्दा डालने के लिए कुछ ऐसे रिसाले भी लिखे जिनमें दिखावे को शीआ मज़हब का विरोध और अहले सुन्नत की हिमायत पायी जाती है। शीआ तक़य्ये का यह भाव है जिसका तक़ाज़ा उन्होंने पूरी तरह अदा किया।

(फ़तावा बरेलवी-14)

4. जनाब अहमद ख़ां साहब ने अपनी किताबों में ऐसी रिवायतों का उल्लेख अधिकता से किया है जो ख़ालिस शीआ रिवायतें हैं और उनका अक़ीदा अहले सुन्नत से दूर का भी वास्ता नहीं है। जैसे कि-

"हज़रत अली रज़ि० क़ियामत के दिन जहन्नम की टिकटें बाटेंगे।"

(अलअमन वलअुला-58)

"हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा का नाम फ़ातिमा इसलिए रखा गया कि अल्लाह ने उनको और उनकी सन्तान को जहन्नम से आज़ाद कर दिया है।" (ख़त्म नुबूवत-98)

''शीआ के इमामों को तक़दीस का दर्जा देने के लिए उन्होंने यह अक़ीदा गढ़ा कि अग़वास (ग़ौस का बहुवचन अर्थात लोगों की फ़रियाद सुनकर पूरी करने वाले) हज़रत अली रज़ि० से होते हुए हसन असकरी तक पहुँचते हैं इस सिलसिले में उन्होंने वही क्रम रखा है जो शीआ इमामों का है।'' (मलफ़ूज़ात-115)

जनाब अहमद रज़ा ने बाक़ी सहाबए किराम रज़ि० को छोड़कर हज़रत अली रज़ि० को मुश्किल कुशा क़रार दिया और कहा-

''जो व्यक्ति मशहूर दुआए सैफ़ी (जो शीआ अक़ीदे की तर्जुमानी करती है) पढ़े उसकी मुश्किलें हल हो जाती हैं।'' दुआए सैफ़ी यह है-

अनुवाद :- अर्थात हज़रत अली को पुकारो जिनसे अजीब काम होते हैं तुम उनको मददगार पाओगे। ऐ अली आपकी विलायत के तुफ़ैल तमाम परेशानियां दूर हो जाती हैं। (अल अमन वलउला-12-13)

इसी प्रकार उन्होंने पंजतन पाक की शब्दावली को आम किया और इस शेर को रिवाज दिया-

अनुवाद :- पाँच हास्तियां ऐसी हैं जो अपनी बरकत से हर बीमारी

को दूर करती हैं। मुहम्मद, अली, हसन, हुसैन और फ़ातिमा रज़ि० (फ़ातिमा रिज़विया-2-187)।

उन्होंने शीआ अक़ीदे की तर्जुमानी करने वाली शब्दावली "जाफ़र" की पुष्टि करते हुए अपनी किताब ख़ालिसुल एतिक़ाद में लिखा है-

"जफ़र चमड़े की एक ऐसी किताब है जो इमाम जाफ़र सादिक़ ने अहले बैत के लिए लिखी। इसमें हज़रत की सारी चीज़ें दर्ज कर दी हैं। इसी तरह इसमें क़ियामत तक घटने वाली समस्त घटनाओं का भी उल्लेख कर दिया गया है। (ख़ालिसुल एतिक़ाद-48)

इसी तरह वे शीआ शबदावली अलजामिअत का भी उल्लेख करते हुए लिखते हैं-

"कि अलजामिअत एक ऐसा सहीफ़ा है जिसमें हज़रत अली रज़ि० ने सारे आलम (जगत) की घटनाओं को अक्षरों के क्रम से लिख दिया है आपकी सन्तान में से समस्त इमाम इन मामलों व घटनाओं से पूरी तरह बा ख़बर थे। (ख़ालिसुल एतिक़ाद-48)

जनाब बरेलवी ने एक और शीआ रिवायत को अपनी किताब में दर्ज किया है कि-

"इमाम रज़ा शीआ के आठवें इमाम से कहा गया कि कोई ऐसी दुआ सिखाएं जो हम अहले बैत की क़ब्रों की ज़ियारत के समय पढ़ा करें तो उन्होंने जवाब दिया कि क़ब्र के पास जाकर चालीस बार अल्लाहु अकबर कह कर कहो- "अस्सलामु आलैकुम या अहलल बैत" ऐ अहले बैत मैं अपने और मुश्किलात के हल के लिए आपको खुदा के समक्ष सिफ़ारिशी

बनाकर पेश करता हूँ और आले मुहम्मद सल्ल० के दुश्मनों से अपने को अलग करता हूँ।" (हयातुल मवात, फ़तावा रिज़विया-4-299)

अर्थात शीआ के इमामों को मुसलमानों के निकट मुक़द्दस और सहाबा किराम रज़ि० और अहले सुन्नत के इमामों से उच्च क़रार देने के लिए उन्होंने इस प्रकार की रिवायतें आम की यद्यपि अहले तशीअ के इमामों के क्रम और इस तरह के अक़ीदों का अक़ीदा अहले सुन्नत से कोई नाता नहीं है।

जनाब अहमद रज़ा शीआ ताअज़िए को अहले सुन्नत में लोक प्रिय बनाने के लिए अपनी एक किताब में लिखते हैं-

"तबर्रुक के लिए हज़रत हुसैन रज़ि० के मक़बरे का नमूना बनाकर घर के अन्दर रखने में कोई हरज नहीं।" (रिसाला बदरूल अनवार-57)

इस प्रकार की असंख्य रिवायतें और मसाइल का उल्लेख उनकी किताबों में पाया जाता है।

5. जनाब अहमद रज़ा ने शीआ के इमामों पर आधारित सिलसिल-ए-बैअत को भी रिवाज दिया। उन्होंने इस सिलसिले में एक अरबी इबारत गढ़ी है जिससे उनकी अरबी भाषा से जानकारी के सारे दावों की हक़ीक़त का भी पता चल जाता है। वे लिखते हैं-

अरबी मैटर

अरबी भाषा का थोड़ा सा ज्ञान रखने वाले भी इस इबारत की अजमियत, वकालत और बे मक़सदियत का अन्दाज़ा कर सकते हैं ऐसे व्यक्ति के बारे में यह दावा करना कि वह साढ़े तीन साल की उम्र में ही बेहतरीन अरबी बोला करता था कितना अजीब सा लगता है।

•

अच्छी अरबी का ज्ञान नहीं

जनाब अहमद रज़ा की यह इबारत बे माना तरकीबों और ग़ैर अरबी पर आधारित वाक्यों का संग्रह है मगर हकीम अब्दुल क़ादिरी साहब को यह विश्वास है कि इसमें कोई ग़लती नहीं। बिना तर्क के विश्वास का तो कोई जवाब नहीं। यदि उनको इतना विश्वास है तो सौ बार रहे हमें इसपर कोई इन्कार नहीं, उनके इस आग्रह से यह लड़खड़ाती इबारत तो ठीक नहीं हो जाएगी मगर हमें हैरत इस बात पर है कि एक साहब ने लेखक रहिम० की अरबी किताब में से स्वयं ही कुछ ग़लतियां निकाल कर अपनी अज्ञानता का जिस प्रकार सबूत दिया है वह अपनी मिसाल आप है।

उन्होंने अपनी ग़ैर अरबी ज़ेहनियत से जब अल बरेलवियत का अध्ययन किया तो उन्हें कुछ वाक्य ऐसे नज़र आए जो उनकी तहक़ीक़ के अनुसार अरबी उसूल के एतिबार से सही नहीं थी साथ ही उन्होंने इन ग़लतियों का सुधार भी कर दिया था और यही सुधार उनकी अमानत का राज़ खोलने का कारण बन गयी। ज़रा आप भी देखें कि उनके सुधार में कितनी ग़लतियां हैं। हम यहाँ उनके कुछ सुधार किए गय वाक्यों को पेश

करते हैं ताकि पाठक उनकी इल्मी व तहक़ीक़ी मेहनतों से लाभ उठा सकें।

1. अल्हज्मुस्सग़ीर

इसके बारे में कहते हैं कि यह शब्द ग़लत है इसके बजाए अलक़त अुस्सग़ीर होना चाहिए था। जनाब को इस बात का पता ही नहीं है कि यह शब्द अरबी भाषा का है। आप शायद यह समझे कि चूंकि हजम तो उर्दू में इस्तेमाल होता है अतः यह अरबी भाषा का शब्द नहीं हो सकता। अलमुन्जिद में इसका मादा ह ज म है अलहजम का अर्थ मात्रा से किया गया है। जनाब को चाहिए कि अपनी मालूमात ठीक कर लें।

2. अलमवाज़ीअ़

इसे जनाब ने अल मवाज़िअ कर दिया है पूरी इबारत इस तरह है-

अरबी मैटर

जनाब ने इसे मौज़ूअ का बहुवचन समझ लिया और इसी लिए इसे सुधारकर मवाज़िअ कर दिया जो बजाए खुद एक ग़लत शब्द है।

3. नुज़रतु तक़दीर व एहतिराम

सुधारते समय लिखते हैं नुज़रतु ताअज़ीम व एहतेराम, मानों जनाब ने अपनी इल्मियत के ज़ोर पर यह समझा कि तक़दीर अरबी भाषा का शब्द नहीं है यद्यपि शब्द कोष की तमाम किताबों ने इस शब्द को उल्लेख किया

है और इसका अर्थ अल हुर्मतु वल वक़ार से किया है। हवाले के लिए देखें (अलमुन्जिद-645)

4. बैनुस्सुन्नह

जनाब को यह पता नहीं कि शब्द सुन्नत कह कर अहले सुन्नत का भाव भी अदा किया जाता है। सम्पादक रहिम० की किताब "अश्शीआ वस् सुन्नह" में अस् सुन्नह से तात्पर्य अहले सुन्नत ही हैं। अरबी भाषा से मामूली जानकारी रखने वाला भी इस अर्थ से परिचित होता है इसका सुधार अहलुस सुन्नह से करना इस शब्द के इस्तेमाल से जानकारी न होने की दलील है।

5. इन यबूस

फ़रमाते हैं कि यह शब्द ग़ैर अरबी है इस लिए अरबी में इसका इस्तेमाल अनुचित है। यदि जनाब को अरबी साहित्य से थोड़ी सी भी दिलचस्पी होती तो यह बात लिखकर इल्मी क्षेत्रों में जग हंसाई का कारण न बनते क्योंकि अरबी भाषा में इसका इस्तेमाल आम प्रचालित है देखें अलमुन्जिद मादा ब व स , बासा, बोसा, क़िब्ला।

6. तर्कुत तकाया

लिखते हैं यह ग़ैर अरबी शब्द है यद्यपि यह इत्तिका से लिया गया है जिसका अर्थ है अस-न-द ज़ाहरिही इला शैइन देखें अल मुन्जिद-मादा व क अ

7. रसीद

इनकी आपत्ति है कि यह शब्द अरबी में इस्तेमाल नहीं होता यद्यपि

अरब देशों में रसीदुल अम-ति-अह का इस्तेमाल आम है इसे रसीद (अर्थात स्वाद से भी लिखते हैं) अल मुन्जिद में है मादा र-स्वाद-द।

8. असदर-ए-वाफ़रमाना

अलमुन्जिद मादा-फ़-र-म अलफ़र्मान, फ़रामीन अर्थात अहद स्सुलतान लिल वलात। वे शब्द व वाक्य जो अरबी के साथ साथ दूसरे शब्द कोषों में भी इस्तेमाल होते हैं उनका इस्तेमाल ग़लत नहीं है। उन्हें ग़लत कहना अज्ञानता की खुली दलील है।

9. कुतुबु फ़ीहा लिआलिलबैत

शीआ के निकट आलुलबैत व अहलुलबैत का एक ही मतलब है। ''अलबरेलवियत'' की इस इबारत में आलुलबैत का इस्तेमाल ही सही है क्योंकि इसमें अहमद रज़ा साहब ने शीओं की तर्जुमानी की है।

10. व मन जा-अ

इसे सुधार कर इलामन जा-अ कर दिया है यहाँ इला का इस्तेमाल इसलिए नहीं किया गया कि पहले इला पर अतफ़ है इसलिए दोबारा इस्तेमाल ज़रूरी न रहा। इसके अलावा कुछ ग़लतियां ऐसी भी दर्ज हैं जो किताबत व छपाई की हैं जैसे कबीबुल नमल जबकि असल है कदबीबुल नमल, टाइप की ग़लती से द मिट गया है। इसी प्रकार अल क़िरअत में हमज़ा की जगह ल टाइप हो गया है। मनासरतु लिलइस्तिअ़मार जबकि अस्ल शब्द है मनासरेतु इस्तेअ़मार। इसी तरह इस्तरक़ाक़ की बजाए टाइप हो गया इस्तरतक़ाक़ आदि।

बहर हाल ग़लतियों की यह सूचि क़ादिरी साहब की अरबी ज़बान से

जानकारी न होने की एक खुली दलील है। बरेलवियत के उलमा की इल्मियत पहले ही सन्दिग्ध थी क़ादिरी साहब ने तो इसपर पक्की मोहर लगादी है। (साक़िब)

अरबी मैटर

इस इबारत में यह कैसी बे माना व बेतुकी तरकीब है।

अरबी मैटर

इस इबारत में मूसा अल कलीम से तात्पर्य कौन है। यदि तात्पर्य मूसा काज़िम है तो कलीम का क्या जोड़ ? और यदि तात्पर्य नबी व रसूल हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम हैं तो क्या हज़रत मूसा अलैहि० (खुदा अपनी पनाह में रखे) इमाम जाफ़र सादिक़ पर दरूद भेजकर अल्लाह तआला की खुशनूदी हासिल करना चाहते हैं ?

बहर हाल यह वाक्य रकाकत का भंडार भी है और खुराफ़ात का पुलिन्दा भी। कहने का मतलब यह है कि अहमद रज़ा ख़ां साहब ने इस नस में शीओं के इमामों का एक ख़ास क्रम से उल्लेख करके मुसलमानों को राफ़ज़ियों व शीओं के निकट लाने की नाकाम कोशिश की है।

6. जनाब बरेलवी साहब ने हिन्द व पाक के अहले सुन्नत उलमा के काफ़िर होने का फ़तवा दिया कि उनकी मस्जिदों का हुक्म आम घरों जैसा है उन्हें खुदा का घर न माना जाए। (मलफूज़ात-106) इसी तरह

उन्होंने अहले सुन्नत के साथ मिलने जुलने व निकाह को भी हराम क़रार दिया। जहाँ तक शीओं का संबन्ध है तो वे उनके इमाम बाड़ों के अबजदी क्रम से हर नाम प्रस्तावित करते रहे। (याद आला हज़रत-29)

7. अहमद रज़ा साहब पर शीआ होने का आरोप इस लिए भी लगाया जाता है कि उन्होंने शीओं के इमामों की शान में शीओं की तरह अतिशक्ति के साथ क़सीदे लिखे। (हदाइक़ बख़्शिश)

11. व्यवसाय

जनाब अहमद रज़ा साहब के व्यवसाय के बारे में विभिन्न रिवायतें मिलती हैं। कभी कहा जाता है कि वे ज़र्मीदार ख़ानदा : से संबन्ध रखते थे और घर के ख़र्च के लिए उनको सालाना रक़म मिल जाती थी जिससे वे अपनी गुज़र बसर करते। कभी कभी सालाना मिलने वाली रक़म काफ़ी न होती और वह दूसरों से क़र्ज़ लेने पर मजबूर हो जाते। कभी कहा जाता है कि उन्हें ग़ैब से काफ़ी माल व दौलत मिलता था। ज़फ़रूद्दीन बिहारी रिवायत करने हैं कि जनाब बरेलवी के पास एक बन्द सन्दूक़ची थी जिसे ज़रूरत पड़ने पर ही खोलते थे। उसमें हाथ डालते और माल, ज़ेवर जो चाहते निकाल लेते।

(अनवारे रज़ा-360, हयात आला हज़रत-5 आला हज़रत-75 अन्वारे रज़ा-57)

जनाब बरेलवी के बेटे बयान करते हैं कि आला हज़रत अपने दोस्तों और दूसरे लोगों में अधिकता से ज़ेवर और दूसरी चीज़ें बांटा करते थे और यह सारा कुछ वे उस छोटी सी सन्दूक़ची से निकालते। हमें हैरत

होती है कि न जाने इनती चीज़ें इसमें कहाँ से आती हैं।

(हयात आला हज़रत-57)

इनके विरोधी इन पर यह तोहमत लगाते हैं कि ग़ैबी हाथ का सन्दूक़ची से कोई ताल्लुक़ न था यह असल में अंग्रेज़ साम्राज्य का हाथ था जो उनको अपने लक्षय व उद्देश्यों के इस्तेमाल और मुसलमानों के बीच फूट डालने के लिए मदद देता था।

मेरी राय यह है कि उनकी आमदनी का बड़ा साधन लोगों की ओर से मिलने वाले तोहफ़ों व इमामत का वेतन था जिस प्रकार हमारे यहाँ रिवाज है कि गाँव में अपने उलमा की सेवा सदक़ा व ख़ैरात से की जीती है और हमारे ख़्याल में यही उनकी आमदनी का एक साधन था।

एक बार वे जौनपुर अपने किसी अनुयायी के यहाँ ठहरे तो उसने एक हज़ार रूपए की रक़म नज़राने के तौर पर उनको दी। उनके एक मुरीद बयान करते हैं कि एक दिन उनके पास ख़र्च के लिए एक दमड़ी न थी। आप सारी रात बेचैन रहे। सुबह हुई तो किसी व्यापारी का उधर से जाना हुआ तो उसने 51 हज़ार नज़राना आपकी सेवा में पेश किया। एक बार डाक टिकट ख़रीदने के लिए उनके पास कुछ रक़म नहीं थी तो एक मुरीद ने उनको दो सौ रूपए की रक़म भेजी। (हयात आला हज़रत-56-58)

बाक़ी जहाँ तक ज़मींदारी और सन्दूक़ची आदि का संबन्ध है तो इसमें कोई हक़ीक़त नहीं। यह कहीं से भी साबित नहीं होता कि उनका ख़ानदान खेती बाड़ी आदि से सम्बंधित था। बाक़ी करामतों के नाम पर सन्दूक़ची आदि की कहानी भी मुरीदों की नज़र में सम्मान का स्थान देने

के लिए गढ़ी गयी थी। सब बेसरोपा बातें हैं वर्ना सन्दूक़ची की मौजूदगी में नज़रानों और लोगों से उधार लेने की क्या ज़रूरत थी ?

आदतें व बातचीत का ढंग

बरेलवी आला हज़रत पान अधिकता से इस्तेमाल करते थे। यहाँ तक कि रमज़ान में वे इफ़तार के बाद केवल पान पर ही निर्भर रहते। इसी तरह हुक़्क़ा भी पीते थे (यह कितनी अजीब बात है कि दूसरों को मामूली बातों पर काफ़िर क़रार देने वाला स्वयं कैसे हुक़्क़ा पीने को जाइज़ समझता है) दूसरी खाने पीने की चीज़ों पर हुक़्के को प्रमुख्ता देते। हमारे गाँव और बाज़ारी क़िस्म के लोगों की तरह आने जाने वाले मेहमानों की आवभगत भी हुक़्के से करते। मज़े की बात है कि बरेलवी आला हज़रत से रिवायत है कि उन्होंने कहा "कि मैं हुक़्क़ा पीते समय बिस्मिल्लाह नहीं पढ़ता ताकि शैतान भी मेरे साथ शरीक हो जाए।"

लोगों के पाँव चूमने की आदत भी थी उनके एक मुरीद रिवायत करते हैं कि- आप हज़रत अशरफ़ी मियां के पांव को बोसा दिया करते थे। जब कोई हज करके वापस आता तो एक रिवायत के अनुसार तुरन्त उसके पांव चूम लेते। (अनवारे रज़ा-256, हयात आला हज़रत-67, मलफ़ूज़ात, अज़कारे हबीब रज़ा लाहौर-24, अनवारे रज़ा-306)

शैली

अपने से मामूली सा विरोध रखने वालों के ख़िलाफ़ सख़्त ज़बान इस्तेमाल किया करते। इस सिलसिले में किसी प्रकार की रिआयत न

करते। बड़े अश्लील और गन्दे शब्द बोलते। विरोधी को कुत्ता, सुअर, काफ़िर, फ़ाजिर, फ़ासिक़, मुर्तद और इस तरह के दूसरे सख़्त और गन्दे वाक्य की बरेलवी हज़रात के आला हज़रत के निकट कोई महत्त्व न था। वे बे धड़क व खुले तौर पर ऐसे वाक्य अदा कर जाते। इनकी कोई किताब इस अन्दाज़ की बात चीत और नैतिक्ता से भरी हुई शैली से खाली नहीं है।

उनकी इस प्रकार की बातचीत का उल्लेख पिछले पन्नों में आ चुका है यहाँ हम नमूने के तौर पर उनकी विभिन्न इबारतों में से एक हिस्सा नक़ल करते हैं जिससे उनकी शैली की तस्वीर पाठकों के सामने आ जाएगी।

वे देवबन्दियों के खुदा की तस्वीर खींचते हुए लिखते हैं- "तुम्हारा खुदा रन्डियों की तरह ज़िना भी कराए वर्ना देवबन्द की चकले वालियां उस पर हसेंगी कि निखटटू तो हमारे बराबर भी न हो सका फिर ज़रूरी है कि तुम्हारे खुदा की औरत भी हो और ज़रूरी हैं कि खुदा का लिंग भी हो। यूं खुदा के मुक़ाबले में एक खुदायन भी माननी पड़ेगी।

(सुब्हानुस्सुबूह-142)

अन्दाज़ा लगाएं इस तरह की शैली किसी की दीनी विद्वान को शोभा देता है और इस पर सितम यह कि दीन को नया करने का दावा, मुजददिदों के लिए इस प्रकार की बात चीत को अपनाना किस हदीस से साबित है। इन्हें आलिमे दीन कहने पर आगाह हो तो ज़रूर कहिए मगर मुजददिद कहते हुए थोड़ी सी झिझक ज़रूर महसूस कर लिया करें।

इस बारे में एक घटना है कि यह बरेलवी साहब एक बार किसी के यहाँ शिक्षा के लिए गए। मुदर्रिस ने पूछा कि आप क्या करते हैं ? कहने

लगे वहाबियों की गुमराही और उनके कुफ़्र की पोल खोलता हूँ। उस्ताद कहने लगे- "यह तरीक़ा उचित नहीं।"

तो जनाब बरेलवी साहब वहीं से वापस लौट आए और उनसे पढ़ने से इन्कार कर दिया क्योंकि उन्होंने अहमद रज़ा को तौहीद परस्तों को काफ़िर कहने से रोका था। (हयात आला हज़रत)

जहाँ तक इनकी नीअत का संबन्ध है तो वह अत्यन्त पेचीदा और उलझी हुई इबारतों का सहारा लेते। बेमायने शब्द व तराकीब इस्तेमाल करके यह बताना चाहते कि उनको इल्म व माअरफ़त में बड़ी गहरी पकड़ है। क्योंकि हमारे यहाँ आमतौर पर उस आलमेदीन को जो अपनी बात खोल कर बयान करे और जिसकी बात समझ में न आए उसे उच्च कोटि का विद्वान माना जाता है।

उनका एक मुरीद लिखता है- आला हज़रत की बात समझने के लिए ज़रूरी है कि इन्सान इल्म का समुन्द्र हो। (अनवारे रज़ा-286)

उनकी ज़बान में अदबी चाश्नी व रवानी नहीं थी इसी लिए वे तक़रीर करने से बचते थे केवल ईद मीलादुन्नबी या अपने पीर आले रसूल शाह के उर्स के अवसर पर कुछ बातें कह देते हैं। (हयात आला हज़रत)

●

आला हज़रत की किताबें

इनकी किताबों के बयान से पहले हम इस बात की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित कराना ज़रूरी समझते हैं कि बरेलवियों को बढ़ा चढ़ा कर बात करने या कहने की बड़ी आदत है ऐसा करते समय ग़लत बयानी से काम लेना उनके स्वभाव में दाख़िल है किताबों के सिलसिले में भी उन्होंने हम से बढ़कर काम लिया है और तथ्यों से आँखे मुंदते हुए उनकी सैकड़ों किताबें गिनवा दी हैं जबकि मामला इसके विपरीत है।

इनके भिन्न कथनों का नमूना इस प्रकार है-

इनके एक रावी कहते हैं- आला हज़रत की किताबों की संख्या दो सौ के लगभग थी। ''एक रिवायत है तीन सौ पचास के लगभग थी। एक रिवायत में चार सौ बतायी गयी। एक और साहब कहते हैं पाँच सौ से भी अधिक थी। कुछ का कहना है कि छः सौ से अधिक थी।

(मुक़दमतुद्दौलतुल मक्किया, अल जमलुल मुअदद लितालीफ़ातिल मुजदद)

एक साहब इन सबसे आगे बढ़ गए और कहा कि एक हज़ार से भी अधिक थी (मन हुवा अहमद)

यद्यपि स्थिति यह है कि इनकी किताबों की संख्या जिसपर किताब का

इतलाक़ होता है दस से अधिक नहीं हैं शायद यह भी आतिशयोक्ति हो। जनाब बरेलवी साहब ने मुस्तकि़ल कोई किताब नहीं लिखी। वे फ़तवा लिखते और अपने विरोधियों के खि़लाफ़ काफि़र का आरोप लगाने में व्यस्त थे। लोग उनसे सवाल करते और वे अपने विभिन्न सहायकों की मदद से उनके जवाब तैयार करते और उनको किताब व रिसालों का रूप देकर छपवा देते।

कभी कभी कुछ किताबें न मिलने के कारण सवालों को दूसरे शहरों में भेज दिया जाता ताकि वहाँ मौजूद किताबों से उनके जवाब को तैयार कराए जा सकें। जनाब बरेलवी इन फ़तवों को बिना जांच परख के छपवा देते इसी वजह से इनके अन्दर उलझाव, पेचीदगी रह जाती और पढ़ने वालों की समझ में न आते। जनाब बरेलवी विभिन्न लोगों के लिखे फ़तवों का कोई तारीख़ी नाम रखते अतएवं उसे उनकी ओर मन्सूब कर दिया जाता। जनाब बरेलवी का क़लम कुछ क़लम के जवाब में बड़ी तेज़गी से चलता था जिनमें तौहीद व सुन्नत का विरोध और असत्य दृष्टिकोण व अक़ीदे का प्रचार होता। कुछ ख़ास मतभेद वाले मसलों इल्मेग़ैब मसला, हाज़िर व नाज़िर, बशर व नूर, और तसर्रूफ़ात व करामात और इसी प्रकार के दूसरे ख़ुराफ़ाती मामलों के अलावा बाक़ी मसलों में जनाब बरेलवी का क़लम सरलता व सुन्दरता से महरूम नज़र आता है। यह कहना कि उनकी किताबें एक हज़ार से भी अधिक हैं अत्यन्त हास्यस्पद कथन है।

उनकी मशहूर लेखनी जिसे किताब कहा जा सकता है वह फ़तावा

रिज़विया है बाक़ी छोटे छोटे रिसाले हैं। फ़तावा रिज़विया की आठ जिल्दें हैं हर जिल्द विभिन्न फ़तवों पर आधारित छोटे छोटे रिसालों पर आधारित हैं। बरेलवी हज़रात ने अपने रहनुमा व संस्थापक की किताबों की संख्या बढ़ाने के लिए उसमें निम्न रिसालों को मुस्तकिल किताब स्पष्ट किया है। नमूने के तौर पर हम फ़तावा रिज़विया की पहली जिल्द में निम्न रिसालों को गिनाते हैं इसमें 31 रिसाले मौजूद हैं जिनको किताबें बताया गया है इनके नाम इस प्रकार हैं-

1. अलजवादुल हुलू
2. तनवीरूल क़िन्दील
3. आखिरी मसाइल
4. अलनमीकतुल अन्क़ी
5. रहसबुस्साअह
6. हब्रतुल हमीर
7. मसाइल-ए-आखिर
8. फ़सलुलबशर
9. बारिकुन्नूर
10. इरतिफाउलहजब
11. अत्रर्सुल मअदिल
12. अत्तलबतुल बदीअह
13. बरकातुल असमा
14. अ़ताउरून्नबी
15. अन्नूर वन्नूरिक़
16. समअन्नदर
17. हुसनुत्तआमुम
18. वाबुल अक़ाइद
19. क़वानीनुल उलेमा
20. अलजददुसईद
21. मुजल्ला अश शमअतह
22. तिवयानुल वुजू
23. अज्जफरूले क़वलुज़फ़र
24. अलमु आल्लमुत्तराज़
25. निब्तुल क़ौम
26. अजलिल आलाम
27. अल एहकाम वल एलल

कुछ सौ पृष्टों पर आधारित एक जिल्द में मौजूद 31 रिसालों को बरेलवी हज़रात ने अपने आला हज़रत की 31 किताबें बताया है। यह कि दुनिया के फ़लां व्यक्ति ने एक हज़ार दो हज़ार या इससे भी अधिक कतिाबें लिखी हैं आसान है मगर इसे साबित करना आसान नहीं। बरेलवी हज़रात भी इस उलझन का शिकार नज़र आते हैं। स्वयं आला हज़रत फ़रमा रहे हैं कि उनकी किताबों की संख्या दो सौ के लग गया है उनके एक बेटे कह रहे हैं कि चार सौ है। (अलमुजमलुल मुअदिद लेतालीफ़ात अलमुजददिद, अद्दौलतुल मक्किया)

उनके एक ख़लीफ़ा ज़फरूद्दीन बिहारी रिज़वी जब इन किताबों को गिनने बैठे तो 350 रिसालों से अधिक न गिनवा सके। एक और साहब ने 548 तक किताबें गिनीं। अब ज़रा यह लतीफ़ा भी सुन लीजिए कि उन्होंने किस तरह यह संख्या पूरी की है।

(अलमुजमिलुल मुअ़ददि, अनवारे रज़ा-325)

अनवारे रज़ा में उनकी जो किताबें लिखी हैं उनमें से कुछ यहाँ पेश की जाती हैं ताकि पढ़ने वालों पर अधिक किताबें लिखने के दावे का राज़ खुल सके।

1. हाशिया सही बुख़ारी
2. हाशिया सही मुस्लिम
3. हाशिया अन निसाई
4. हाशिया इब्ने माजा
5. हाशिया अत्तक़रीब
6. हाशिया मुसनद इमाम आज़म
7. हाशिया मुसनद इमाम अहमद
8. हाशिया मुसनद इमाम आज़म
9. हाशिया ख़साइसे कुबरा
10. हाशिया कन्जुल अम्माल

11. हाशिया किताबुल असमा वस्सिफ़ात

12. हाशिया अल असाबा

13. हाशिया मौज़ूआत कबीर

14. हाशिया श्म्स वाज़िग़ह

15. हाशिया उमदतुल क़ारी

16. हाशिया फ़तहुल बारी

17. हाशिया नसबुर्राया

18. हाशिया फ़ैज़ुल क़दीर

19. हाशिया अश्अतुल लम्आत

20. हाशिया मजम-अ बहारूल अनवार

21. हाशिया तहज़ीबुत्तहज़ीब

22. हाशिया मुसामरह व मसाबिरह

23. हाशिया तोहफ़तुल इख़्वान

24. हाशिया मिफ़ताहुस्सआदह

25. हाशिया कश्फुल ग़म्मा

26. हाशिया मीज़ानुश शरीआ

27. हाशिया अल हदाया

28. हाशिया बहरूर्राइक़

29. हाशिया मुनियतुल मुसल्ला

30. हाशिया रसाइले शामी

31. हाशिया अत्तहतावी

32. हाशिया फ़तावा ख़ानियह

33. हाशिया फ़तावा खैरियह

34. हाशिया फ़तावा अज़ीज़ियह

35. हाशिया शरहे शिफ़ा

36. हाशिया कश्फुज़ ज़न्नून

37. हाशिया ताजुल उरूस

38. हाशिया अद दरूल मकनून

39. हाशिया उसूलुल हीन्दसा

40. हाशिया तैसीर शरह जामिउस्सग़ीर

41. हाशिया सुनन तिर्मिज़ी

42. हाशिया किताबुल आसार

43. हाशिया सुनन दारमी

44. हाशिया अत्तग़ींब व तर्हीब

45. हाशिया नीलुल अव्तार

46. हाशिया तज़ाकिरतुल हुफ़्फ़ाज़

47. हाशिया इरशादुस्सारी

48. हाशिया मिरआतुल मफ़ातीह

49. हाशिया मीज़ानुल एतिदाल

50. हाशिया अल इलल लुल मुतनाहियह

51. हाशिया शरह फ़िक़ह अकबर
52. हाशिया किताबुल ख़िराज
53. हाशिया बदाइअुस्सनाइअ
54. हाशिया किताबुल अनवार
55. हाशिया फ़तावा आलमगीरी
56. हाशिया फ़तावा बज़ाज़िया
57. हाशिया शरह ज़रक़ानी
58. हाशिया मीज़ानुल अफ़कार
59. हाशिया शरह चिग़मीनी

अर्थात वे तमाम किताबें जो अहमद रज़ा साहब के पास थीं और उनके अध्ययन में रहतीं और उन्होंने इन किताबों के कुछ पृष्ठों पर तालीक़न कुछ लिख दिया तो उन किताबों का भी आला हज़रत की किताबें मान लिया गया है। इस प्रकार तो किसी व्यक्ति के बारे में कहा जा सकता है कि उसकी किताबें हज़ारों हैं।

मेरी लाइब्रेरी में 15 हज़ार से अधिक किताबें मौजूद हैं इनमें से हज़ारों किताबें मेरे अध्ययन में रह चुकी हैं स्वयं अल बरेलवियत के तैयार करने के लिए मैंने 300 से अधिक किताबों व रिसालों का अध्ययन किया है और लगभग हर किताब के हाशिए पर तालीक़ात भी लिखी हैं इस हिसाब से तो मेरी किताबें हज़ारों से भी अधिक हो जाती हैं।

यदि यही मामला हो तो इसमें गर्व की कौन सी बात है ? आख़िर में हम फिर इसी सिलसिले में बरेलवी हज़रात के कथनों को दोहराते हैं। स्वयं अहमद रज़ा साहब फ़रमाते हैं कि उनकी किताबों की संख्या 200 है। उनके एक ख़लीफ़ा का इर्शाद है 350 है बेटे का कहना है चार सौ है अनवारे रज़ा के लेखक कहते हैं 548 हैं। बिहारी साहब का कहना है 600 है एक और साहब कहते हैं कि एक हज़ार हैं। (अलमुजमिलुल मुअद्दिद,

अददौलतुल माक्किया, अनवारे रज़ा, हयाते आला हज़रत, मनहूवा अहमद रज़ा-25)

आला हज़रत की तमाम वे किताबें व रिसाले जो आज तक छपी हैं उनकी संख्या 125 से अधिक नहीं है (अनवारे रज़ा-325)

और ये वही हैं जिनके संग्रह का नाम फ़तावा रिज़विया है। यहाँ हम बरेलवी हज़रात की एक झूठी बात नक़ल करते हैं। मुफ़्ती बुरहानुल हक़ क़ादिरी कहते हैं-

"आला हज़रत के मुज़द्दिद होने की शहादत आपका फ़तावा का संग्रह है जो बड़े साइज़ की 12 जिल्दों में है और हर जिल्द में एक हज़ार पृष्ठों से अधिक हैं। (आला हज़रत बरेलवी-180)

इस बात को छोड़ते हुए कि इन फ़ताबा की इल्मी हैसियत व क़ीमत क्या है हम उनके झूठ का स्पष्टीकरण ज़रूरी समझते हैं। यह कहना कि इसकी 12 जिल्दें हैं सरासर ग़लत है उसकी केवल आठ जिल्दें हैं। बड़ी तक़तीअ (साइज़) की केवल एक जिल्द है। सारी जिल्दों के बारे में यह कहना कि वे बड़े साइज़ की हैं यह भी खुला हुआ झूठ है। इनमें से कोई भी एक हज़ार पृष्ठों पर आधारित नहीं है बड़े साइज़ वाली जिल्द के कुल पृष्ठ 264 हैं बाक़ी जिल्दों के पृष्ठों की संख्या पाँच सौ छः सौ से अधिक नहीं। बहरहाल एक हज़ार पृष्ठ किसी भी जिल्द के नहीं हैं।

हमने किताबों के विषयों का इतने विस्तार से इसलिए उल्लेख किया है ताकि मालूम हो सके कि बरेलवी लोग जनाब अहमद रज़ा ख़ां साहब की प्रशंसा में कितना बढ़ा चढ़ा कर काम लेते हैं। यह बात भी उल्लेखनीय

है कि फ़तवा लिखने में अहमद रज़ा साहब अकेले न थे बल्कि उनके अनेक सहायक भी थे। उनके पास फ़तवों की शक्ल में सवाल आते तो वे उनका जवाब अपने सहायकों के ज़िम्में कर देते, जनाब बरेलवी अपने सहायकों को दूसरे शहरों में भी भेजते।

(हयात आला हज़रत-244)

ज़फ़रूद्दीन बिहारी ने अपने आला हज़रत का एक ख़त भी अपनी किताब में नक़ल किया है जो इस विषय को समझने में काफ़ी हद तक सहायक साबित हो सकता है। जनाब अहमद रज़ा साहब अपने किसी एक साथी को संबोधित करके लिखते हैं-

तफ़सीर रूहुल मआ़नी कौन सी किताब है और यह आलूसी बग़दादी कौन हैं ? यदि इनके हालाते ज़िन्दगी आप के पास हों तो मुझे लिख भेजें और मुझे अल मदारिक की कुछ इबारतों की भी ज़रूरत है।

(हयात आला हज़रत-266)

किसी और मसले का उल्लेख करके एक और ख़त में लिखते हैं-

"मुझे निम्न किताबों की फ़लां मसले के बारे में पूरी इबारतों की ज़रूरत है यदि आपके पास हो तो बहुत अच्छा वर्ना पटना जाकर इन किताबों में से इबारतें नक़ल करके भिजवा दें।

1. तातार ख़नियह	2. ज़ादुलमआद
3. अक़्दुल फ़रीद	4. नुज़हतुल मजालिस
5. ताजुल उरूस	6. क़ामूस
7. ख़ालिक़ ज़मख़शरी	8. मग़रिब मतरज़ी

9. निहाया इब्नुल असीर
10. मजमउल बहार
11. फ़तहुल बारी
12. उमदतुल क़ारी
13. इर्शादुस्सारी
14. शरह मुस्लिम नौवी
15. शरह शिमाइल तिर्मिज़ी
16. अस्सिराजुल मुनीर
17. शरह जामिउस सग़ीर

बहरहाल पिछले सारे नुसूस से साबित होता है कि जनाब अहमद रज़ा अकेले फ़तवे नहीं दिया करते थे बल्कि उनके बहुत से सहायक भी थे जो विभिन्न सवालों का जवाब देते और उनके आला हज़रत उनको अपने नाम के साथ जोड़ लेते।

जिहाद का विरोध और साम्राज की हिमायत

जनाब बरेलवी का दौर अंग्रेज़ी साम्राज का दौर था मुसलमान आज़माइश का शिकार थे उनकी हुकूमत ख़त्म हो चुकी थी अंग्रेज़ मुसलमानों के वजूद को ख़त्म कर देना चाहते थे। उलमा को फ़ाँसी पर लटकाया जा रहा था आम मुसलमान अत्याचार का निशाना बन रहे थे उनकी सम्पत्ति ज़ब्त की जा रही थी। काला पानी और दूसरी सख़्त जेलों में विभिन्न सज़ाएं दी जा रही थीं। उनका मान सम्मान शान व शौकत रोब व दबदबा ख़त्म हो चुका था। अंग्रेज़ मुस्लिम समुदाय के वजूद को हिन्द व पाक से पूरी तरह मिटा देना चाहते थे। उस दौर में यदि कोई गिरोह उनके विरूद्ध आवाज़ उठा रहा था और पूरे साहस व बहादुरी के साथ जिहाद की भावना से ओत प्रोत होकर उनका मुक़ाबला कर रहा था तो वह वहाबियों का गिरोह था। (वहाबी का शब्द सबसे पहले अहले हदीस वालों के लिए अंग्रेज़ों ने इस्तिमाल किया ताकि

जिहाद का विरोध और साम्राज की हिमायत

जनाब बरेलवी का दौर अंग्रेज़ी साम्राज का दौर था मुसलमान आज़माइश का शिकार थे उनकी हुकूमत ख़त्म हो चुकी थी अंग्रेज़ मुसलमानों के वजूद को ख़त्म कर देना चाहते थे। उलमा को फ़ाँसी पर लटकाया जा रहा था आम मुसलमान अत्याचार का निशाना बन रहे थे उनकी सम्पत्ति ज़ब्त की जा रही थी। काला पानी और दूसरी सख़्त जेलों में विभिन्न सज़ाएं दी जा रही थीं। उनका मान सम्मान शान व शौकत रोब व दबदबा ख़त्म हो चुका था। अंग्रेज़ मुस्लिम समुदाय के वजूद को हिन्द व पाक से पूरी तरह मिटा देना चाहते थे। उस दौर में यदि कोई गिरोह उनके विरूद्ध आवाज़ उठा रहा था और पूरे साहस व बहादुरी के साथ जिहाद की भावना से ओत प्रोत होकर उनका मुक़ाबला कर रहा था तो वह वहाबियों का गिरोह था। (वहाबी का शब्द सबसे पहले अहले हदीस वालों के लिए अंग्रेज़ों ने इस्तिमाल किया ताकि

रसाइले चान्दपुरी)

मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी की गतिविधियां तो किसी से छिपी नहीं मगर जहाँ तक अहमद रज़ा खां का संबन्ध है तो उनका मामला थोड़ा वज़ाहत का मोहताज है जनाब अहमद रज़ा बरेलवी ने साम्राज्य के विरोधियों वहाबी लोगों को लान तान का निशाना बनाया। उन वहाबियों को जो कि अंग्रेज़ के ख़िलाफ़ लड़ रहे थे और उनके ख़िलाफ़ जिहाद में व्यस्त थे अंग्रेज़ की ओर से उनकी आबादी पर बिल्डोज़र चलाए गए। (तज़किरा सादिक़)

केवल बंगाल में एक लाख वहाबी उलमा व आम लोगों को फांसी दी गयी। अंग्रेज़ लेखक हन्टर ने हक़ीक़त का एतिराफ़ करते हुए अपनी किताब (इन्डियन मुस्लिम) में कहा है- "हमें अपनी सत्ता के सिलसिले में मुसलमान क़ौम के किसी गिरोह से ख़तरा नहीं। यदि ख़तरा है तो केवल मुसलमानों के एक अल्पसंख्यक गिरोह वहाबियों से है क्योंकि केवल वही हमारे विरूद्ध संघर्ष कर रहे हैं।" (पृष्ठ-32)

स्वतंत्रता संग्राम 1857 के बाद वहाबियों के तमाम रहनुमाओं को फांसी की सज़ा दी गयी। 1863 से लेकर 1865 तक का समय उनके लिए अत्यन्त मुश्किल था। इस अवधि में अंग्रेज़ों की ओर से उनपर जो अत्याचार तोड़े गए हिन्दुस्तान का इतिहास इसका गवाह है। वहाबी उलमा में से जिनको क़ैद की सज़ा मिली उनमें मौलाना जाफ़र थानेसरी, मौलाना अब्दुर्रहीम, मौलाना अब्दुल ग़फ़ूफ़ार, मौलाना यहया अली सादिक़पुरी, मौलाना अहमदुल्लाह और शेखुल कुल मौलाना नज़ीर हुसैन

मुहद्दिस देहलवी रहिम० शामिल हैं। वहाबी मुजाहिदों की जाइदादें ज़ब्त करने का आदेश पारित कर दिया गया (तज़किरा सादिक़) वहाबियों के मकानों को तबाह कर दिया गया और उनके ख़ानदान की क़ब्रों तक को उखेड़ दिया गया। (वहाबी तहरीक-292)

उनके मकानों पर बिल्डोज़र चलाए गए। वहाबी उलमा को गिरफ़तार करके उनको विभिन्न सज़ाएं दी गयीं। इस बारे में शेखुलकुल सय्यद नज़ीर हुसैन मुहददिस देहलवी रहिम० की गिरफ़तारी की घटना बड़ी मशहूर है। (वहाबी तहरीक-315)

उन वहाबियों के विरूद्ध ज़बान इस्तेमाल करने के लिए और लड़ाओ और हुकुमत करो की मशहूर अंग्रेज़ निति को सफ़ल करने के लिए अंग्रेज़ साम्राज्य ने जनाब अहमद रज़ा ख़ां को इस्तेमाल किया ताकि वे मुसलमानों में फूट व लड़ाई का बीज बोकर उनकी एकता को हमेशा के लिए टुकड़े टुकड़े कर दें। ठीक उस समय जब अंग्रेज़ों के विरोधी उनकी सरकार से लड़ रहें थे और जिहाद कर रहे थे अहमद रज़ा ख़ां साहब ने तमाम मुस्लिम रहनुमाओं का नाम लेकर उनको काफ़िर कहा जिन्होंने आज़ादी की तहरीक के किसी भी अवसर पर भाग लिया था। (ब्रेलवी और मुसलमानों की तक्फ़ीर)

वे जमाअतें जिन्हों ने आज़ादी के आन्दोलन में भाग लिया था उनमें वहाबी तहरीक के अलावा जमीअतुल उलमा-ए-हिन्द, मज्लिसे अहरार तहरीके ख़िलाफ़त, मुस्लिम लीग, नीली पोश मुसलमानों में से और आज़ाद हिन्द फ़ौज ख़ास हिन्दुओं में से और गांधी की कांग्रेस उल्लेखनीय है।

जनाब बरेलवी आज़ादी-ए-हिन्द की इन तमाम हतरीकों से न केवल अलग रहे बल्कि इन तमाम जमाअतों और उनके रहनुमाओं की तकफ़ीरकी उनके ख़िलाफ़ गाली गलौज में लगे रहे और उनमें शामिल होने को हराम क़रार दिया। जनाब अहमद रज़ा तो तहरीके ख़िलाफ़त के दौरान ही वफ़ात पा गए। इनके बाद उनके उत्रराधिकारीयों ने उनके मिशन को जारी रखा और वहाबियों के अलावा मुस्लिम लीग का कठोर विरोध किया और लीग के लीडरों को काफ़िर होने के फ़तवे जारी किए और इस तरह उन्होंने सीधे अंग्रेज़ों के हाथ मज़बूत किए।

जनाब अहमद रज़ा की सर परस्ती में बरेलवी रहनुमाओं ने मुसलमानों को इन तहरीकों से दूर रहने की नसीहत की और जिहाद का कड़ा विरोध किया। चूंकि शरअी तौर पर आज़ादी के लिए जिहाद का दारोमदार हिन्दुस्तान के दारूलहर्ब होने पर था। मिल्लते इस्लामिया हिन्दुस्तान को दारूलहर्ब क़रार दे चुके थे। अहमद रज़ा खां साहब ने इस आधार पर जिहाद को ध्वस्त करने के लिए यह फ़तवा दिया कि हिन्दुस्तान दारूस्सलाम है और इसके लिए 20 पृष्ठों की एक पुस्तिका "(एलामुल आलाम त्रिअन्न हिन्दुस्तान दारूस्सलाम" अर्थात रहनुमाओं को हिन्दुम्तान के दारूस्सलाम होने से परिचित करना, लिखी

जनाब अहमद रज़ा खां साहब ने इस पुस्तिका के शुरू में जिस बात पर बल दिया है वह यह है कि वहाबी काफ़िर व नास्तिक हैं उन को जिज़्या लेकर भी माफ़ करना जाइज़ नहीं। इसी तरह न इनको पनाह देना जाइज़ न इनसे निकाह करना जाइज़ न इनका ज़बीहा जाइज़ न इनकी जनाज़े की

नमाज़ जाइज़ न इनसे मेल जोल रखना जाइज़ न इनसे लेन देन जाइज़ बल्कि इनकी औरतों को गुलाम बनाया जाए और इनके साथ सामाजिक बहिष्कार किया जाए और अन्त में लिखते हैं-

"खुदा इनको तबाह बर्बाद करे वे कहाँ भटकते फिरते हैं।"

इस वाक्य के सुबूत के लिए अहमद रज़ा का लिखा हुआ रिसाला (एलामुल आलाम बिअन्न हिन्दुस्तान दारूस्सलाम-200)

यह रिसाला अहमद रज़ा की असलियत को बे नक़ाब करने के लिए काफ़ी है। इससे उनकी चाल बाज़ी और बुरे इरादे खुलकर सामने आ जाते हैं कि वे किस प्रकार मुजाहिदों का विरोध करके अंग्रेज़ साम्राज्य का समर्थन व पुष्टि कर रहे थे और मुसलमानों को आपस में लड़ाकर दीन के दुश्मनों का सहारा व सहायक बन चुके थे।

जिस समय सारी दुनिया ने मुसलमान तुर्की की ख़िलाफ़त के टुकड़े टुकड़े करने पर अंग्रेज़ों के विरूद्ध आवाज़ उठा रहे थे और मौलाना मुहम्मद अली जौहर और दूसरे रहनुमाओं की मार्ग दर्शन में ख़िलाफ़ते इस्लामिया की सुरक्षा व वजूद को बचाने के लिए अंग्रेज़ों से लड़ रहे थे ठीक उसी समय जनाब अहमद रज़ा अंग्रज़ों के हित में जाने वाली गतिविधिएं में व्यस्त थे।

नि:संदेह ख़िलाफ़त की तहरीक, अंग्रेज़ों को उनकी वादा ख़िलाफ़ी पर सज़ा देने के लिए बड़ी प्रभावशाली साबित हो रही थी। सारे मुसलमान एक झंडे तले जमा हो चुके थे उलमा व आम लोग इस तहरीक का समर्थन कर रहे थे स्वयं एक बरेलवी लेखक इस हक़ीक़त का एतिराफ़ करते हुए लिखता

है-

"1918 में विश्व युद्ध समाप्त हुआ जर्मनी और उसके साथियों तुर्की और आस्टरिया आदि को पराज्य हुई। तुर्की से हिन्द की आज़ादी के बारे में एक सन्धि तै पायी लेकिन अंग्रेज़ों ने वादा खि़लाफ़ी की जिस पर मुसलमानों को सख़्त धक्का लगा। अतएवं वे बिफर गए और उनके खि़लाफ़ हो गए। राजनैतिज्ञ इस चिन्ता में थे कि किसी तरकीब से अंग्रेज़ों को वायदा खि़लाफ़ी की सज़ा दी जाए अतएवं उन्होंने मुसलमानों को यह जताया कि इस्लामी खि़लाफ़त की सुरक्षा प्रथम कर्तव्य में से है बस फिर क्या था एक तूफ़ान खड़ा हो गया। (मुक़दमा दवामुलऐश-15)

और हक़ीक़त में खि़लाफ़त की तहरीक अंग्रेज़ों के खि़लाफ़ एक प्रभावी हथियार साबित हो रही थी। मुसलमान अंग्रज़ों के खि़लाफ़ एक हो चुके थे। क़रीब था कि यह तहरीक अंग्रेज़ी शासन के ख़ात्में का कारण बन जाती। इस बात का स्पष्टीकरण अहले हदीस आलिमे दीन इमामुल हिन्द मौलाना अबुल कलाम आज़ाद मरहूम ने भी फ़रमाया है।

मगर बरेलवी मसलक के इमाम व मुजद्दिद ने अंग्रेज़ों के खि़लाफ़ चलने वाली इस तहरीक के प्रभाव व नतीजों को भांपते हुए अंग्रेज़ों से दोस्ती का सबूत दिया और खि़लाफ़त की तहरीक को नुक़सान पहँचाने के लिए एक दूसरा रिसाला लिखा जिसमें उन्होंने स्पष्ट किया कि चूंकि खि़लाफ़ते शरअीया के लिए कुरैशी होना ज़रूरी है इसलिए हिन्दुस्तान के मुसलमानों के लिए तुर्की की हिमायत ज़रूरी नहीं क्योंकि वे कुरैशी नहीं हैं इस आधार पर उन्होंने अंग्रेज़ों के खि़लाफ़ चलायी जाने वाली इस तहरीक

का भरपूर विरोध किया और अंग्रेज़ी साम्राज्य को शक्ति शाली बनने में मददगार बने। अहमद रज़ा खां साहब खिलाफ़त तहरीक के मुस्लिम रहनुमाओं को आलोचना का निशाना बनाते हुए लिखते हैं-

तुर्की की हिमायत तो केवल धोखे की टट्टी है असल मक्सद यह है कि खिलाफ़त का नाम लो लोग नाराज़ हो कर भड़कें चन्दा खूब मिले और गंगा व जमुना की पवित्र धरती आज़ाद हों।

जनाब अहमद रज़ा ने तहरीके मवालात (समाजिक बहिष्कार) का भी विरोध किया क्योंकि उनको खतरा था कि यह तहरीक अंग्रेज़ के पतन का कारण बन सकती है। तहरीके मवालात का उद्देश्य यह था कि अंग्रेज़ों का पूरी तरह बहिष्कार किया जाए। उनको टैक्स आदि न दिए जाएं। न इस सरकार के विभागों में नौकरी कीजाए। मतलब यह कि इस सरकार का पूरी तरह बहिष्कार किया जाए ताकि वे मजबूर होकर हिन्दुस्तान से चले जाएं। इस उद्देश्य के लिए तमाम मुसलमानों ने 1920 में एक जगह संगठित होकर संघर्ष शुरू कर दिया जिस से अंग्रेज़ी हुकूमत के विरूद्ध एक फ़ित्ना खड़ा हो गया और वह डगमगाने लगी। इस आन्दोलन को गाँधी के अलावा जनाब अहमद रज़ा खां ने भी नुक़सान पहुँचाने की कोशिश की और एक पुस्तिका लिख कर इसका सख़्ती से विरोध किया और इस आन्दोलन के ज़िम्मेदार रहनुमाओं के खिलाफ़ कुफ़्र के फ़तवे देने शुरू कर दिए।

अतएवं वे इस उद्देश्य से लिखे गए रिसाले "अल हुज्जतुल मोतमना फ़ी

आयतुल मुमतहिना" में स्वयं यह मानते हैं-

"इस आन्दोलन का निशाना अंग्रेज़ से आज़ादी की प्राप्ति है।"

(पृष्ठ-155)

इस रिसाले में जिहाद का विरोध करते हुए इर्शाद फ़रमाते हैं- "हम हिन्द के मुसलमानों पर जिहाद फ़र्ज़ नहीं और जो इसकी फ़र्ज़ियत को मानता है वह मुसलमानों का विरोधी है और उनको नुक़सान पहुँचाना चाहता है। (पृष्ठ-208)

"हज़रत हुसैन रज़ि० के जिहाद से दलील देना जाइज़ नहीं क्योंकि उनपर जंग थोपी गयी थी और समय के शासक पर उस समय तक जिहाद फ़र्ज़ नहीं जब तक उसमें काफ़िरों के मुक़ाबले की ताक़त न हो अतएवं हम पर जिहाद कैसे फ़र्ज़ हो सकता है क्योंकि हम अंग्रेज़ का मुक़ाबला नहीं कर सकते।" (पृष्ठ-210)

मुसलमानों को जिहाद व अंग्रेज़ से टकराने से बचने की नसीहत करते हुए लिखते हैं-

"अल्लाह का इर्शाद है-ऐ ईमान वालो ! तुम अपने आपके ज़िम्मेदार हो किसी दूसरे का गुमराह होना तुम्हारे लिए नुक़सान देह नहीं हो सकता बशर्ते कि स्वयं सीधे रास्ते पर चलते रहो।" (पृष्ठ-206)

अर्थात हर मुसलमान व्यक्तिगत रूप से अपना सुधार करे। सामूहिक संघर्ष की कोई ज़रूरत नहीं है। और अपने रिसाले के अन्त में उन सारे रहनुमाओं पर कुफ़्र का फ़तवा लगाया है जो अंग्रेज़ी शासन के विरूद्ध और बहिष्कार के आन्दोलन के समर्थक थे।

(ख़ातिमतुलकिताब-211)

जनाब अहमद रज़ा ने जिहाद को ख़त्म करने का फ़तवा अपने रिसाले "दवामुलऐश" में भी दिया है। लिखते हैं-

"हिन्दुस्तान के मुसलमानों के ऊपर जिहाद व जंग लागू नहीं होती।" (पृष्ठ-46)

बहरहाल अहमद रज़ा के बारे में मशहूर हो गया था कि वे साम्राज्य के एजेन्ट हैं और हर उस आन्दोलन के विरोधी हैं जो अंग्रेज़ो के विरूद्ध चलाया जाता हो। बरेलवी हज़रात के एक अनुयायी लिखते हैं-

"मुसलमान अहमद रज़ा से बदज़न हो गए थे।" (दवामुलऐश-18)

एक और लेखक लिखते हैं- "ख़िलाफ़त के मसले से उनको मतभेद था। इन्तिक़ाल के निकट उनके विरूद्ध मुसलमानों में बड़ा चर्चा हो गया था और उनके मुरीद व अनुयायी ख़िलाफ़त से विरोध के कारण उनसे नाराज़ हो गए थे।" (किताबी दुनिया-2)

बहरहाल ठीक उस समय जब मुसलमानों को एक होकर अंग्रेज़ी शासन विरूद्ध सघंर्ष करना था जनाब अहमद रज़ा ख़ां साहब अंग्रेज़ों की भलाई के लिए काम करते थे। अगर यह न भी कहा जाए कि अहमद रज़ा ख़ां साहब अंग्रेज़ों के एजेन्ट थे तब भी यह बात दिन के उजाले की तरह साफ़ है कि उनकी तमाम गतिविधियां मुसलमानों के विरूद्ध और अंग्रेज़ के हित में थी क्योंकि उन्होंने मुजाहिदों का तो विरोध किया मगर अंग्रेज़ों के हामी व मददगार रहे।

मुश्तशिरक़ फ़्रांसिस राबंस ने अहमद रज़ा ख़ां साहब के बारे में लिखा

है-

"अहमद रज़ा बरेलवी अंग्रेज़ी सरकार के मददगार रहे उन्होंने प्रथम विश्व युद्ध में भी अंग्रेज़ों को समर्थन दिया। इस प्रकार ख़िलाफ़त आन्दोलन में भी 1921 में वे अंग्रेज़ों के मददगार रहे थे और उन्होंने बरेलवी में उन उलमा की कांफ़्रेंस भी बुलायी जो सामाजी बहिष्कार आन्दोलन के विरोधी थे।" (इन्डियन मुस्लिम-433)

ये थे जनाब अहमद रज़ा ख़ां साहब और उनकी गतिविधियां।

मृत्यु

जनाब अहमद रज़ा ख़ां बरेलवी की मौत ज़ातुल जुनुब की बीमारी से हुई। मरते समय उन्होंने कुछ वसीयतें कीं जो वसाया शरीफ़ के नाम से एक रिसाले में प्रकाशित हुईं। अहमद रज़ा ख़ां साहब ने मरते समय कहा-

"मेरा दीन व मज़हब जो मेरी किताबों से स्पष्ट है उसी पर मज़बूती से जमे रहना हर फ़र्ज़ से अहम फ़र्ज़ है।" और उन्होंने कहा-

"प्यारे भाइयो ! मुझे मालूम नहीं मैं कितने दिन तुम लोगों के साथ रहूं। तुम मुस्तफ़ा सल्ल० की सीधी सादी भोली भाली भेड़े हो। भेड़िए तुम्हारे चारों ओर हैं जो तुमको बहकाना चाहते हैं और फ़ित्ने में डालना चाहते हैं तुम्हें अपने साथ जहन्नम में ले जाना चाहते हैं। उनसे बचो और दूर भागो जैसे देवबन्दी आदि।"

(वसाया शरीफ़-10 आला हज़रत बरेलवी-105)

वसीयत के अन्त में कहा- यदि तबियत पर बोझ न हो तो फ़ातिहा में

हफ़्ते में दो तीन बार इन चीज़ों में से भी कुछ भेज दिया करो।"

1. दूध का बर्फ़ खाना साज़ यद्यपि भैंस के दूध का हो।
2. मुर्ग़े की बिरयानी।
3. मुर्गे का पुलाव।
4. चाहे बकरी का शामी कबाक।
5. पराठे और मलाई।
6. फ़ीरीनी।
7. उरद की फ़रेरी दाल अदरक व अन्य मसालों के साथ।
8. गोश्त भरी कचौरियां।
9. सेब का पानी।
10. अनार का पानी।
11. सोडे की बोतल।
12. दूध का बर्फ़।

यदि रोज़ एक चीज़ हो सके तो ऐसे कर दिया करो वर्ना जैसे उचित समझो। हाशिए में लिखा है- "दूध का बर्फ़ दोबारा फिर बताया।"

छोटे मौलाना ने कहा- "इसे तो हुज़ूर पहले लिखा चुके हैं।" फ़रमाया- "फिर लिखो इन्शाअल्लाह मुझे मेरा रब केवल बर्फ़ ही प्रदान करेगा।"

और ऐसा हुआ कि एक साहब दफ़न करते समय बिना ख़बर किए दूध का बर्फ़ खाना साज़ ले आए। (वसाया शरीफ़-108-109)

आला हज़रत की मृत्यु 25 सफ़र 1340 हिजरी सन 1921 ई० में 68 साल

की आयु में हुई। (वसतवी-111)

मालूम यह होता है कि जनाब बरेलवी के जनाज़ा में अधिक लोग न थे बहर हाल हम इस बारे में कोई पक्की बात नहीं कह सकते। क्योंकि बिना दलील के कोई हुक्म लगाना हम अपने उसूल के ख़िलाफ़ मानते हैं। फिर भी कहा व सुना यही जाता है कि आम लोगों ने उनकी जनाज़े को कोई ख़ास महत्व न दिया। इसलिए कि लोगों ने उनकी कड़वी कसीली ज़बान, बात बात पर कुफ़्र के फ़तवे और अंग्रेज़ों की हिमायत के कारण उनसे नाराज़ हो गए थे। इस बात को एक बरेलवी लेखक ने माना है कि मुसलमान अहमद रज़ा से नाराज़ हो गए थे। (मुक़दमा दवामुलऐश-18)

यही नहीं उनके मुरीद व अनुयायी भी ख़िलाफ़त से मतभेद के कारण उनसे नाराज़ हो गए थे।

वैसी भी बरेलवियत के अनुयायी चूंकि अपने इमाम व मुजददिद के बारे में बहुत अधिक ऊँची अक़ीदत के कारण बातें बढ़ा चढ़ा कर करने के आदि हैं यदि जनाज़े की हाज़िरी किसी आलिमे दीन के जनाज़े के बराबर भी होतीं तो उनकी किताबें इस सिलसिले में बड़ी बड़ी बातों से भरी होती जबकि उन्होंने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया अलबत्ता बरेलवी क़ौम हाज़िरी के अलावा उनके जनाज़े के बारे में दूसरी कुछ बातों के बढ़ाने से बाज़ न आसकी।

•

बढ़ा चढ़ा कर कहना

एक साहब लिखते हैं-"जब इमाम अहमद रज़ा का जनाज़ा उठाया गया तो कुछ लोगों ने देखा कि उसे फ़रिश्तों ने अपने कंधों पर उठा रखा है। (रूहों की दुनिया मुक़द्दमा-22 अनवसरे रज़ा-272)

बसतवी साहब फ़रमाते हैं कि इमाम अहमद रज़ा की वफ़ात के बाद एक अरब बुज़ुर्ग तशरीफ़ लाए। उन्होंने कहा- "25 सफ़र 1340 हिजरी को मेरा भाग्य जागा। ख़्वाब में नबी सल्ल० की ज़ियारत नसीब हुई देखा कि आप नबी सल्ल० मौजूद हैं और सहाबा किराम रज़ि० दरबार में मौजूद हैं लेकिन मज्लिस पर एक सन्नाटा छाया हुआ है। अन्दाज़े से मालूम होता है कि किसी का इन्तिज़ार है मैंने बारगाहे रिसालत में अर्ज़ किया- मेरे मां बाप आप पर कुरबान किस का इन्तिज़ार है ? फ़रमाया- अहमद रज़ा का इन्तिज़ार है। मैंने कहा अहमद रज़ा कौन हैं ? फ़रमाया हिन्दुस्तान में बरेली के रहने वाले हैं।

जागने के बाद मुझे मौलाना से मुलाक़ात करने की उतसुक्ता पैदा हुई। मैं हिन्दुस्तान आया और बरेली पहुँचा तो पता चला कि उनका इन्तिक़ाल हो गया है और वही 25 सफ़र उनकी मृत्यु की तारीख़ थी।

(बसतवी-131)

बारगहे रिसालत में बरेलवीयों ने अपने इमाम की लोकप्रियता को साबित करने के लिए जिन मन गढ़त घटनाओं और दावों का सहारा लिया है। उनमें से एक वसाया शरीफ़ में भी दर्ज है। उनके भतीजे हुसैन रज़ा बयान करते है-

"ताजदारे मदीना नबी सल्ल० के कुरबान, मदीना तैयबा से सरकारी तोहफ़ा (ज़मज़म और मदीना का इत्र) ठीक गुस्ल के समय पर पहुँचा। विसाले महबूब (अर्थात नबी सल्ल०) के लिए वे (अर्थात अहमद रज़ा) आप की खुश्बुओं से बसे हुए सुधारे।" (वसाया शरीफ़)

अर्थात नबी करीम सल्ल० ने अहमद रज़ा को गुस्ल देने के लिए खा़स तौर पर ज़मज़म का पानी और इत्र किसी हाजी द्वारा भेजा ताकि अहमद रज़ा साहब नबी करीम सल्ल० से मुलाक़ात के समय मदीना मुनव्वरा की खुश्बू से सुगंधित हों।

जब बढ़ा चढ़ा कर बयान करने की बात आ ही गयी है तो उचित मालूम होता है कि कुछ बढ़ा चढ़ाकर पेश करने वाली घटनाएं यहाँ लिख दी जाएं।

सहाबा किराम रज़ि० की शान में गुस्ताख़ी पर आधारित किसी बरेलवी का कथन है-

"मैंने कुछ मशाइख़ को कहते सुना है कि इमाम अहमद रज़ा को देखकर सहाबा किराम की ज़ियारत का शौक़ कम हो गया।" मआज़ल्लाह

"आला हज़रत ज़मीन में अल्लाह तआला की हुज्जत थे।"

(अनवारे रज़ा–303)

अब स्पष्ट है कि अल्लाह की हुज्जत तो नबी की ज़ात ही होती है। बरेलवी समझाना यह चाहते हैं कि यदि जनाब ख़ां साहब की ज़ात को आलोचना का निशाना बनाया गया है उनकी बात को ठुकराया गया है और उनके आज्ञा पालन व अनुसरण से इन्कार किया गया है तो यह ख़ुदा की ओर से पेश की जाने वाली दलील व हुज्जत को ठुकराने के बराबर होगा। इन तमाम बढ़ा चढ़ाकर पेश करने वाले दावों से यह साबित होता है कि ख़ां साहब बरेलवी के अनुयायी उनकी ज़ात को मुक़द्दस क़रार देने के लिए एक दूसरे पर बाज़ी ले जाने की कोशिश में हैं।

हम पिछले पन्नों में यह बयान कर चुके हैं कि बरेलवी हज़रात अपने इमाम को ग़लतियों से पाक मासूम समझते हैं और वे शक यह इस्मत अम्बिया किराम की विशेषता है और अम्बिया किराम के अलावा किसी उम्मती को मासूम समझना ख़त्में नुबुवत का इन्कार करना है। अल्लाह तआला सबको हिदायत की तौफ़िक़ प्रदान करे और बुरे अक़ीदों से बचाए रखे। आमीन !

पिछले उल्टे सीधे दावों के अलावा कुफ़्र और बढ़ा चढ़ाकर बयान करने वाली बातों का उल्लेख करके हम इस बहस को ख़त्म करते हैं। कहा जाता है कि साढ़े तीन साल की उम्र में जनाब अहमद रज़ा एक बाज़ार से गुज़र रहे थे उन्होंने केवल एक बड़ा सा कुर्ता पहन रखा था। सामने से तवाइफें आ रही थीं तो उन्होंने अपना कुर्ता उठाया और दामन से आखें छिपा ली तवायफ़ों ने कहा– "वाह मुन्ने मियां आँखें तो छिपा

लीं मगर सतर नंगा कर दिया।" तो साढ़े तीन साल की उम्र के अहमद रज़ा ने जवाब दिया- "जब नज़र बहकती है तो दिल बहकता है और जब दिल बहकता है तो सतर बहकता है।"

(अनवारे रज़ा, स्वानेह आला हज़रत-110)

अब उनसे कौन पूछे कि साढ़े तीन साल की उम्र में खां साहब को कैसे पता चल गया कि आने वाली औरतें तवाइफ़ें हैं और फिर जिस बच्चे ने अभी अपना सतर ढांपना शुरू न किया हो उसे नज़र और दिल के बहकने से सतर के बहकने का जिन्सी राज़ कैसे मालूम हो गया ? लेकिन झूठ बोलने के लिए अक़ल का होना तो ज़रूरी नहीं है।

बरेलवी हज़रात कहते हैं-

"इमाम अहमद रज़ा के इल्मी रोब से यूरोप के विज्ञानिक और एशया के दार्शनिक कांपते रहे।" (रूहों की दुनिया-26)

"आला हज़रत को खुदा की ओर से ख़ास हाफ़िज़े की ताक़त से साढ़े चौदह सौ बरस की तारीख़ ज़बानी याद थी। उनके उचपद को बयान करने के लिए शब्द कोष लिखने वाले शब्द तलाश करने से असमर्थ रहे हैं।" (अनवारे रज़ा-265)

"आला हज़रत जब हज के लिए तशरीफ़ ले गए तो उनको मस्जिदे ख़फ़ीफ़ में मग़फ़िरत की बशारत दी गयी।" (हयात आला हज़रत-12)

बरेलवी शाइर अय्यूब अली रिज़वी अपने क़सीदे में कहता है-

अन्धों को बीना कर दिया बहरों को शनवा कर दिया

दीने नबी ज़िन्दा किया या सय्यदी अहमद रज़ा

हमराज़े रूहानी व नफ़सानी उम्मत के लिए
दर है तेरा दारूश्शिफ़ा या सय्यदी अहम्मद रज़ा
या सय्यदी या मुरशदी या मालिकी या शाफ़ई
ऐ दस्तगीरे राहनुमा या सय्यदी अहमद रज़ा
जब जां कुनी का वक़्त हो और रहज़नी शैतां करे
हमले से उसके ले बचा या सय्यदी अहमद रज़ा
अहमद का साया ग़ौस पर और तुझ पर साया ग़ौस का
और हम पे है साया तेरा या सय्यदी अहमद रज़ा
अहमद पे हो रब की रज़ा अहमद की हो तुझ पर रज़ा
और हम पे हो तेरी रज़ा या सय्यदी अहमद रज़ा

बरेलवियों के एक और शायर लिखते हैं-

ख़ल्क़ के हाजत रवा अहमद रज़ा
है मेरा मुश्किल कुशा अहमद रज़ा
दोनों आलम में है तेरा आसरा
हां मदद फ़रमा शहा अहमद रज़ा
कौन देता है मुझको किसने दिया
जो दिया तुमने दिया अहमद रज़ा
हश्र में जब हो क़ियामत की तपिश
अपने दामन में छुपा अहमद रज़ा
जब ज़बानें सूख जाएं प्यास से
जाम कौसर का पिला अहमद रज़ा

क़ब्र व नश्रो व हश्र में तू साथ दे

हो मेरा मुश्किल कुशा अहमद रज़ा

तू है दाता और मैं मंगता तेरा

मैं तेरा हूं और तू मेरा अहमद रज़ा

(नफ़ख़तुरूह-47-48)

ये हैं जनाब बरेलवी और उनके अनुयायी और ये हैं उनकी फैलायी हुई शिक्षाएं। बढ़ा चढ़ा कर बात करने में इस क़ौम की कोई मिसाल नहीं। हर आने वाला जाने वाले को इस प्रकार की शि.र्कया ख़ुराफ़ात से श्रधांजिली पेश करता हुआ नज़र आता है। अल्लाह तआला इस क़ौम को सीधे रास्ते पर आने का सौभाग्य प्रदान करे।

स्वयं बरेलवी शेख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी रहम० की शान में बढ़ा चढ़ा कर फ़रमाते हैं-

करें अक़ताबे आलम काबा का तवाफ़

काबा करता है तवाफ़े दरे वाला तेरा

(हदाइक़े बख़्शिश-7)

स्वयं अपने बारे में इस प्रकार कहते हैं-

मुल्के सुख़न की शाही तुमको रज़ा मुसल्लम

जिस सिम्त आ गए हो सिक्के बिठा दिए हैं।

(अनवारे रज़ा-319)

"मेरा सीना एक सन्दूक़ है कि जिसके सामने किसी इल्म का भी सवाल पेश किया जाए तुरन्त जवाब मिल जाएगा।"

(मुक़द्दमा शरहुल हक़ूक़-8)

अहमद रज़ा साहब एक ओर तो अपने बारे में इतनी बढ़ा चढ़ा कर बात कर रहे हैं और दूसरी ओर अपने को इन्सानियत के दाइरे से ही बाहर करते हुए फ़रमाते हैं-

कोई क्यों पूछे तेरी बात रज़ा
तुझ से कुत्ते हज़ार फिरते हैं

(हदाइक़ बख़्शिश-43)

तुझ से दर दर से सग और सग से है मुझको निसबत
मेरी गर्दन में भी है दर्द का डोरा तेरा----

(हदाइक़ बख़्शिश-5)

एक बार ख़ां साहब बरेलवी के पीर साहब ने रखवाली के लिए अच्छी नस्ल के दो कुत्ते मंगवाए तो जनाब बरेलवी अपने दोनों बेटों को लिए अपने पीर साहब के पास हाज़िर हुए और कहने लगे- "मैं आपकी सेवा में दो अच्छे और उच्च श्रेणी के कुत्ते लेकर आया हूँ इनको कुबूल कर लीजिए।" (अनवारे रज़ा-238)

तो ये हैं जनाब अहमद रज़ा ख़ां बरेलवी साहब की शख़्सियत के दोनों पहलू। एक ओर तो वे इमाम, ग़ौस, कुतुब और क़ाज़ीयुल हाजात आदि उपाधियों से सुशोभित हैं और दूसरी ओर इन्सानियत से भी गिरे हुए और इन्सान की बजाए एक नापाक जानवर से स्वयं को समानता देने पर गर्व महसूस कर रहें हैं। अब अन्त में हम बरेलवी मज़हब के कुछ उलमा का उल्लेख करके इस अध्याय को समाप्त करते हैं। इनमें से एक हैं

नईमुद्दीन मुरादाबादी-

ये 1883 ई० में पैदा हुए थे जनाब बरेलवी के समकालीन में से थे इन्होंने भी जनाब बरेलवी की तरह तौहीद व सुन्नत का विरोध शिर्क व बिदअत की हिमायत और ग़ैर शरअी रस्म व रिवाज के प्रसार में अहम भूमिका अदा की है। उनका एक मदरसा भी था जिसका नाम शुरू में "मदर्सा अहले सुन्नह" था बाद में बदल कर "जामिआ नईमिया" रख दिया गया। इस मदरसे से फ़ारिग़ होने वाले नईमी कहलाते हैं।

इनकी किताबों में "ख़ज़ाइनुल इरफ़ान" जिसे जनाब अहमद रज़ा साहब के तर्जुमा कुरआन के साथ प्रकाशित किया गया। "अतयब बयान" जो शाह इसमाईल शहीद की किताब "तक़वीयतुल ईमान" के जवाब में लिखी गयी और "अल कलिमतुल अुलिया" उल्लेखनीय है-

इनकी वफ़ात 1948 ई० में हुई। बरेलवी हज़रात इन्हें "सदरूल फ़ाज़िल" की उपाधि से नवाज़ते हैं। बरेलवी उलमा में से अमजद अली भी हैं जो हिन्दुस्तान के आज़मगढ़ में पैदा हुए और मदरसा हनफ़िया जौनपुर में शिक्षा प्राप्त की। जनाब अमजद अली अहमद रज़ा के भी कुछ समय तक शागिर्द रहे और उनके मज़हब के प्रचार प्रसार में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया।

इनकी किताब "बहारे शरीअत" बरेलवी फ़िक़्ह की मुस्तनद किताब है जिसमें अहमद रज़ा साहब की शिक्षाओं की रोशनी में इस्लामी अहकाम व मसाइल की व्याख्या की गयी है। इनकी वफ़ात 1948 ई० में हुई।

(हाशियतुल इस्तिम्दाद-90-91)

इनके उलमा में से दीदार अली भी हैं जो नवाबपुर में 1270 हिजरी में पैदा हुए और अहमद अली सहारनपुरी से शिक्षा प्राप्त की और 1293 हिजरी में फ़ारिग़ होने के बाद मुसतक़िल तौर पर लाहौर में रहने लगे। इनके बारे में कहा जाता है कि- "मौलाना दीदार अली ने लाहौर शहर को वहाबियों और देवबन्दियों के ज़हरीले अक़ीदों से महफ़ूज़ रखा। इनकी वफ़ात 1935 ई० में हुई। (तज़किरह उलमाए सुन्नत)

इनकी किताबों में तफ़सीर मीज़ानुल अदयान और अलामाते वहाबिया उल्लेखनीय हैं।

इनमें हशमत अली भी हैं। ये लखनऊ में पैदा हुए। इनके पिता सैयद अैनुलक़ज़ा के मुरीदों में से थे। ये जनाब बरेलवी के मदरसे मनज़रे इस्लाम में पढ़ते रहे। इन्होंने अमजद अली साहब से भी शिक्षा प्राप्त की। 1340 हिजरी में फ़ारिग़ हुए इस तरह उन्होंने अहमद रज़ा साहब के बेटे से भी सनद ली और बाद में जनाब बरेलवी की शिक्षाओं को फैलाने में व्यस्त हो गए। अहमद रज़ा साहब के बेटे ने इनको ग़ैज़ुल मुनाफ़िक़ीन की उपाधि से नवाज़ा। 1380 हिजरी में कैन्सर का शिकार हुए और पीली भीत में वफ़ान पायी। (तज़किरतुउलमाए सुन्नत)

इनके रहनुमाओं में से अहमद यार नईमी भी हैं। ये बदायूं में 1906 ई० में पैदा हुए। पहले देवबन्दियों के मदरसे अलमदरसतुल इस्लामिया में पढ़ते रहे। फिर ये नईमुद्दीन मुरादाबादी के यहाँ चले गए और उनसे शिक्षा पूर्ण की। विभिन्न शहरों में घूमने फिरने के बाद गुजरात में स्थायी तौर पर रहने लगे और वहाँ "जामिया ग़ौसिया" के नाम से एक मदरसा का शिलान्यास

रखा। इन्होंने अपनी मशहूर किताब "जाअल हक़" में जनाब बरेलवी के मज़हब की पुष्टि और किताब व सुन्नत का अनुसरण करने वालों के विरोध में काफ़ी ज़ोर लगाया है।

जनाब अहमद यार ने अहमद रज़ा साहब के तर्जुमा कुरआन पर "नूरूल इरफ़ान" के नाम से हाशिया भी लिखा है जिसमें बड़े ज़ोर दार शब्दों में कुरआन करीम की बहुत सी आयतों की तावील व कतर बौत से काम लिया गया है। इसी तरह उनकी एक किताब "रहमतुल इलाहि बिवसीलतिल औलिया" भी है। इनकी वफ़ात 1971 में हुई।

(तज़किरा अकाबिरे अहले सुन्नत 54-58)

ये थे बरेलवी मज़हब के बड़े बड़े उलमा जिन्होंने इस मज़हब के उसूल व क़ाइदे बनाए और जनाब बरेलवी के लगाए हुए पौधे को परवान चढ़ाया। अगले अध्याय में हम बरेलवियों के अक़ीदों का बयान करेंगे।

●

बरेलवी अक़ीदे

बरेलवियों के कुछ विशेष अक़ीदे हैं जो उनको हिन्द व पाक में मौजूद हनफ़ी फ़िरक़ों से ख़ास तौर से और दूसरे मुसलमान फ़िरक़ों से आमतौर से अलग करते हैं। इनके अधिकांश अक़ीदे शीआ लोगों से समानता रखते हैं। यह कहना बेजा न होगा कि बरेलवियत सुन्नियों से अधिक शीओं के निकट है अलबत्ता यह नहीं कहा जा सकता कौन किससे प्रभावित है। इनके अक़ीदों को बयान करने से पहले हम अपने पढ़ने वालों के लिए दो बातों की व्याख्या ज़रूरी समझते हैं-

1. वे ख़ास अक़ीदे जो बरेलवी लोगों के अपनाए हुए हैं और जिन का हिन्द पाक में प्रचार कर रहे हैं वे ठीक उन ख़ुराफ़ात व अनुसरण और अंधविश्वासों व मन गढ़त क़िस्से कहानियों पर आधारित हैं जो विभिन्न समय में विभिन्न ज़मानों के सूफ़ीयों कमज़ोर अक़ीदे रखने वालों तथा अंध विश्वासियों में प्रचलित थे जिनका इस्लामी शरीअत से कोई ताल्लुक़ नहीं है बल्कि वे यहूदी व ईसाइयों और कुफ़्फ़ार व मुश्रिकों द्वारा मुसलमानों में परिवर्तित हो गए थे।

इमाम व मुज्तहिदीन हर युग में इन ग़लत अक़ीदों के ख़िलाफ़ संघर्ष

करते रहे हैं। इस तरह इनमें कुछ अक़ीदे इस्लाम से पूर्व अज्ञानता के दौर से जुड़े चले आ रहे हैं जिनका खंडन कुरआन की आयतों व नबी सल्ल० के इर्शादों में मौजूद है। बड़े दुःख की बात है कि कुछ लोगों ने इन ग़ैर इस्लामी और अज्ञानता के समय के अक़ीदों को इस्लाम के उसूल और अस्ल अक़ीदा समझ लिया है यद्यपि अल्लाह तआला और नबी सल्ल० इनको असत्य क़रार दे चुके हैं जैसे ग़ैर अल्लाह से मदद व हाजत मांगना, अम्बिया व रसूलों के इन्सान होने से इन्कार, ग़ैब के इल्म का अक़ीदा और अल्लाह के अधिकारों में नबियों व औलिया उल्लाह को साझीदार समझना और दूसरे अक़ीदे जिनका हम आगे चल कर उल्लेख करेंगे।

कहने का मतलब यह है कि इन खुराफ़ात व क़िस्से कहानियों को उन्होंने अक़ीदे का नाम दे रखा है यद्यपि खुराफ़ात व बिद्अत, मुश्रिकाना रस्म व अंधा अनुकरण, जाहिलाना विचार व अक़ीदे जनाब अहमद रज़ा ख़ां बरेलवी से और उनके सहयोगियों से पहले भी मौजूद थे मगर उन्होंने इन सारी बातों को धार्मिक स्वरूप दे दिया और कुरआन व हदीस के मअनवी तहरीक और ज़ईफ़ व कमज़ोर रिवायतों की मदद से उनको दलीलों से सही साबित करने की कोशिश की।

दूसरी बात जिसकी हम यहाँ व्याख्या करना चाहते हैं वह यह है कि इस अध्याय में हम बरेलवियत के उन्हीं अक़ीदों का उल्लेख करेंगे जिनको स्वयं जनाब अहमद रज़ा ख़ां बरेलवी और उनके समकालीन और या फिर इस गिरोह की विश्वासनीय हास्तियों ने अपनी किताबों में बयान किया है। जहाँ तक उन लोगों का संबन्ध है जो इनमें विश्वासनीय व उच्च नहीं समझे

जाते थे वे या उनकी ज़ात विवादास्पद है तो बावजूद उनकी उन्होंने बड़ी संख्या में किताबें लिखी है हम उनकी कोई भी चीज़ यहाँ नक़ल नहीं करेंगे। ताकि हमारे उद्देश्य में किसी प्रकार की कम्ज़ोरी मौजूद न हो।

अल्लाह के अलावा से फ़रियाद करना

बरेलवी ऐसी बात कहते हैं कि जिसकी इस्लाम ने खंडन किया है। उनका अक़ीदा है-

अल्लाह ताआला के कुछ ऐसे बन्दे हैं कि अल्लाह तआला ने उनको लोगों की हाजत पूरी करने के लिए ख़ास फ़रमाया है कि लोग घबराए हुए उनके पास पहुँचकर हाजतें पूरी कराते हैं। अहमद रज़ा साहब लिखते हैं कि "औलिया से मदद मांगना और उनको पुकारना और उनके साथ वसीला करना शरअी व पसन्दीदा काम है जिसका इन्कार न करेगा मगर हठधर्म व न्याय का दुश्मन।" (हयातुल मवात)

मदद मांगने के लिए ज़रूरी नहीं कि केवल ज़िन्दा वलियों ही को पुकारा जाए बल्कि इन लोगों के निकट इस मसले में कोई फ़र्क़ नहीं कि नबी, वली व नेक मर्द चाहे ज़िन्दा हों या मुर्दा उसे मदद के लिए पुकारा जा सकता है क्योंकि वही सारे इख़्तियारात के मालिक काइनात की व्यवस्था चलाने वाले, और मुश्किल व परेशानियों से नजात देने वाले हैं।

अत: बरेलवी साहब कहते हैं कि हुजूर ही हर मुसीबत में काम आते हैं हुजूर ही बेहतर अता करने वाले हैं।

गिड़गिड़ा कर नम्रता के साथ हुजूर सल्ल० को पुकारे हुजूर सल्ल० ही हर बला से पनाह (सुरक्षित) है आगे लिखते हैं।

("अल अमनुलअली" बरेलवी पेज न०-10)

"जिब्रील अलेहि० जरूरत को पुरा करने वाले हैं और फिर हुजूर अक़दस सल्ल० को इच्छा की पुर्ति करने वाला, संकट दूर करने वाला, हर वला का टालने वाला, मानने से किस को हिचकिचाहट हो सकती है। वह तो जिब्रील अलैहि० की इच्छा की भी पूर्ति करने वाले हैं।

"जिब्रील अलैहि० ही नहीं बल्कि हज़रत अली रजि० अन्हो भी इन खुदाई विशेषताओं के हामिल (वाहक) है। जनाब बरेलवी शेरों से विवेचन करते हुए लिखते हैं।

नाद अलिया मज़हरूल अज़ाइब
तजदारे औनन लक फ़िन्नवाइब।।
कुल हमो मग से न जलो
बोला मटक या अली या अली।

तर्जुमान :- पुकार अली मुर्तिज़ा के कि मजहर अज़ाइब है तू उन्हें मददगार पायेगा। मुसीबतों में सब परेशानी व ग़म अब दूर हो जायेंगे। हुजूर की विलायत से या अली या अली।

(अल अमनुल अली पेज न०-13)

शेख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी रह० भी उन्हीं पिशेषताओं के साथ विशिष्ट (खास) है।

बरेलवी हजरात झूठ और फरेब (मिथ्याचारी) से काम लेते हुए आपकी रिवायत नक़ल करते हैं। "उन्होंने फरमाया"

"जो कोई रंज व ग़म में मुझ से मदद मांगेगा उसका रंज व ग़म दूर

होगा और जो मुश्किल के वक़्त मेरा नाम लेकर मुझे पुकारेगा। उसकी परेशानी दूर होगी और जो किसी जरूरत में अल्लाह की तरफ मुझे वसीला (द्वारा) बनाये उसकी वह हाजत (आवश्यकता) दूर होगी।"

(बरकातुल इस्तमदाद अज़ बरेलवी, दुर्रे रसाइले
रिज़विया जि०-2 पेज न०-181 फतावा अफ्रीका बरेलवी
पेज न०-64 हाशिया मतहक़ अज़ अहमद दार पेज-200)

और उनके नज़दीक क़ज़ाए हाजत (आवश्यकता की पूर्ति) के लिये नमाजे ग़ोसिया भी है जिसकी तरकीब यह है।

"हर रक्त में ग्यारह, ग्यारह बार सूरह इख्लास पढ़े, ग्यारह बार सलातो सलाम पढ़े फिर बग़दाद की तरफ़ "शिमाल की रतफ़" ग्यारह क़दम पर मेरा नाम ले कर अपनी हाजत ब्यान करे और यह अशआर पढ़े।

अई वे रुकनी ज़ीम व अनत जंखीरती
व अईजलय की दुनिया व अनत न सीरी

तर्जुमा :- क्या मुझे कोई तकलीफ़ पहुँच सकती है जबकि आप मेरे लिये बाड मे होसला (हिम्मत बढ़ाने वाला) हों मेरे मददगार हों।

जनाब बरेलवी अक्सा यह शेर पढ़ा करते थे।

या जिल्लाअ शेख़ अब्दुल क़ादिर
शया अल्लाह शेख़ अब्दुल क़ादिर
अतफन, अतफन अतूफ अब्दुल क़ादिर
असरफ़ अनाऊल सुरूफ अब्दुल क़ादिर

ऐ जिल्लेइला शेख़ अब्दुल क़ादिर
ऐ बन्दा पनाह शेख अब्दुल क़ादिर
मुह ताजो गदाइम तू जुउल ताजो करीम
शैअन्लाह शेख अब्दुल क़ादिर
अतफ़न, अतफ़न अतू अब्दुल क़ादिर
राइफ़ा राइफ़ा रऊफ़ अब्दुल क़ादिर
ए आकए बदस्त कस्ट तसरफ़ उमूर
असरफ़ अनाऊल सुरूफ़ अब्दुल क़ादिर
मैं मुहताज़ो गदा हूँ तू सख़ी व करीम है
अल्लाह के नाम पर कुछ अता कर दीजिय

ऐ शफ़क़त (दया) करने वाले अब्दुल क़ादिर मुझ पर शफ़क़त फ़रमाईये और मेरे साथ महरबानी का सुलूक (बर्ताव) कीजिये। तेरे हाथ में सभी अधिकार है मेरी मुसावते व परेशानियां दूर कीजिये।

(हदाइफ़ बख्शिश पेज न०-186)

इस तरह वह लिखते हैं। अहले दीन रा मुग़ीस अब्दुल क़ादिर

(हदाइफ़ बख्शिश पेज न०-181)

"जनाब बरेलवी रक़मतुराज़ है "मैंने जब भी मदद व इच्छा की ग़ौस ही कहा एक बार मैं एक दूसरे बुजुर्ग (वली) से मदद मांगनी चाही मगर मेरी जवान से उनका नाम ही न निकला बल्कि जबान से या गोस ही निकली।

(मलफ़ूज़ात पेज न०-307)

अर्थात अल्लाह तआला से कभी मदद न मांगी। या अल्लाह मदद फ़रमा, नहीं कहा बल्कि हमेशा या ग़ौस मदद फ़रमा कहते रहे। अहमद ज़रूक़ भी मुसीबतों को दूर करने वाले हैं अतएवं बरेलवी उलमा अपनी किताबों में उनसे अरबी अशआर नक़ल करते हैं-

अनुवाद :- मैं अपने मुरीद की परागदंगियों को जमा करने वाला हूं जबकि ज़माने की मुसीबतें उसे तकलीफ़ दें। यदि तू तंगी व मुसीबत में पुकारे ऐ ज़रूक़ मैं तुरन्त आऊँगा।" (फ़तावा रिज़विया-4)

इसी तरह इब्ने उलवान भी इन इख़्तियारात के मालिक हैं। अतएवं लिखा गया है- जिस किसी की कोई चीज़ गुम हो जाए और वह चाहे कि खुदा वह चीज़ वापस दिला दे तो किसी ऊँची जगह क़िब्ला की ओर मुंह करके खड़ा हो और सूरह फ़ातिहा पढ़कर उसका सवाब नबी सल्ल० को हदिया करे फिर सैयदी अहमद बिन उलवान को, और फिर यह दुआ पढ़े-ऐ मेरे आक़ा अहमद बिन उलवान यदि आपने मेरी चीज़ न दी तो मैं आपको औलिया के दफ़तर से निकाल दूंगा। (जाअल हक़-199)

सैयद मुहम्मद हनफ़ी भी मुश्किलात को दूर करने वाले हैं। जनाब बरेलवी लिखते हैं- "सैयदी मुहम्मद शममुद्दीन मुहम्मद हनफ़ी रज़ि० अपने हुजरा में वुज़ू कर रहे थे अचानक एक खड़ाऊं हवा पर फेंकी वह ग़ाइब हो गयी यद्यपि हुजरे में कोई रास्ता उसके हवा पर जाने का न था। दूसरी खड़ावं अपने सेवक को पेश की कि ये अपने पास रहने दे जब तक वह पहली वापस आए। एक लम्बे समय के बाद शाम देश से एक व्यक्ति वह खड़ांव हदियों के साथ लेकर आया और कहा कि अल्लाह आपको अज्र

प्रदान करे जब चोर मेरे सीने पर मुझे ज़ब्ह करने बैठा मैंने अपने दिल में कहा या सय्यदी मुहम्मद हनफ़ी उसी समय वह खड़ांव ग़ैब से आकर उसके सीने पर लगी कि चोर ग़श खाकर उल्टा हो गया।

(अन्वारूल इन्तिबाह फ़ी हल्लि निदा या रसूलल्लाह)

सैयद बदवी भी मुसीबतों व मुश्किलात में बन्दों की मदद करते हैं जब भी कोई मुसीबत पेश आए तो वह यह कहे-"या सैयदी अहमद बदवी मेरा साथ दीजिए।" (मसाइले रिज़वियह)

सैयद अहमद बदवी से नक़ल करते हैं कि उन्होंने कहा जिसे कोई हाजत हो तो वह मेरी क़ब्र पर हाज़िर होकर अपनी हाजत मांगे तो मैं उसकी हाजत को पूरा करूंगा। (मजमूआ रसाइले रिज़वियह)

अब मूसा इमरान भी- "जब उनका मुरीद जहाँ कहीं से भी इनको आवाज़ देता तो ये जवाब देते यद्यपि वह साल भर की राह पर होता या इससे भी अधिक।" (मजमूआ रसाइलेरिज़वियह-(182)

फिर जनाब बरेलवी अपने इस मसले में अपने अक़ीदे का स्पष्टीकरण करते हुए कहते हैं- "जो व्यक्ति किसी नबी या रसूल या किसी वली से जुड़ा होगा तो वह उसके पुकारने पर हाज़िर होगा और परेशानी व मुश्किलात में उसकी मदद करेगा।"

(मजमूआ रसाइले रिज़विया)

तसव्वुफ़ के सिलसिले से संबन्धित मशाइख़ भी अपने मुरीदों को मुश्किलात से रिहाई करने की ताक़त रखते हैं। जनाब अहमद रज़ा लिखते हैं सूफ़िया के मशाइख़ हौल व सख़्ती के समय अपने पीरों व

मुरीदों की रखवाली करते हैं। (अल अमन वलउला)

क़ब्र वालों से मदद का उल्लेख करते हुए जनाब बरेलवी लिखते हैं "जब तुम कामों में हैरान हो तो औलिया के मज़ारों से मदद मांगो।" (कश्फ़े फ़ुयूज़-39)

क़ब्रों के लाभों को बयान करते हुए अहमद रज़ा के एक अनुयायी कहते हैं क़ब्रों की ज़ियारत करने से लाभ प्राप्त होता है नेक लोगों से मदद मिलती है।" (कश्फ़े फ़ूयूज़-39) "ज़ियारत से उद्देश्य यह है कि क़ब्र वाले से लाभ हासिल किया जाए।" (कश्फ़े फ़ूयुज़-33)

जनाब मूसा काज़िम की क़ब्र के बारे में फ़रमाते हैं- "हज़रत मूसा काज़िम की क़ब्र तिर्याक़े अकबर है।" (कश्फ़े फ़ूयुज़-57)

स्वयं जनाब अहमद रज़ा बरेलवी मुहम्मद बिन मज़ग़ल से नक़ल करते हुए कहते हैं कि वे कहा करते थे-"मैं उनसे हूं जो अपनी क़ब्रों में तसर्रूफ़ फ़रमाते हैं जिसे कोई हाजत हो तो मेरे पास मेरे चेहरे के सामने हाज़िर होकर मुहम्मद से अपनी हाजत कहे मैं वह पूरी कर दूंगा।" (अनवारूल इन्तिबाह-182)

सैयद बदवी से यही कथन नक़ल करने के बाद लिखते हैं उन्होंने कहा मुझ में और तुम में यह हाथ भर मिट्टी ही तो रूकावट है और जिस मर्द को इतनी मिट्टी अपने साथियों से पर्दे में कर दे तो वह मर्द किस बात का है।"

एक ओर तो बरेलवियों के ये अक़ीदे हैं और दूसरी ओर कुरआनी शिक्षायें और तालीमात हैं ज़रा उनसे मुक़ाबला कीजिए ताकि हक़ीक़त

खुल कर सामने आ सके कि कुरआन करीम के निकट अल्लाह की तौहीद की क्या धारणा है और उनके अक़ीदे क्या हैं ? अल्लाह का इर्शाद है-

इय्या-क नअबुदु व इय्या-क नस्तअ़ीन (सूरह फ़ातिहा) तुझी को हम बन्दगी करें और तुझ से ही मदद मांगें।"

और फिर अल्लाह मुश्रिकों की बात का इन्कार करते हुए और उनके काम पर उनको डांटते हुए फ़रमाते हैं-

कुलिद्उल्लज़ी-ना ज़अम्तुम मिन दूनिल्लाहि ला यम्लिकू-ना मिसक़ा-ल ज़र्र-तिन फ़िस्समावाति वला फ़िल आर्ज़ि वमा लहुम फ़ीहिमा मिन शिर्किन वमा लहू मिन्हुम मिन ज़हीर। (सूरह सबा-22)

"आप कहिए तुम उनको पुकारो तो जिनको तुम अल्लाह के सिवा खुदाई में शरीक समझ रहे हो। वे ज़रा सा भी इख़्तियार नहीं रखते न आसमानों में न ज़मीन में और न उनकी इन दोनों में साझेदारी है और न उनमें से कोई भी अल्लाह का मददगार है।"

और अल्लाह का फ़रमान है-

ज़ालिकुमुल्लाहु रब्बुकुम लहुल मुल्कु वल्लज़ी-न तद्ऊना मिन दूनिही मा यम्लिकू-न मिन क़ित्मीरिन इन तद्ऊहुन ला यस्मऊदुआअहुम

व लव समिऊ मस्तजाबू लकुम व यव्मल क़ियामति यक्फ़रू-न बिशिर्किकुम वला युनब्बिउन्का मिस्लु ख़बीर। (सूरह फ़ातिर-13-14)

"यही अल्लाह तुम्हारा रब है इसी की हुकूमत है और जिनको तुम इसके अलावा पुकारते हो वह खजूर की गुठली के छिलके के बराबर भी इख़्तियार नहीं रखते। यदि तुम उनको पुकारो तो वे तुम्हारी सुनेंगे भी नहीं और यदि सुन भी लें तो तुम्हारा कुछ न कर सकें और क़ियामत के दिन वे तुम्हारे शिर्क करने ही से इन्कार करेंगे और तुझको खुदाए ख़बीर का सा कोई न बताएगा।"

और अल्लाह तआला ने उनके फ़साद और उनके राज़ों को खोलते हुए फ़रमाया-

कुल अ-र-अय्तुम शु-र-का अकुमुल्लज़ी-न तद्ऊना मिन दुनिल्लाहि अरूनी मा ज़ा ख़-ल-कू मिनल अर्ज़ि अम लहुम शिर्कुन फ़िस्समावाति अम आतय्नाहुम किताबन फ़हुम अला बय्यनतिन मिन्हु वल इंय्य इदुज़्ज़ालिमू-न बअ-ज़ुहुम बअ-ज़न इल्ला गुरूरा। (सूरह फ़ातिर-40)

"आप कह दीजिए तुमने अपने खुदाई शरीकों के हाल पर भी नज़र की है जिन्हें तुम अल्लाह के सिवा पुकारते हो ज़रा मुझे भी तो बताओ कि उन्होंने ज़मीन का कौन सा अंश बनाया है या उनका आसमान में कुछ साझा है या हमने उनको किताब दी है कि ये उसी दलील पर क़ाइम हैं?

असल यह है कि ज़ालिम एक दूसरे से निरे धोखे "की बातों" का वादा करते आए हैं।

और अधिक ताकीद फ़रमाते हुए कहा-

वल्लज़ी-न तदऊना मिन दूनिही-ला यस्ततीऊ-न नस्र-कुम वला अन्फ़ुसुहुम यन्सुरून। (सूरह आराफ़-197)

" और जिनको तुम अल्लाह के सिवा पुकारते हो वह न तो तुम्हारी ही मदद कर सकते हैं और न अपनी ही मदद कर सकते हैं।"

और फ़रमाया-

वल्लज़ी-न यद्ऊ-न मिन दूनिही-ला यस्तजीबू-न लहुम बिशैइन।

(सूरह रअ़द-14)

"और जिनको ये लोग उसके सिवा पुकारते हैं वे इनका जवाब इससे अधिक नहीं दे सकते।"

और आगे फ़रमाया-

वमा लकुम मिन दूनिल्लाहि मिंव वलिय्यिवं व ला नसीर।

(सूरह शूरा-31)

"और तुम्हारा अल्लाह के सिवा कोई भी न कारसाज़ है और न मददगार है।"

और अल्लाह ने अपने नबी सल्ल० से कहा कि वह मुश्रिकों और उन

लोगों से सवाल करें जो अल्लाह के सिवा से मदद मांगते हैं कि वे आपके सवाल पर जवाब दें।"

अ-फ़-र-अयतुम मा तद्‌ऊ-न मिन दूनिल्लाहि इन अराद-नियल्लाहु बिज़ुर्रिन हल हुन्ना काशिफ़ातु ज़ुर्रिहीअव अरा-द-नी बिरह्‌मतिन हल हुन्न मुम्सिकातु रह्‌मतिही० (सूरह ज़ुमर-38)

"कह ! भला यह तो बताओ कि अल्लाह के सिवा तुम जिनको पुकारते हो यदि अल्लाह मुझे कोई तकलीफ़ पहुंचाना चाहे तो क्या ये उसकी दी हुई तकलीफ़ को दूर कर सकते हैं या अल्लाह मुझ पर इनायत करना चाहे तो ये उसकी इनायत को रोक सकते हैं।"

अम्मय्युं जीबुल मुज़्तर्रा इज़ा दआहु व यक्शिफुस्सू-अ वयज अ लुकुम खु-ल-फ़ा अल अर्ज़ि अ-इलाहुन मअल्लाहि क़लीलम्मा तज़क्करून०।

(सूरह नमल-62)

"वह जो बे क़रार की फ़रियाद सुनता है जब वह उसे पुकारता है और मुसीबत को दूर करता है और तुम को ज़मीन में तसर्रूफ़ वाला बनाता है क्या अल्लाह के साथ कोई और भी खुदा है ? तुम लोग बहुत ही कम ग़ौर करते हो।"

फिर उनको समझाने का इरादा किया और फ़रमाया-

इन्नल्लज़ी-न तद्‌ऊन मिन दूनिल्लाहि अिबादुन अम्सालुकुम फ़द्ऊहुम फ़ल यस्तजीब लकुम इन कुन्तुम सादिक़ीन। (आराफ़-194)

"बेशक जिनको तुम अल्लाह को छोड़कर पुकारते हो वे तुम्हारे ही जैसे बन्दे हैं तो यदि तुम सच्चे हो तो तुम उनको पुकारो फिर उनको चाहिए कि तुम्हें जवाब दें।"

और आगे फ़रमाया-

कुल अफ़त्तख़ज़-तुम मिन दूनिही अव्लिया अ-ला यम्लिकू-न लिअन्फ़ुसिहिम नफ़अवं वला ज़र्रा॰ (रअ़द-16)

"कह दीजिए कि तो क्या तुमने "फिर भी" उसके सिवा और कारसाज़ क़रार दे लिए हैं जो अपनी ही ज़ात के लिए नफ़ा व नुक़सान का इख़्तियार नहीं रखते।"

और उनकी बात की तशनीअ करते हुए फ़रमाया-

इंय्यदऊ-न मिन दूनिही इल्ला इनासा वइंय्यदऊना इल्ला शैतानम मरीदा।" (सूरहनिसा-117)

"ये लोग अल्लाह को छोड़कर पुकारते भी हैं तो बस ज़नानी चीज़ों को और ये लोग पुकारते भी हैं तो बस शैतान सरकश को।"

फिर इनके ख़िलाफ़ फ़ैसला करते हुए अल्लाह ने फ़रमाया-

व मन अज़ल्लु मिम्मंय्यद्अू मिन दूनिल्लाहि मल्ला यस्तजी बु लहू इला यवमिल क़ियामति व हुम अन दुआइहिम ग़ाफ़िलून०

(सूरह अहक़ाफ़-5)

"और उससे बढ़कर गुमराह और कौन होगा जो अल्लाह के सिवा औरों को पुकारे जो क़ियामत तक भी उसकी बात न सुने बल्कि उन्हें उनके पुकारने की ख़बर तक न हो।"

इन आयतों से यह बात स्पष्ट रूप से सामने आ जाती है कि केवल अल्लाह तआला ही मुसीबत में बन्दों की मदद कर सकता है और उनके काम आ सकता है और उनके दुख को दूर कर सकता है। इख़्तियार व तसर्रूफ़ का काम केवल उसी की ज़ात तक सीमित है और सारी काइनात की व्यवस्था उसी के इख़्तियार व क़ब्ज़े में है और समस्त नबियों व रसूलों ने भी हाजतें पूरी कराने व मुश्किलें आसान कराने के लिए केवल उसी का दामन थामा और केवल उसी के सामने सर झुकाया। उनके बारे में यह अक़ीदा रखना कि परेशानियों व मुसीबतों में उनसे मदद व सहयोग जाइज़ है कुरआन की खुली व स्पष्ट आयतों से टकराना है।

हज़रत आदम अलैहि० का अल्लाह तआला से मग़फ़िरत तलब करना हज़रत नूह अलैहि० का अपने बेटे के लिए डूबने से बचाने के लिए उसी अल्लाह से मदद मांगना, हज़रत इब्राहीम अलैहि० का केवल उसी खुदा से बेटा मांगना, मुश्किलों व परेशानियों में घिरे हुए हज़रत मूसा

अलैहि० का केवल अपने रब को पुकारना, हज़रत यूनुस अलैहि० का मछली के पेट से छुटकारा पाने के लिए केवल अल्लाह तआला के सामने निवेदन करना, और हज़रत अय्यूब अलैहि० का केवल उसी अल्लाह से ठीक होने की दुआ करना।

ये सारी घटनाएं इस बात की स्पष्ट दलीलें हैं कि अल्लाह के सिवा कोई और मालिक व मुख़्तार नहीं है जो मुसीबतों को दूर कर सकता हो। लेकिन इन सारी दलीलों का विपरीत बरेलवी लोगों का अक़ीदा यह है कि जो किसी नबी या रसूल या वली से जुड़ा होता है वह मुसीबतों व मुश्किलों में उसी की दस्तगीरी करता है।

(फ़तावा अफ़्रीक़ा-135)

अहमद रज़ा के एक अनुयायी इस प्रकार लिखते हैं कि-

"औलिया-ए-किराम एक ही जगह रहकर तमाम आलम को हाथ की लकीरों की तरह देखते हैं और दूर व निकट की आवाज़ें सुनते या एक क्षण में सारी काइनात की सैर करते और सैकड़ों कोस (मिल) पर हाजत मन्दों की हाजतें पूरी करते हैं।" (जाअल हक़्-138-139)

एक ओर इन लोगों का यह अक़ीदा है और दूसरी ओर नबी सल्ल० अपने चचेरे भाई हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० से यह फ़रमा रहे हैं कि अपनी हाजत केवल खुदा से तलब कर, फ़रियाद केवल उसी से मांग, क़लम की सियाही खुश्क हो चुकी है सारी काइनात भी मिलकर तुझे न लाभ दे सकती है और न नुक़सान। (तिर्मिज़ी)

लेकिन जनाब बरेलवी कहते हैं-"जब तुम्हें किसी परेशानी का

सामना हो तो क़ब्र वालों से मदद मांगो।" (अल अम्न वलअुला-46)

फिर विडम्बना यह कि जनाब बरेलवी न केवल यह कि स्वयं कुरआनी आयतों का विरोध करते हैं बल्कि जो लोग शिर्क व बिदअत के ख़ौफ़नाक तुफ़ानों के ख़िलाफ़ सच्ची और मुजाहिदाना भावना रखते हैं और इन खुली आयतें पर अमल करते हुए यह अक़ीदा रखते हैं कि केवल इस काइनात का रब ही परेशानी व मुसीबत का शिकार लोगों की पुकार सुनता है और उसको स्वीकार करता है और केवल वही मुश्किलात को दूर करने वाला है बरेलवी के ये ख़ां साहब ऐसे लोगों के बारे में गालियों के साथ लानत भेजते हुए लिखते हैं-

"हमारे ज़माने में कुछ ऐसे पैदा हुए हैं कि औलिया से मदद मांगने के इन्कारी हैं और कहते हैं जो कुछ कहते और उनको इसका कुछ पता नहीं यों ही अपनी से अटकलें लड़ाते हैं।"

(रिसाला हयातुलमवात-दर्जफ़तावा रिज़विया-301-302)

तो देख लीजिए जनाब बरेलवी किस प्रकार उल्टी गंगा बहा रहे हैं कि जिसकी कोई तुक ही नहीं है इसी को कहते हैं उल्टा चोर कोतवाल को डांटे।

व इज़ा क़ी-ल-लहुमुत्तबिऊ मा अन्ज़लल्लाहु क़ालू बल नत्तबिऊमा अल्फ़य्ना अलैहि आबाअना अ-व लव काना आबाउहुम ला यअ-क़िलू-न शैअंव्ला यहतदून० (सूरह बक़रा-170)

"और जब उनसे कहा जाता है कि जो कुछ अल्लाह ने उतारा है

उसका अनुसरण करो तो कहते हैं कि नहीं, हम तो उसका अनुसरण करेंगे जिस पर हमने अपने बाप दादाओं को पाया है चाहे उनके बाप दादा न तो थोड़ी अक़्ल रखते हों और न हिदायत रखते हों।''

वइज़ा स-अ ल-क अिबादी अन्नी फ़इन्नी क़रीबु, उजीबु दअ-वतद दाअि इज़ा दआनि फ़ल्यस तजीबु लीवल् यूमिनू बीलअल्लहुम यर्शुदून॰

(सूरह बक़रा-186)

''और जब आप से ये मेरे बन्दे मेरे बारे में मालूम करें तो मैं तो करीब ही हूँ दुआ करने वाले की दुआ कुबूल करता हूँ जब वह मुझसे दुआ करता हैं तो (लोगों को) चाहिए कि मेरे अहकामों को मानें और मुझपर ईमान लाएं अजब नहीं कि हिदायत पा जाएं।''

वक़ा-ल रब्बुकुमुद अूनी अस्तजिब लकुम (सूरह ग़फिर)

''और तुम्हारे रब ने कहा है कि मुझे पुकारो मैं तुम्हारी विनती (दुआ) कुबूल करूंगा।''

है मुरीदों को तो हक़ बात गवारा लेकिन
शेख़ व मुल्ला को बुरी लगती है दर्वेश की बात

•

अम्बिया व औलिया के इख़्तियारात

इस्लाम के निकट तौहीद की धारणा यह है कि पूरी मख़्लूक़ की हाजतें पूरी करने व मुसीबतों व मुश्किलों को हल करने वाला केवल अल्लाह है। वही सारी काइनात का पैदा करने वाला स्वामी, रिज़क देने वाला व चलाने वाला हैं। सारी शक्तियां उसी के हाथ में है वह अकेला है सारी नेमतों का मालिक है इसलिए अपनी हाजतों के लिए केवल उसी की ओर पलटा जाए केवल उसी को पुकारा जाए और उसी के सामने विनती की जाए मगर बरेलवियत का अक़ीदा इसके विपरीत है। उनके निकट अल्लाह ने कुछ इख़्तियारात व तसर्रूफ़ात अपने नेक बन्दों को प्रदान कर दिए हैं जिनके कारण वे लोगों की हाजतें पूरी करते व मुश्किलें दूर करते हैं इसी लिए ये लोग उनको मुसीबतों के समय पुकारते, उनके

सामने अपना दामन फैलाते और उनके नाम की नज़्र व नियाज़ देते हैं।

इनके अक़ीदों के अनुसार अल्लाह ने सारे इख़्तियार और काइनात की पूरी व्यवस्था अपने निकटतम बन्दों के हवाले कर दी है और स्वयं अल्लाह ज़ात मुअत्तल व सस्पैन्ड होकर रह गयी है। अब मुश्किल व बुरे हालात में इन बन्दों से मांगा जाए। इन्हीं से मदद मांगी जाए, इन्हीं से इलाज के लिए विनती की जाए क्योंकि ये लोग अल्लाह के नाइब हैं जिसे चाहें प्रदान करें और जिसे चाहें महरूम रखें। जीवन व मृत्यु, जीविका व इलाज मतलब यह कि सारे खुदाई काम इनको मिल गये हैं।

इस सिलसिले में इनकी किताबों से वाकयों को लिखने से पूर्व यह बात जान लेनी चाहिए कि मक्का के मुश्रिकों के अक़ीदे भी ऐसे ही तो थे जिन को नबी सल्ल० से इश्क़ व मुहब्बत के तमाम दावों के बावजूद इन अक़ीदों को फिर से अपनाया। अब इस सिलसिले में अल्लाह तआला के इर्शादात सुनिए और फिर इनके अक़ीदों से बराबरी कीजिए-

अल्लाह का इर्शाद है-

ला इला-ह इल्ला हु-व युह-यी व युमीतु० (अन्कबूत-8)
"कोई खुदा उसके सिवा नहीं वह ज़िन्दा करता है वही मारता है।"

बियदिहिल मुल्कु व हुवा अला कुल्लि शैइन क़दीर (मुल्क-1)
"जिसके हाथ में (सारी) हुकूमत और वही हर चीज़ पर समर्थ है।"

बियदिही म-ल-कूतु कुल्लि शैइन व हु-व युजीरू वला युजारू अलैहि॰ (मोमिनून-88)

"जिसके हाथ में हर चीज़ का इख़्तियार है और वह पनाह देता है और कोई उसके मुक़ाबले में पनाह नहीं दे सकता।"

बि-यदिही म-ल-कूतु कुल्लि शैइन व इलैहि तुर्जअून॰ (यासीन-88)

"जिसके हाथ में हर चीज़ का इख़्तियार है और तुम सबको उसी की ओर लौट कर जाना है।"

इन्नल्लाह हुवर्रज़्ज़ाकु जुलकुव्वतिल मतीन॰ (ज़ारियात-58)

"अल्लाह तो स्वयं ही सबको रोज़ी पहुँचाने वाला है ताक़त वाला है शक्ति शाली है।"

मा मिन दाब्बतिन फ़िल अर्ज़ि इल्ला अलल्लाहि रिज़्कुहा॰

"और कोई जीव ज़मीन पर ऐसी नहीं कि अल्लाह के ज़िम्मे उसका रिज़्क़ न हो।"

व क-अय्यिम मिन दाब्बतिल्ला तहमिलु रिज़्क़हा अल्लाहु यर्ज़ुकुहा व इय्याकुम व हुवस्समीअुल अलीम॰ (अन्कबूत-6)

"और कितने ही जानवर हैं जो अपनी जीविका उठाकर नहीं रखते अल्लाह ही उनको रिज़्क़ देता है और तुमको भी और वही अच्छी तरह

सुनने वाला है और अच्छी तरह जानने वाला है।"

इन्ना रब्बी यबसुतुर्रिज़्क़ा लिमय्यंशाऊ व यक़दिरू० (सबा-36)

"मेरा रब अधिक रोज़ी देता है जिसे चाहता है और तंग कर देता है जिसके लिए चाहता है।"

अल्लाहुम्मा मालिकल मुल्कि तूतिल मुल्का मन तशाउ व तन्ज़िअुल मुल्का मिम्मन तशाउ व तुअ़िज़्ज़ुमन तशाउ व तुज़िल्लु मन्तशाउ बियदिकल ख़ैरू इन्न-क अला कुल्लि शैइन क़दीर० (आले इमरान-26)

ऐ सारे मुल्कों के मालिक तू जिसे चाहे हुकूमत दे दे और तू जिससे चाहे हुकूमत छीन ले। तू जिसे चाहे इज़्ज़त दे और तू जिसे चाहे ज़िल्लत दे, तेरे ही हाथ में भलाई है बे शक तू हर चीज़ पर कुदरत रखने वाला है।"

कुरआन पाक ने मानवता को तौहीद (एकेश्वरवाद) से परिचित कर के उसपर बहुत बड़ा उपकार किया है। नबी करीम सल्ल० ने अपने 13 साला मक्की दौर में इमी विचार धारा को लोगों के मन मस्तिष्क में बैठाने का प्रयास करते रहे। इस्लाम ने मानवता को बन्दों की दास्ता से निकालकर और गुलामी की ज़ंजीरों से जो खुदा व बन्दों के बीच बाधा बन गयी थी अपनी पवित्र शिक्षा द्वारा निकाल कर सीधे रास्ते पर लाकर अल्लाह के आगे झुका दिया। मगर बरेलवी हज़रात इन टूटी ज़ंजीरो के

टुक्ड़ों को इक्ट्ठा करके मानवता का मोहताज व भिखारी बन रहे हैं और बन्दों को बन्दों की दासता का पाठ दे रहे हैं।

व मा यस्तविल अअ-मा वल बसीर० (फ़ातिर-19)

"इन लोगों की बसीरत अन्धी हो चुकी है ये उन लोगों के बराबर नहीं हो सकते जो तौहीद के प्रकाश से सुशोभित हों।"

तौहीद (एकेश्वरवाद) की धारणा के बग़ैर इस्लामी समुदाय की एकता संभव नहीं है। तौहीद से अलग होकर दूसरे मुश्रिकाना दृष्टिकोणों की शिक्षा देना मुसलमानों के बीच मतभेद के बीज बोने के समान है।

अल्लाह का इर्शाद है-

कानन्नासु उम्मतंव्वाहि-दतन फ़बअ-सल्लाहुन्नबिय्यी-न मुबश्शिरी-न व मुन्ज़िरी-न व अन्ज़-ल म-अ-हुमुल किता-ब बिल हक़्क़ि लियह्कु-म बय्नन्नासि फ़ीमख़्त-ल-फ़ू फ़ीहि वमख़्त-ल-फ़ फ़ीहि इल्लल्लज़ी-न ऊतूहु मिम्बाअदि माजाअत हुमुल बय्यिनातु बग़्यम बय्नहुम फ़-ह-दल्लाहुल्लज़ी-न आमनू लिमख़्त-ल-फ़ू फ़ीहि मिनल हक़्क़ि बिइज़्निही वल्लाहु यह्दि मंय्यशाउ इला सिरातिम्मुस्तक़ीम० (बक़रा-213)

"लोग एक ही उम्मत पर थे फिर अल्लाह ने नबी भेजे। खुश ख़बरी देने (वाले) और डराने वाले और उनके साथ सत्य किताबें भेजीं कि वे लोगों के बीच उस बात में फ़ैसला करें जिसमें वे मदभेद रखते थे और

किसी ने इसमें मतभेद नहीं किया मगर उन्हीं ने जिनको वह मिली थी। उनकी ज़िद के कारण इसके बावजूद कि उनतक खुली निशानियां पहुँच चुकी थी। फिर अल्लाह ने अपने फ़ज़्ल से उनको जो ईमान वाले थे और अल्लाह जिसे चाहता है सीधी राह बता देता है।"

आज स्थिति यह है कि शिर्क, क़ब्र पूजन और बिदअत व खुराफ़ात का सैलाब है और मुसलमान इसमें बहे चले जा रहे हैं। शैतान ने उनके दिल व दिमाग़ को अपने बस में कर लिया है और वे उस की पैरवी को अपनी नजात का साधन समझ रहे हैं।

अल्लाह इनके बारे में इर्शाद फ़रमाता है-

कुल हल नुनब्बिउकुम ब्रिल अख़्सरी-न अअ़्-माला० अल्लज़ी-न ज़ल्ला सअ़्युहुम फ़िल हयातिद्दुन्या व यह्सबू-न अन्नहुम यहसिनू-न सुन्आ० (कहफ़-103-104)

"आप कह दीजिए कि हम तुम्हें उन लोगों (का पता) बताएं जो कर्म के लिहाज़ से बिल्कुल ही घाटे में हैं ? यह वे लोग हैं जिनकी (सारी) कोशिश दुनिया ही की ज़िन्दगी में (ख़र्च) लग कर रही और वे यही समझते रहे कि वे बड़े अच्छे काम कर रहे हैं।"

इसके बाद अल्लाह के इस कथन के साथ उनके बारे में बताया गया-

अअ़युनुहुम फ़ी गि़ताइन अनज़िकरी वकानूला यसततीअू-न समअन अ-फ़-हसिबल्लज़ीना क-फ़रू अंय्यत्तखि़ज़ू अिबादीमिन दूनी अवलियाअा इन्ना आतदना जहन्न-म लिलकाफ़िरीना नुज़ुला० (कहफ़-101-103)

"मेरी याद से पर्दा पड़ा हुआ था और वे सुन भी नहीं सकते थे क्या फिर भी काफ़िरों का विचार है कि मुझे छोड़ कर मेरे बन्दों को (अपना) कारसाज़ क़रार दे लें। बेशक हमने जहन्नम को काफ़िरों की मेहमानी के लिए तैयार कर रखा है।"

अब इस सिलसिले में बरेलवियों के कथन भी सामने रख लें। जनाब अहमद रज़ा बरेलवी नबी सल्ल० की शिक्षाओं से मुंह मोड़ते हुए और आपकी शान में सीमा से आगे बढ़ते हुए कहते हैं।

क़ादिरे कुल के नायब अकबर
किसका रंग दिखाते हैं ये
उनके हाथ में हर कुंजी है
मालिके कुल कहलाते हैं ये

अहमद रज़ा बरेलवी के बेटे अपने बाप के पद चिन्हों पर चलते हुए इन अशआर की व्याख्या में लिखते हैं-

जो नेमत मारे जगत में कहीं नहीं नज़र आती है वह मुहम्मद सल्ल० ही प्रदान करते हैं उनके ही हाथ में सारी कुंजियां हैं अल्लाह के ख़ज़ाने से कोई चीज़ नहीं निकलती मगर नबी सल्ल० के हाथों से नबी सल्ल० कोई बात चाहते हैं वही होती है इसके विरूद्ध नहीं होता। हुज़ूर सलल० की चाहत को जहान में कोई फेरने वाला नहीं है।

(अलइस्तिमदाद अला जियालुल इरतिदाद लिल बरेलवी-32-33)

जनाब बरेलवी के इस क़सीदे के कुछ और क़सीदे सुनिए-

डूबी नावें तैराते ये हैं	हिलती नीवें जामते ये हैं
जलती जानें बुझाते ये हैं	रोती आँखे हँसाते ये हैं
इसके नाइब उनके साहिब	हक़ से ख़ल्क़ मिलाते ये हैं
शाफ़ेअ नाफ़ेअ राफ़ेअ दाफ़ेअ	क्या क्या रहमत लाते ये हैं
दाफ़ेअ यानी हाफ़िज़ व हामी	दफ़अ बला फ़रमाते ये हैं
इनके नाम के सदक़े जिससे	जीते हम हैं जिलाते ये हैं
उसका हुक्म जहाँ में नाफ़िज़	क़ब्ज़ा-ए-कुल पे रखाते ये हैं

जनाब अहमद रज़ा के दोस्त दूसरी जगह कहते हैं-

1. कोई हुक्म लागू नहीं होता मगर हुज़ूर के दरबार से, कोई नेमत किसी को नहीं मिलती मगर हुज़ूर की सरकार से।

(अल अमन वलअुला-105)

अपने फ़तावा में लिखते हैं-

हर चीज़, हर नेमत, हर मुराद, हर दौलत दीन में, दुनिया में, आख़िरत में, पहले ही दिन से आज तक आज से अबदुल आबाद तक जिसे मिली या मिलनी है हुज़ूर सल्ल० के पाक हाथों से मिली और मिलती है।

(फ़तावा रिज़वीया-1-577)

बरेलवी फ़िरक़े के एक दूसरे रहनुमा लिखते हैं

"आक़ाए दो जहाँ सखी दाता हैं और हम उनके मोहताज हैं तो क्या

कारण है कि उनसे मदद न ली जाए।" (मवाइज़े नओमिया-27)

दूसरी जगह लिखते हैं-"ख़ालिके कुल ने आपको मालिक बना दिया, दोनों जहान आपके क़ब्ज़े व इख़्तियार में हैं। इस लिए हज़रत आदम अलैहि० ने अर्श पर हुज़ूर सल्ल० का पाक नाम लिखा देखा ताकि मालूम हो कि अर्श के मालिक आप हैं। (मवाइज़े नईमिया-41)

एक और जगह लिखते हैं-

"हुज़ूर सल्ल० मदीना मुनव्वरा में रहकर कण कण का जाइज़ा ले रहे हैं और हर जगह आपका आना जाना व तसर्रूफ़ भी है।"

(मवाइज़े नईमिया-32)

बरेलवियत के शासक जनाब अहमद रज़ा साहब बरेलवी कहते हैं "नबी सल्ल० ख़लीफ़ा आज़म और ज़मीन व आसमान में तसर्रूफ़ फ़रमाते हैं-" (फ़तावा रिज़विया-6-155)

जनाब अहमद रज़ा के एक अनुयायी अपने पीर के कथन नक़ल करते हैं-"कि नबी करीम सल्ल० ज़मीनों और लोगों के मालिक हैं और नबी सल्ल० के हाथ में सफ़लता व मदद की कुन्जियां हैं और उन्हीं के हाथ में जन्नत व जहन्नम की कुन्जियां हैं और वही हैं जो आख़िरत में सम्मान प्रदान करते हैं और हुज़ूर क़ियामत के दिन सब कुछ करने वाले व बा इख़्तियार होंगे और नबी सल्ल० मुसीबतों व तकलीफ़ों को दूर फ़रमाते हैं और वे अपनी उम्मत के रक्षक एवं मददगार हैं।" (अनवारे रज़ा-240)

बरेलवियत के एक और रहनुमा लिखते हैं-

"हुज़ूर सल्ल० अल्लाह के नाइब हैं सारी दुनिया हुज़ूर सल्ल० के

तहत दे दी गयी है जिसे जो चाहे दें जिससे जो चाहें वापस लें।"

(बहारे शीअत-1-15)

आगे लिखते हैं-

" सारी ज़मीन उनकी मिल्क है सारी जन्नत उनकी जागीर है सातों ज़मीन व आसमान आपके तहत जन्नत व जहन्नम की कुन्जियां आपके हाथों में दे दी गयी। रिज़्क खूराक और हर प्रकार की नेमतें हुज़ूर ही के दरबार से बांटी जाती हैं दुनिया व आख़िरत हुज़ूर की अता का एक भाग है।" (बहारे शरीअत-1-51)

बरेलवी समुदाय के मुफ़्ती अहमद यार गुजराती ,पने इस अक़ीदे को इस प्रकार पेश करते हैं- "दूसरा मामला हुज़ूर सल्ल० ही के हाथ में है जो चाहें जिसको चाहें दे दें।" (जाअल हक़-195)

केवल हुज़ूर अकरम सल्ल० ही मालिके कुल व अकेले मुख़्तार नहीं बल्कि दूसरे अम्बिया किराम भी इन खुदाई गुणों में शरीक हैं अतएवं इर्शाद होता है- अम्बिया किराम लोगों की अन्दुरूनी हालत व उनकी रूहों पर तसर्रूफ़ कर सकते हैं और उनको इतनी कुदरत व ताक़त है जिस से लोगों के ज़ाहिरी हालात पर तसर्रूफ़ कर सकते हैं।"

(जाअलहक़-195-196)

अम्बिया व रसूलों के अलावा सहाबा किराम भी जन्नत व जहन्नम के मालिक हैं-बरेलवियत के इमाम अहमद रज़ा साहब मौजूद रिवायत का सहारा लेते हुए फ़रमाते हैं-

"क़ियामत के दिन अल्लाह तआला सब अगले पिछलों को जमा

करेगा और नूर के दो मिम्बर लाकर अर्श के दाएं विछाए जाएंगे। इन पर दो व्यक्ति चढ़ेंगे। दाएं वाला पुकारेगा–ऐ लोगो ! जिसने मुझे पहचाना उसने पहचाना और जिसने न पहचाना तो मैं रिज़वान जन्नत का दारोग़ा हूँ मुझे अल्लाह ने हुक्म दिया है कि जन्नत की कुन्जियां मुहम्मद सल्ल० के हवाले कर दूं और मुहम्मद सल्ल० ने हुक्म दिया कि अबु बक्र व उमर को दूं कि वे अपने दोस्तों को जन्नत में दाख़िल करें। सुनते हो गवाह हो जाओ। फिर बाएं वाला पुकारेगा ऐ इन्सानों के गिरोह ! जिसने मुझे पहचाना उसने पहचाना और जिसने न पहचाना तो मैं जहन्नम का दारोग़ा हूं। मुझे अल्लाह ने हुक्म दिया है कि जहन्नम की कुन्जियां मुहम्मद सल्ल० के हवाले कर दूं और मुहम्मद सल्ल० ने हुकम दिया कि अबु बक्र व उमर को दूं कि वे अपने दुश्मनों को जहन्नम में दाख़िल करें।" सुनते हो गवाह हो जाओ

(अल अम्नवलअुला- 150)

फिर अपने शिआ होने का सबूत देते हुए और तक़य्या का नक़ाब उतारते हुए हज़रत अली रज़ि० के बारे में फ़रमाते हैं–

"हज़रत अली भी ऐसे गुणों वाले हैं कि वे अपने दोस्तों को जन्नत और दुश्मनों को जहन्नम में दाख़िल फ़रमाएंगे।'

(अल अम्नवल अुला-58)

जनाब अहमद रज़ा बरेलवी शेख़ अब्दुल क़ादिर की शान में सीमा को लांघते हुए मुश्रिकाना अक़ीदे की इस प्रकार व्याख्या करते हैं।

ज़ी तसर्रूफ़ भी है माज़ून भी मुख़्तार भी है
सारे आलम का मुदब्बिर भी है अब्दुल क़ादिर

(हदाइके़ बख़्शिश-28)

आगे इर्शाद होता है-

जलादे जलादे कुफ़्र व इलहाद
कि तू मोहयि है तू क़ातिल है या ग़ौस
खुदा से ले लड़ाई वह है मुअ्ती
नबी क़ासिम है तू मोसल है या ग़ौस

(हदाइके़ बख़्शिश-126)

आगे चल कर कहते हैं-

ऐ ज़िल्ले इलाह शेख़ अब्दुल क़ादिर
ऐ बन्दा पनाह शेख़ अब्दुल क़ादिर
मोहताज व गदाइम तू जुत्ताज व करीम
शैअन लिल्लाह शेख़ अब्दुल क़ादिर

(हदाइके़ बख़्शिश-182)

एक जगह इस तरह लिखते हैं-

"ऐ अब्दुल क़ादिर ऐ फ़ज़ल करने वाले, बिना मांगे देने वाले, ऐ इमाम व इकराम के मालिक तू श्रेष्ठ है हम पर एहसान फ़रमा और साइल की पुकार को सुन ले ऐ अब्दुल क़ादिर हमारी इच्छाओं को पूरा कर।" (हदाइके़ बख़्शिश-179)

अहमद रज़ा साहब दूसरी जगह लिखते हैं-

"अब्दुल क़ादिर ने अपना बिस्तर अर्श पर बिछा रखा है और अर्श को फ़र्श पर ले आते हैं।" (हदाइक़े बख़्शिश-184)

एक और जगह लिखते हैं-

"अहले दीन रा मुग़ीस अब्दुल क़ादिर" (हदाइक़े बख़्शिश-179)

आगे बढ़कर कहते हैं-

"अहद से अहमद और अहमद से तुझको कुन और सब कुन यकुन हासिल है या ग़ोस।" (हदाइक़े बख़्शिश-179)

बरेलवी अपने मुश्रिकाना अक़ीदों को साबित करने के लिए शेख़ जीलानी की ओर झूठ थोपते हुए लिखते हैं कि आप फ़रमाया करते थे-

"अल्लाह ने मुझे सारे क़बीलों का सरदार बनाया है मेरा हुक्म हर हाल में लागू व मौजूद है। ऐ मेरे मुरीद! दुश्मन से मत घबरा। मैं विरोधी को ख़त्म कर देने वाला हूँ आसमान व ज़मीन में मेरा डंका बजता है मैं बहुत ऊँचे दर्जे पर पदासीन हूँ अल्लाह की सारी हुकूमत मेरे तसर्रूफ़ में है। मेरे तमाम समय हर प्रकार के दोषों व बुराइयों से पाक साफ़ हैं। पूरा जगत हर समय मेरी निगाह में है मैं जीलानी हूँ माहियुद्दीन मेरा नाम मेरे निशान पहाड़ियों की चोटी पर हैं।

(अज़्ज़म जमतुल क़-मरियह फ़िज़्ज़ब्रि अनिल ख़मरिया-35)

एक और शगूफ़ा सुनिए-

सारे ज़माने की डोर मेरे हवाले मेरे सुपुर्द हैं जिसे चाहूँ अता करूँ या मना करूँ।" (ख़ासिल एतिक़ाद-49)

जनाब बरेलवी शेख़ जीलानी की ओर झूठ थोपते हुए कहते हैं कि

उन्होंने फ़रमाया-"लोगों के दिल मेरे हाथ में हैं चाहे तो अपनी ओर आकर्षित कर लूँ और चाहूँ तो फेर दूँ।" (हिकायाते रिज़वियह-120)

अहमद रज़ा खां के एक अनुयायी का अक़ीदा देखिए-

लौहे महफ़ूज़ में तसबीत का हक़ है हासिल

मर्द औरत से बना देते हैं ग़ौसुल अग़वास

इस शेअर की व्याख्या भी बरेलवी हज़रात की ज़बानी सुनिए-

"शेख़ शहाबुद्दीन सहरवर्दी रज़ि० जो सिलसिला सहरवर्दीयों के इमाम हैं आपकी वालिदा हुज़ूर ग़ौसुस्सक़लैन रज़ि० के वालिद की सेवा में हाज़िर हुईं और अर्ज़ किया कि हुज़ूर दुआ फ़रमाएं। मेरे लड़का पैदा हो आपने लौहे महफ़ूज़ में देखा उसमें लड़की लिखी थी। आपने फ़रमा दिया कि तेरे भाग्य में लड़की है वह बीवी यह सुनकर वापस चली गयीं। रास्ते में हुज़ूर ग़ौसुस्सक़लैन आज़म रज़ि० मिले। आपके पूछने पर उन्होंने सारी बात बयान की। हुज़ूर सल्ल० ने इर्शाद फ़रमाया "जा तेरे लड़का होगा मगर बच्चा पैदा होने के समय लड़की पैदा हुई वह बीवी आपके पास उस बच्ची को लेकर आयीं और कहने लगीं। "हुज़ूर लड़का मांगू और लड़की मिली ? फ़रमाया यहाँ तो लाओ और कपड़ा हटाकर इर्शाद फ़रमाया 'देखो तो यह लड़का है या लड़की ? देखा तो वह लड़का था और वे यही शेख़ शहाबुद्दीन सहरवर्दी अलैहि रहमा थे। आपके हुलिया मुबारक में है कि आपकी छातियां औरतों की तरह थीं।" (बाग़े फ़िरदोस-27)

यही बरेलवी हज़रत एक और घटना नक़ल करते हैं जिसका सार यह है कि एक व्यक्ति की तक़दीर में मौत थी शैख़ जीलानी ने उसके भाग्य

को बदल कर निर्धारित समय पर मरने से बचा लिया।"

(बागे फ़िरदौस-27)

जनाब अहमद रज़ा बरेलवी अपनी किताब में नक़ल करते हैं-

"हमारे शेख़ सैयदना अब्दुल क़ादिर रज़ि० अपनी मज्लिस में ज़मीन से ऊँचे उठकर हवा में उड़ा करते और कहते-सूरज नहीं निकलता जब तक कि मुझे सलाम न करे। नया साल जब आता है मुझे सलाम करता है और ख़बर देता है जो कुछ उसमें होने वाला है। नया हफ़्ता जब आता है मुझे सलाम करता है और मुझे ख़बर देता है जो कुछ उसमें होने वाला है नया दिन जो आता है मुझे सलाम करता है और मुझे ख़बर देता है जो कुछ उसमें होने वाल है। (अल अमन वलअुला-101)

और ये इख़्तियारात शेख़ जीलानी तक ही सीमित नहीं है बल्कि दूसरे औलिया और मशाइख़ तसव्वुफ़ भी खुदा की खुदाई में भागीदार हैं वे उन सभी गुणों के मालिक हैं और वे वह ताक़त भी रखते हैं। अतएवं अहमद रज़ा बरेलवी के बेटे इर्शाद फ़रमाते हैं-

"बेशक सब पेश्वा, औलिया, उलमा अपने अनुयायियों की सिफ़ारिश करते हैं और जब उनके पाँव की रूह निकलती है जब मुन्किरनकीर उससे सवाल करते हैं जब उसका हिसाब होता है और उसका कर्म पत्र खुलता है जब उससे हिसाब लिया जाता है जब उसके अमल तुलते हैं जब वह पुलसिरात पर चलता है हर समय हर हाल में उसकी रखवाली करते हैं किसी भी क्षण उससे ग़ाफिल नहीं रहते और सारे इमाम व मुजतहिद अपने अनुयायियों की शफ़ाअत करते हैं और दुनिया, आख़िरत, बरज़ख़,

हर जगह सख़्तियों के समय देख भाल रखते हैं जब तक वे पुलसिरात से पार न हो जाएं। (अल इस्तिमदाद-35-38)

"आसमान से ज़मीन तक अबदाल की हुकूमत है और आरिफ़ की हुकूमत अर्श से फ़र्श तक।" (अल इस्तिमदाद-34)

स्वयं अहमद रज़ा फ़रमाते हैं-

औलिया की पहुँच से (ताल्लुक़ से) दुनिया की व्यवस्था स्थापित है।

(अल अम्न वल अुला-34)

औलिया किराम मुर्दे को जीवित कर सकते हैं। अंधे को व कोढ़ी को ठीक कर सकते हैं और सारी ज़मीन को एक क़दम में तै करने पर समर्थ हैं। (अल हिकायत-44)

ग़ौस हर ज़माने में होता है इसके बिना ज़मीन व आसमान स्थापित ही नहीं रह सकते।" (रसूलुल कलाम-129)

बरेलवी साहब के एक अनुयायी लिखते हैं-

"औलिया किराम अपने मुरीदों की मदद फ़रमाते और दुश्मनों को ख़त्म करते हैं। (रसूलुल कलाम-213)

इनके प्रसिद्ध मुफ़्ती अहमद यार गुजराती इस प्रकार क़लम का ज़ोर लगाते हैं-

"औलिया को अल्लाह से यह कुदरत मिली है कि छूटा हुआ तीर वापस कर लें। (जाअलहक़-197)

बरेलवियत के एक और रहनुमा लिखते हैं-"ज़ाहिर क़ज़ाए मुअल्लक़ तक अधिकांश औलिया की पहुँच हुई है।" (बहारेशरीअत-1-6)

एक दूसरे बरेलवी इर्शाद फ़रमाते हैं-

"औलिया का तसर्रूफ़ व इख़्तियार करने के बाद और अधिक हो जाता है। (फ़तावा नईमिया-249)

ये तो हैं ग़ैरूल्लाह के बारे में इनके अक़ीदे। इन्होंने अपनी दुआओं और तलबगारीयों में दूसरी हस्तियों को भी शरीक कर लिया और अल्लाह के गुणों और उसकें इख़्तियारात व तसर्रूफ़ात उसके बन्दों में विभाजित कर दिए हैं यद्यपि कारसाज़ियों और बे नियाज़ियों की कल्पना केवल अल्लाह तक ही सीमित है।

बरेलवियों ने अपने औलिया को वे तमाम इख़्तियारात प्रदान कर दिए जो ईसाइयों ने हज़रत ईसा अलैहि०, यहूदी हज़रत उज़ैर अलैहि० और मक्का के मुश्रिक लात, हबल और उज्ज़ा व मनात आदि में समझते थे।

यह मत समझए कि बरेलवियत के इमाम जनाब अहमद रज़ा ख़ां साहब का इन खुदाई इख़्तियारात में कोई भाग न था। वे भी दूसरे औलिया की तरह राज़िक़, दाता, शाफ़ी, ग़ौस, मालिक, हाजत रवा और मुश्किलकुशा थे। उनके गुण ज़रा आप भी देखिए-बरेलवियत के एक अनुयायी अपने हादी व मुर्शिद की शान मे अपनी किताब मदाइह आला हज़रत में इस प्रकार इर्शाद फ़रमाते हैं-

या सय्यदी या मुर्शिदी या मालिकी या शाफ़ई
ऐ दस्तगीरे रहनुमा या सय्यदी अहमद रज़ा

अन्धों को बीना कर दिया बहरों को शुनवा कर दिया

दीने नबी ज़िन्दा किया या सय्यदी अहमद रज़ा

अमराज़ रूहानी व नफ़सानी उम्मत के लिए

दर तेरा दारूश शिफ़ा या सय्यदी अहमद रज़ा

यही मुरीद अपने पीर व शेख़ जनाब अहमद रज़ा के सामने अपनी कम हैसियत का प्रदर्शन करते हुए और अपना दामन फैलाकर यों पुकारते हैं-

मेरे आक़ा मेरे दाता मुझे टुकड़ा मिल जाए
देर से आस लगाए है यह कुत्ता तेरा
अपनी रहमत से इसे करे कुबूल ऐ प्यारे
नज़्र में लाया है चादर यह कमीना तेरा
इस उबैद रिज़वी पर भी करम की हो नज़र
बद सही चोर सही है तो वह कुत्ता तेरा

(मदाइह आला हज़रत-5-4)

और सुनिए जनाब अहमद रज़ा ख़ां बरेलवी के एक अनुयायी कहते हैं-

क़ियामत में मुफ़र की मुन्किरो तदबीर क्या सोची
कि होगा घूमता कोड़ा इमाम अहले सुन्नत का

(बाग़े फ़िरदौस-4)

किसी से करें फ़रियाद खुदाई मालिक व मौला तेरी दुहाई
तेरे सिवा है कौन हमारा हामी-ए सुन्नत आला हज़रत
भीख सदा मुंह मांगी पायी देर क्यों इस बार लगायी

मेरे करीम सख़ी अन दाता हामिए सुन्नत आला हज़रत
कब से खड़े हैं हाथ पसारे बन्दा नवाज़ गदा बेचारे
अब तो करम हो जाए हामीए सुन्नत आला हज़रत

(मदाइह आला हज़रत-23)

वही फ़रियाद रस है बे कसों का
वही मोहताज का हाजत रज़ा है
सितारा क्यों न मेरा औज पर हो
उधर आक़ा इधर अहमद रज़ा है
मुझे क्या ख़ौफ़ हो वज़ने अमल का
हिमायत पर मेरा हामी मिला है

(नग़मतुर्रूह-44-45)

ब्रेलवियत के एक और कवि अपने मज़हब के अक़ीदों का परिचय कराते हुए कहते हैं-

ग़ौस व क़ुतुब औलिया अहमद रज़ा
है मेरा मुश्किल कुशा अहमद रज़ा
दोनों आलम में है तेरा आसरा
हां मदद फ़रमा शहा अहमद रज़ा
तू है दाता और मैं मंगता तेरा
मैं तेरा हूँ तू मेरा अहमद रज़ा

(नग़मतुर्रूह-47-48)

अब आप ही देखिए कि क्या ये अक़ीदे इस्लामी शरीअत से मज़ाक़ करने जैसे नहीं है क्या इनमें और किताब व सुन्नत में कोई समानता है? क्या इनसे यह बात भली भान्ति स्पष्ट नहीं हो जाती कि इन लोगों का उद्देश्य मुश्रिकाना अक़ीदों और अज्ञानता के दौर की बुराइयों का प्रचार करना है। क्या मक्का के मुश्रिकों के अक़ीदे इन अक़ीदों से अलग थे? क्या नबी करीम सल्ल० इन्हीं शिर्किया विचारों को समाप्त करने के लिए नहीं भेजे गए थे और क्या ये अक़ीदे मुस्लिम समुदाय की एकता के लिए ज़हरे क़ातिल नहीं है ? और सबसे अन्त में वर्तमान युग के आलिम हिन्द व पाक के टीकाकार मुहद्दिस अल्लामा नवाब सिद्दीक़ हसन खां की टीका फ़तहुल बयान की इबारत का उल्लेख करना उचित समझते हैं। नवाब सिद्दीक़ हसन रहिम० अल्लाह के इस फ़रमान-कुल-ला अम्लिकु लिनफ़्सी ज़र्रोव्वला नफ़आ इल्ला मा शाअल्लाह की टीका करते हुए लिखते हैं-

इस आयत में उन लोगों के लिए सख़्त चेतावनी है जिन्होंने मुसीबत के समय नबी सल्ल० को पुकारना अपना अक़ीदा मान लिया है क्योंकि कुरआन ने बड़ी स्पष्टता के साथ यह बयान कर दिया है कि तकलीफ़ों व मुसीबतों में मदद करना अल्लाह के हाथ में है अम्बिया व नेक बन्दों का भी वही मददगार है। इस आयत में भी अल्लाह ने अपने रसूल मुहम्मद सल्ल० को हुक्म दिया है कि वे अपनी उम्मत से एलान करके कह दें कि मैं अपनी ज़ात के लिए नफ़ा व नुक़सान का मालिक नहीं हूँ। कुरआन तो यह बतला रहा है कि नबी करीम सल्ल० को अपनी ज़ात के लिए भी नफ़ा व नुक़सान का इख़्तियार नहीं है फिर वे मुख़्तारे कुल किस

प्रकार हो सकते हैं ? और फिर जब नबी सल्ल० ही को यह इख़्तियार नहीं हासिल है तो शेष मख़लूक़ में से किसी को हाजत व मुश्किलें दूर करने वाला कैसे माना जा सकता है ?

हैरत है उन लोगों पर जो उन बन्दों के सामने अपना दामन फ़ैलाते हैं और उनसे अपनी हाजतें मांगते हैं जो मनों मिट्टी के नीचे दबे पड़े हैं। वे इस शिर्क से बाज़ क्यों नहीं आते ? और अल्लाह व रसूल की शिक्षाओं पर क्यों ध्यान नहीं देते ? ये लोग आख़िर कब लाइला-ह इल्लल्लाह के सही अर्थ से परिचित होंगे ? कब इन्हें कुल हुवल्लाहु अहद की सही टीका का ज्ञान होगा ?

और इसपर विडम्बना यह कि इल्म व फ़ज़ल के दावेदार इनके उपदेशक व उलमा लोग जिनको अपना सच्चा रहनुमा मानते हैं वे इन को इन मुश्रिकाना और अज्ञानता के दौर की बुराइयों व रसमों से क्यों दूर नहीं रखते ? इन्होंने अपनी ज़बानों पर सील क्यों लगा रखी है ?

इनके अक़ीदे तो अज्ञानता युग के मुश्रिकों से भी बुरे हैं वे तो केवल अपने माबूदों को अल्लाह के दरबार में केवल सिफ़ारिशी समझते थे मगर इन्होंने तो तमाम खुदाई अधिकार अपने बुज़ुर्गों को प्रदान कर दिए हैं। ये लोग अल्लाह के बजाए सीधे तौर पर अपने बुज़ुर्गों से मदद व सहायता मांगते हुए थोड़ा सा भी भय महसूस नहीं करते। शैतान ने इनके दिल व दिमाग़ में अपने दृष्टिकोण उतार दिए हैं। ये लोग शैतान की अनुसरण करते जा रहे हैं और इनको इसकी ख़बर भी नहीं। ये समझ रहे हैं कि हम नेकी के रास्ते पर चल रहे हैं यद्यपि ये शैतान की आँख को ठंडा कर

रहे हैं और उसकी खुशी का सामान जमा कर रहे हैं। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन॰ (फ़तहुल बयान-4-225)

और सबसे अन्त में हम शेखुल इस्लाम इमाम इब्ने तैमिया की बात नक़ल करते हैं- वे फ़रमाते हैं कि हज़रत बा यज़ीद बसतामी कहा करते थे बन्दे का बन्दे से मांगना बिल्कुल ऐसा ही है जैसे कोई डूबने वाला दूसरे डूबने वाले से मदद मांगे।

"शेख़ अबू अब्दुल्लाह कुरैशी कहते हैं कि बन्दे का बन्दे से मांगना इस तरह है जेसे कोई क़ैदी दूसरे क़ैदी से रिहाई मांगे।"

फिर मूसा अलैहि॰ अपनी दुआ में फ़ररमाया करते थे-"ऐ अल्लाह ! तू ही सारी प्रशंसाओं का हक़दार है हम तेरे सामने ही अपनी हाजतें पेश करते हैं केवल तू ही मददगार है तू ही लोगों की फ़रियाद सुनने पर समर्थ है हम तुझ पर ही भरोसा करते हैं नफ़ा व हानि तेरे हाथ में है।"

सल्फ़ सालिहीन में से कोई बुजुर्ग भी इस प्रकार ग़ैर अल्लाह से मदद मांगना जाइज़ नहीं समझता है।

(फ़तावा शेखुल इस्लाम-1-112)

•

मुर्दे का सुनना

बरेलवियों का यह अक़ीदा पिछले अक़ीदे का अनिवार्य अंश है क्योंकि मरने के बाद केवल वही व्यक्ति लोगों की मदद व सहायता कर सकता है जो उनकी पुकार को सुन सकता हो। बरेलवियों का अपने बुज़ुर्गों के बारे में यह विश्वास है कि वे अपने मुरीदों की आवाज़ को सुनते और उनकी मदद के लिए पहुँच जाते हैं चाहे उनका मुरीद इस दुनिया के किसी भी हिस्से से भी पुकारे। इसी आधार पर ये लोग कहते हैं-

"औलिया किराम अपनी क़ब्रों में अनंतकाल के जीवन के साथ जीवित हैं उनके इल्म, सोचने समझने, सुनने व देखने की क्षमता पहले के मुक़ाबले अधिक तेज़ है।" (बहारे शरीअत-58)

अर्थात मरने के बाद उनके सुनने और देखने की ताक़त और अधिक बढ़ जाती है इसलिए कि वे अपनी ज़िन्दगी में कुछ सीमित ही साधनों के तहत थे मगर मरने के बाद वे इन सीमित साधनों से बेपरवा हो जाते हैं अतएव इस ग़ैर इस्लामी फ़लसफ़े की व्याख्या करते हुए बरेलवियत के एक इमाम लिखते हैं-

"बेशक पाक जानें जब शरीर के क्षेत्रों से अलग हो जाती हैं आलमे

बाला से जा मिलती हैं और सब कुछ ऐसा देखती हैं सुनती हैं जैसे यहाँ मौजूद हैं।" (बहारे शरीअत-18-19)

मज़हब बरेलवियत के एक और अनुयायी लिखते हैं-

"मुर्दे सुनते हैं और अपने प्रियजनों की मौत के बाद मदद करते हैं।" (इल्मुल कुरआन-189)

एक और बरेलवी औलिया लिखते हैं-"शेख़ जीलानी हर समय देखते हैं और हरेक की पुकार सुनते हैं औलिया उल्लाह को निकट व दूर की चीज़ें सब बराबर दिखायी देती हैं।" (इज़ालतुज़्ज़लाला-7)

और स्वयं बरेलवियत के इमाम अहमद रज़ा ख़ां साहब नक़ल करते हैं "मुर्दे सुनते हैं कि सम्बोध[1]" उसी से किया जाता है जो सुनता हो।

(फ़तावा रिज़वियह-4-227)

बरेलवियत के ख़ां साहब ने अपनी किताबों में बहुत सी इसराईली हिकायतें और क़िस्से कहानियां नक़ल की हैं जिनसे वे साबित करना चाहते हैं कि बुज़ुर्गाने दीन न केवल यह कि मरने के बाद सुनते हैं बल्कि बात भी करते हैं।

अतएव फ़रमाते हैं-

"सय्यद इस्माइल हज़रमी एक क़ब्रिस्तान से गुज़रे तो मुर्दों पर

---

1. नबी सल्ल० चांद को सम्बोध करके फ़रमाया करते थे "रब्बवी व रब्बुमुल्लाह" इसी तरह नबी सल्ल० जब सफ़र का इरादा फ़रमाते तो ज़मीन को सम्बोध करके फ़रमाते या अर्ज़ रव्बी व रब्बुकुम अजूज़ुबिल्लाहि मिन श्र्क। बहर हाल ज़रूरी नहीं कि सम्बोध उसी को किया जाए जो सुनता हो।

अज़ाब हो रहा था, आपने दुआ करके उनपर से अज़ाब हटवा दिया। एक क़ब्र से आवाज़ आयी- "हज़रत मेरा अज़ाब नहीं हटा" आपने दुआ फ़रमायी उसका भी अज़ाब हटा दिया गया। (हिकायते रिज़वियह-57)

बरेलवी समुदाय के एक और इमाम का ग़ैर इस्लामी फ़ैसला सुनिए। कहते हैं- "या अली या ग़ौस कहना जाइज़ है क्योंकि अल्लाह के प्यारे बन्दे बरज़ख़ में सुन लेते हैं।" (फ़तावा रिज़वियह-537)

जनाब अहमद रज़ा बरेलवी यह अक़ीदा रखते हैं कि अम्बिया व औलिया पर मौत तारी नहीं होती बल्कि उनको ज़िन्दा ही दफ़ना दिया जाता है और उनकी क़ब्र की ज़िन्दगी दुनिया की ज़िन्दगी से अधिक मज़बूत व अफ़ज़ल होती है। जनाब बरेलवी अम्बिया किराम के बारे में कहते हैं।

"अम्बिया किराम अलैहि॰ की ज़िन्दगी हक़ीक़ी हिस्सी दुनियावी ज़िन्दगी है उनपर तसदीक़ वादा-ए-इलाहिय्या के लिए केवल एक क्षण को मौत तारी होती है फिर तुरन्त उनको वैसी ही ज़िन्दगी प्रदान कर दी जाती है इस ज़िन्दगी पर वही दुनिया वाले अहकाम हैं उनकी मीरास बांटी न जाएगी उनकी पत्नियों का निकाह हराम, उनकी पत्नियों पर इद्दत नहीं, वे अपनी क़ब्र में खाते पीते और नमाज़ पढ़ते हैं।"

(मलफ़ूज़ात लिल बरेलवी-3-276)

एक और साहब इर्शाद फ़रमाते हैं-"अम्बिया-ए-किराम चालीस दिन क़ब्र में रहने के बाद नमाज़ पढ़ना शुरू कर देते हैं"।

(रसूलुल्कलाम-1)

आगे सुनिए "अम्बियाए किराम अपनी क़ब्र में ज़िन्दा हैं वे चलते फिरते हैं नमाज़े पढ़ते और कलाम करते हैं और मख़्लूक़ के मामलों में तसर्रूफ़ करते हैं।" (हयातुन्नबी काज़मी-3)

नबी करीम सल्ल० का अपमान करते हुए उन्होंने अपनी किताबों में लिखा है कि आप सल्ल० को जब सहाबा रज़ि० ने दफ़न किया तो आप जीवित थे अतएवं बरेलवी इर्शाद करते हैं-

"क़ब्र शरीफ़ में उतारते समय हुज़ूर सल्ल० "उम्मती उम्मती" फ़रमा रहे थे।"

जनाब बरेलवी का एक और फ़रमान सुनिए-"जिस समय नबी सल्ल० की रूह अक़दस क़ब्ज़ हो रही थी उस समय भी शरीर में ज़िन्दगी मौजूद थी।" (हयातुन्नबी)

आगे सुनिए-"हमारे उलमा ने फ़रमाया कि हुज़ूर सल्ल० की ज़िन्दगी और वफ़ात में कोई फ़र्क़ नहीं अपनी उम्मत को देखते हैं और उनके हालात, नीयतों व इरादों और दिल की बातों को जानते हैं यह आपको बिलकुल स्पष्ट हैं इसमें कोई बात छिपी नहीं।" (जाअल हक़-15)

एक और बरेलवी इमाम लिखते हैं-"तीन दिन तक रोज़ए शरीफ़ से बराबर पाँचों समय की आवाज़ आती रही।"

(हिदायतुत्तरीक़ फ़ी बयानुत्तहक़ीक़ वत्तक़लीद-86)

इर्शाद होता है-

"जब हज़रत अबू बक्र रज़ि० का जनाज़ा हुजरा मुबारक के सामने

रखा गया आवाज़ आयी " दोस्त को दोस्त के पास ले आओ।"

(हयातुन्नबी-125)

यह गुण केवल अम्बिया किराम तक ही सीमित नहीं हैं बल्कि बुजुर्गाने दीन भी इस पद के योग्य हैं। अत: इर्शाद होता है-

"अल्लाह के वली मरते नहीं बल्कि एक घर से दूसरा घर बदल लेते हैं उनकी अर्वाह केवल एक क्षण के लिए बाहर निकलती हैं फिर इसी तरह शरीर में मौजूद होती हैं जिस तरह पहले थी।"

(फ़तावा नईमिया-225)

बरेलवियत के इमाम अकब्र भी इसी अक़ीदे को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं-"औलिया मरने के बाद जीवित हैं और उनके तसर्रूफ़ात व करामात बरक़रार और उनके इनाम बराबर जारी और हम गुलामों, सेवकों, चाहने वालों, अनुयायियों के साथ वही मदद व समर्थन का सिलसिला जारी।" (फ़तावा रिज़वियह-4-23)

उनके एक अनुयायी का इर्शाद सुनिए---नक़ल करते हैं-

"औलिया उल्लाह की मौत सपने के जैसी है।"

(फ़तावा रिज़विया-4-23)

जनाब खां साहब बरेलवी फ़रमाते हैं-

"औलिया किराम अपनी क़ब्रों में पहले से अधिक सुन व देख सकते हैं"--आगे नक़ल करते हैं-"अल्लाह के प्यारे जीवित हैं यद्यपि मर जाएं तो वे एक घर से दूसरे घर में बदले जाते हैं।"

(फ़तावा रिज़विया-4) (अहकामे कुबूरे मोमिनीन-243)

थोड़े से परिहास के लिए एक दिलचस्प क़िस्सा भी सुन लें-

"एक आरिफ़ रिवायत करते हैं-मक्का मोअज़्ज़मा में एक मुरीद ने मुझसे कहा पीर व मुर्शिद मैं कल जुहर के बाद मर जाऊँगा। हज़रत एक अशरफ़ी लें आधी में मेरा दफ़न और आधी में मेरा कफ़न करें। जब दूसरा दिन हुआ और जुहर का समय आया। मुरीद ने आकर तवाफ़ किया फिर काबे से हट कर लौटा तो रूह न थी। मैंने क़ब्र में उतारा आँखें खोल दीं। मैंने कहा क्या मौत के बाद ज़िन्दगी--? कहा मैं ज़िन्दा हूँ और अल्लाह का हर दोस्त ज़िनदा है।"

(अहकामे कुबूरे मोमिनीन रसाइले रिज़वीयह-243)

जनाब बरेलवी ने अपनी एक और किताब में शीर्षक लगाया है-

"अम्बिया व शहीद और औलिया अपने शरीर के साथ कफ़न सहित जीवित हैं।" (अहकामे कुबूर मोमिनीन रसाइले रिज़वियह-239)

जनाब बरेलवी की ओर से एक और अफ़साना आपके सामने पेश है किसी बुजुर्ग से नक़ल करते हैं-

मैं मुल्के शाम से बसरा जाता था रात को ख़न्दक़ में उतरा वुज़ू किया दो रकअत नमाज़ पढ़ी फिर एक क़ब्र पर सर रखकर सो गया। जब जागा तो क़ब्र वाले को देखा कि मुझसे शिकायत करता है और कहता है- ऐ मर्द तूने मुझे रात भर कष्ट दिया।"

(अहकामे कुबूरे मोमिनीन-247)

इस तरह की झूठी घटनाएं, गढ़ी हुई करामतों और क़िससे कहानियों से उनकी किताबें भरी हुई हैं। मालूम होता है कि अफ़साना लिखने में

इन लोगों का मुक़ाबला हो रहा है हर व्यक्ति दूसरे से आगे बढ़ जाने की चिन्ता में है। इस मज़हब के एक अनुयायी अफ़साना निगारी करते हुए किसी बुज़ूर्ग के बारे में लिखते हैं-

इन्तिक़ाल के बाद उन्होंने फ़रमाया-मेरा जनाज़ा जल्दी ले चलो नबी सल्ल० जनाज़े का इन्तिज़ार फ़रमा रहे हैं।" (हयातुन्नबी-42)

तो देखिए-इस प्रकार की इसराईली रिवायतों और गढ़ी हुई घटनाओं पर इन्होंने अपने मज़हब की इमारत स्थापित की है। अब ज़रा इस मुश्रिकाना अक़ीदे के बारे में कुरआन करीम की शिक्षाएं सुनिए और देखिए कि किस प्रकार इन लोगों की नस नस में शिर्क के असरात दाख़िल हो गए हैं।

व मन अज़ल्लु मिम्मन यदऊमिन दुनिल्लाहि मल्ला यस्तजीबु-लहू इला यव्मिल क़ियामति वहुम अन दुआइहिम ग़ाफ़िलून० (अहक़ाफ़-5)

"और उससे बढ़कर ज़ालिम कौन होगा जो अल्लाह के सिवा किसी और को पुकारे जो क़ियामत तक भी उसकी बात न सुने बलिक उनको पुकारने की ख़बर तक न हो।"

और अल्लाह तआला इर्शाद फ़रमाते हैं-

अ-युश्रिकू-न माला यख़्लुकु शैअन व हुम युख़्लकू-न वला यसततीऊ-न लहुम नसरवं वला अन्फु-स-हुम यन्सुरून० व इन तदऊहुम इलल्हुदा ला यतबिऊकुम सवाउन अलैकुम अ-द-अव तुमूहुम अम अन्तुम सामितून० इन्नल्लज़ी-न तद्ऊ-न मिन दूनिल्लाहि अ़िबादुन अमसालुकुम फ़दऊहुम फ़ल यस्तजीबु लकुम इन कुन्तुम सादिक़ीन० अ-ल-हुम अर्जुलुन यम्शू-न बिहा अम लहुम अय्दिन यब्तिशू-न बिहा अम लहुम अअ युनन युब्सिरू-न बिहा अम लहुम आज़ानुन यसमऊ-न बिहा कुलिद्ऊ श-ुर-काउकुम सुम्मा कीदूनि फ़ला तुन्ज़िरून० इन्ना वलिय्यि यल्लाहुल्लज़ी नज़्ज़लल किता-ब वहु-व य-तवल्लस्सा लिहीन बल्लज़ी-न तद ऊना मिन दूनिही ला यस्ततीऊ-न नस्र-कुम वला अन्फु-स-हुम व इन तद्ऊहुम इललहुदा ला यस्मऊ व तराहुम यन्जुरू-न इलैका व हुम ला युब्सिरून० (आराफ़-191-198)

"तो अल्लाह पाक है उनके शिर्क से क्या ये उनको शरीक करते हैं जो किसी चीज़ को पैदा न कर सकें बल्कि स्वयं ही पैदा किए गए हैं वे उनको किसी भी प्रकार की मदद नहीं दे सकते (बल्कि) स्वयं अपनी ही मदद नहीं कर सकते और यदि तुम उनको कोई बात बतलाने को पुकारो तो तुम्हारा अनुसरण न कर सके बराबर हैं (दोनों काम) तुम्हारे हिसाब से कि यदि उनको पुकारो, चाहे खामोश रहो बेशक जिनको तुम अल्लाह को छोड़ कर पुकारते हो वे तुम्हारे ही जैसे बन्दे हैं तो यदि तुम सच्चे हो तो तुम उनको पुकारो फिर उनको चाहिए तुम्हें जवाब दें क्या उनके पाँव हैं जिनसे वे चलते हैं क्या उनके हाथ हैं जिनसे वे किसी हाथ को

पकड़ते हैं कि उनकी (आँखें) हैं जिनसे वे देखते हैं क्या उनके कान हैं जिनसे वे सुनते हैं आप कह दीजिए कि तुम अपने सब साझीदारों को बुलालो फिर मेरे ख़िलाफ़ चाल चलो और मुझे मोहलत न दो निश्चय ही मेरा कारसाज़ अल्लाह है जिसने मुझ पर यह किताब उतारी है और वह नेक लोगों की कारसाज़ी करता ही रहता है और जिनको तुम अल्लाह के सिवा पुकारते हो वे न तो तुम्हारी ही मदद कर सकते हैं और न अपनी ही मदद कर सकते हैं और यदि तुम उनको कोई बात बतलाने को पुकारो तो सुन न सकें और आप उनको देखें कि मानों आपकी ओर नज़र कर रहे हैं यद्यपि उन्हें कुछ नहीं सूझ रहा।"

अल्लाह तआला कुरैश और टापू के मुश्रिकों के अक़ीदा (अल्लाह से मदद मांगने व अल्लाह को पुकारने) की हिकायत बयान करते हुए इर्शाद फ़रमाते हैं-

हुवल्लज़ी युसय्यिरूकुम फ़िल बर्रि वल बहरि हत्ता इज़ाकुन्तुम फ़िल्फ़ुल्कि व ज-रैना बिहिम बिरीहिन तय्यिबतिव्व फ़रिहु बिहा जा अतहा रीहुन आसिफुवँ व जाअहुमुल मवजु मिन कुल्ली मकानिव्वज़न्नु अन्नुहम उहीता बिहिम द-अ-वुल्ला-ह मुख़लिसीना लहुद्दीना लइन अन्जयतना मिन हाज़िहि ल-न-कूनन्न मिनश्शाकि रीन०

"अज्ञानता के मुश्रिकीन जब कश्ती में सवार होते थे और उनकी कश्ती तूफ़ान में फंस जाती थी तो वे केवल अल्लाह ही को पुकारते थे और उनकी असल फ़ितरत उमड आती थी कि अल्लाह के सिवा कोई भी तसर्रूफ़ वाला मालिक व इख़्तियार वाला नहीं है मगर ज़रा उन लोगों की बद अक़ीदगी देखिए कि ये समुद्र में हों या खुश्की के स्थान पर हर जगह कभी बहाउल हक़ और मुईनुद्दीन चिश्ती का नाम लेकर और कभी दूसरे बुज़ुर्गों को पुकार कर ग़ैरूल्लाह ही से फ़रियाद करते नज़र आते हैं।

स्वयं बरेलवियत के इमाम ख़ां साहब बरेलवी लिखते हैं-

"जब कभी मैंने मदद मांगी या ग़ौस ही कहा।"

(मल्फ़ूज़ात-3-7)

इनके अक़ीदे का खडंन करते हुए हनफ़ी टीकाकार शेख़ आलूसी उपर्युक्त आयत की टीका बयान करते हुए फ़रमाते हैं।

इस आयत से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि मुश्रिकीन इस प्रकार के कठिन हालात में अल्लाह के सिवा किसी को नहीं पुकारते थे मगर अफ़सोस है उन हस्तियों को पुकारते हैं जो न उनकी आवाज़ सुन सकते हैं न जवाब दे सकते हैं न नफ़ा के मालिक हैं न नुक़सान के इनमें से कुछ ख़िज़्र व इलयास नाम की दुहाई देता है कोई अबुल हुमैस और अब्बास से मांगता और कोई अपने इमाम को फ़रियाद के लिए पुकारता है किसी को अल्लाह के सामने हाथ फैलाने का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता। मुझे बताइए कि इन दोनों तरीक़ों में से कौन हिदायत के निकट है और कौन गुमराही की दलदल में फ़सा हुआ है निश्चय ही मुश्रिकीने मक्का का

अक़ीदा उनसे वेहतर था। इन लोगों ने शरीअत की विरोध और शैतान की पैरवी को नजात का साधन समझ रखा है खुदा सब को हिदायत दे।"

(नक़ल अनिल आयात बय्यिनात फ़ी अदमि समाइलिल अमवात-17)

इसी प्रकार मिस्र के दार्शनिक व विद्वान सैयद रज़ा मिस्री इस आयत की टीका में लिखते हैं-

"इस प्रकार की आयतों में कितनी स्पष्टता से बयान कर दिया गया है कि मुश्रिक कठिन हालात में केवल अल्लाह को पुकारते थे मगर इस दौर के नाम निहाद मुसलमानों की अक़ल का मातम कीजिए कि वे सख़्ती व मुश्किल के समय अपने वास्तविक माबूद को छोड़ कर अपने माबूदों "बदवी" रफ़ाअी, दसोक़ी, जीलानी, मतबूली और अबू सरीअ आदि से मदद मांगने में किसी प्रकार की शर्म महसूस नहीं करते।

और बहुत सारे जुब्बा पहनने वाले जो दरगाहों के मजावर बने हुए हैं और ग़ैरूल्लाह के नाम पर चढ़ाए जाने वाले चढ़ावों और नज़्र व नियाज़ के कारण ऐशो इशरत का जीवन गुज़ार रहे हैं और गुलछर्रे उड़ा रहे हैं इन्हें सीधे सादे लोगों को गुमराह करते और दीन को बेचते हुए थोड़ी सी भी शर्म महसूस नहीं होती।

कहा जाता है कि कुछ लोग समुद्र के सफ़र मे कश्ती पर सवार हुए और कुछ दूर जाकर कश्ती भंवर में फंस गयी अपनी मौत अपने सामने नज़र आने लगी तो उनमें से हर व्यक्ति अपने अपने पीर को पुकारता ऐ बदवी ऐ रफ़ाअी ऐ जीलानी। उनमें अल्लाह का एक बन्दा तौहीद परस्त भी था वह तंग आकर कहने लगा अल्लाह इन सबको डुबो दे इनमें

कोई भी तुझे पहचानने वाला नहीं है।" (तफ़सीरूल मनारिज-11-338-339)

अल्लाह से दुआ है कि वह हमें सीधे रास्ते पर चलाए और शिर्क व बुत परस्ती से बचाए रखे। आमीन।

●

ग़ैब के इल्म का मसला

अहले सुन्नत का अक़ीदा यह है कि सारी चीज़ों का ज्ञान केवल अल्लाह की ज़ात के लिए ख़ास है ग़ैब का जानने वाला केवल अल्लाह है नबियों व रसूलों को भी किसी चीज़ का ज्ञान उस समय तक हासिल नहीं होता जब तक कि उन पर वही न उतरे। नबियों के बारे में ग़ैब का ज्ञान का अक़ीदा रखना महानता का एतिराफ़ नहीं बल्कि अत्यन्त गुमराही और भटकना है। नबी सल्ल० की सीरत की घटनाओं व तथ्यों की खुली दलीलों के ख़िलाफ़ है और न केवल यह कि किताब व सुन्नत का विरोध है बल्कि यह अक़ीदा फ़िक़्ह हनफ़ी के भी ख़िलाफ़ है।

ब्रेल्वीयों का यह अक़ीदा है कि नबियों व औलिया को हर उस बात का ज्ञान है जो हो चुकी है या होने वीली है। उनकी नज़र से कोई चीज़ छिपी हुई नहीं। सारा जगत उनकी नज़र के सामने है वे दिलों के हालात को जानने वाले हर राज़ से ख़बरदार और तमाम जीवों से परिचित हैं उनको क़ियामत का ज्ञान, आने वाले दिन के हालात की ख़बर हो जाती है और मां के पेट में जो कुछ है उससे वाक़िफ़ होते हैं हर छिपे व खुले

पर उनकी नज़र होती है।

मतलब यह कि दुनिया में जो कुछ हो चुका है जो कुछ हो रहा है और जो कुछ होने वाला है वह औलिया के इज्तिहाद से कोई भी चीज़ छिपी नहीं है। अब सुनिए कुरआनी आयतें और अल्लाह के इर्शाद जिनसे स्पष्ट रूप से यह साबित होता है कि गैब का ज्ञान अल्लाह की ख़ास विशेषता है। उसकी मख़लूक़ का कोई जन भी अल्लाह की इस सिशेषता में शरीक व साझी नहीं है।

अल्लाह का इर्शाद है-

कुल ला याअ्लमु मन फ़िस्समावाति वल अर्ज़िल गै़ब इल्लल्लाहि०

(नहल-65)

"कह नहीं जानता कोई बीच आसमानों के और ज़मीन के छिपे मगर अल्लाह।"

इन्नल्लाहा आलिमुल ग़ैबिस्समा वाति वल अर्ज़ि इन्नहू अलीमुम बिज़ातिम्दूरि० (फ़ानिग-38)

"बेशक अल्लाह जानता है छिपी चीज़ें आसमानों की और ज़मीन की। बेशक वह जानने वाला है सीने वाली बात को।"

इन्नल्लाहा याअ्लमु ग़य्बस्स मावाति वल अर्ज़ि वल्लाहु बसीरूम बिमा ता-मलून० (हुजरात-18)

"बे शक अल्लाह जानता है छिपी चीज़ें आसमानों की और ज़मीन की और अल्लाह देखता है जो कुछ तुम करते हो।"

लिल्लाहि ग़ैबुस्समा वाति वल अर्ज़ि व इलैहि युर्जअुल अमरू कुल्लुहू॰
(हूद-123)

"और वास्ते अल्लाह के हैं छिपी चीज़ें आसमनों की और ज़मीन की अर्थात ज्ञान उनका और तरफ़ उसी की फेरा जाता है काम सारा

और अपने नबी को आदेश दिया।

इन्नमल ग़ैबु लिल्लाहि फ़न्तज़िरू इन्नी म-अ-कुम मिनल मुन्तज़िरीन॰
(यूनुस-20)

"सिवाए उसके नहीं कि ग़ैब का ज्ञान वास्ते खुदा ही के तो इन्तिज़ार करो बेशक मैं भी साथ तुम्हारे इन्तिज़ार करने वालों से हूँ।"

व अिन्दहू मफ़ातीहुल ग़ैबि ला यअ-लमुहा इल्ला हु-व व यअ-लमु माफ़िल बर्रि वल बहरि वमा तसकुतु मिंव्व-र-क़तिन इल्ला यअ-लमुहा वला हब्बतिन फ़ी ज़ुलुमतिल अर्ज़ि वला रत्बिंव्वला याबिसिन इल्ला फ़ी किताबिम मुबीन॰ (अनआम-59)

"और निकट उसके हैं कुन्जियां ग़ैब की नहीं जानता उनको मगर वह और जानता है जो कुछ बीच जंगलों के है और दरिया के है और नहीं

गिरता कोई पत्ता मगर जानता है उसको और नहीं गिरता कोई दाना बीच अंधेरों ज़मीन के और न कोई गीला और सूखा मगर बीच किताब बयान करने वाली के है।"

इन्नल्लाहा अ़िन्दहु इल्मुस्साअति व युनज़्ज़िलुल ग़ैसा व यअ-लमु माफ़िल अर्हामि वमा तद्री नफ़्सुन मा ज़ा तक सिबु ग़दन वमा तद्री नफ़सुन बिअय्यि अर्ज़िन तमूतु॰ इन्नल्लाहा अलीमुन ख़बीर॰

(लुक़मान-34)

"बेशक अल्लाह के पास है इल्म क़ियामत और उतारता है बारिश और जानता है जो कुछ बीच मां के पेटों के है और जानता नहीं कोई जी क्या कमाएगा कल को और नहीं जानता कोई जी किस ज़मीन में मरेगा बेशक अल्लाह जानने वाला है।"

मगर बरेलवी हज़रात किताब व सुन्नत के विपरीत यह अकीदा रखते हैं कि "अम्बिया अलैहि॰ शुरू ही दिन से अन्तिम दिन तक के तमाम "मा काना वमा यकून को जानते बल्कि देख रहे हैं और मुशाहिदा फ़रमा रहे हैं।"

और इर्शाद होता है-

"अम्बिया पैदाइश के समय ही आरिफ़ बिल्लाह होते हैं और ग़ैब का ज्ञान रखते हैं।" (मवाअिज़े नईमिया-192)

नबी सल्ल॰ के पैदाइश के बारे में बरेलवीयों के इमाम जनाब इमाम

अहमद रज़ा लिखते हैं। नबी सल्ल० को समस्त ज्ञान हासिल हो गए हैं और सब का एहाता फ़रमा लिया।" (अद दौलतुल मक्किया-230)

एक दूसरी जगह नक़ल करते हैं-"लौह व क़लम का ज्ञान जिसमें तमाम "मा काना वमा यकून" है। हुज़ूर के इल्मों में से एक टूकड़ा है।"

(ख़ालिसुल एतिक़ाद बरेलवी-38)

आगे लिखते हैं- "हुज़ूर सल्ल० के विभिन्न ज्ञानों में पूर्ण व आंशिक से संबन्धित हैं और लौह व क़लम का ज्ञान तो हुज़ूर सल्ल० के पत्रों में से एक पंक्ति और उसके समुन्द्रों में से एक नहर है फिर इल्म व जानकारी सारे जहान पर छायी हुई है।" (ख़ालिसुल एतिक़ाद-38)

"नबी सल्ल० को अल्लाह की पाक ज़ात के शानों और सिफ़ाते हक़ के आदेशों और नामों व कामों और अलामतों मतलब यह कि सारी वस्तुओं का ज्ञान और हुज़ूर ने सारे उलूम आदि से अन्त तक खुले व छिपे सब का एहाता फ़रमाया।" (अददौलतुल मक्किय्यह-210)

जनाब बरेलवी के एक अनुयायी इर्शाद फ़रमाते हैं-

"नबी सल्ल० से संसार की कोई वस्तु पर्दे में नहीं। यह रूह पाक अर्श और उसकी ऊँचाई व पतन, दुनिया व आख़िरत, जन्नत व जहन्नम सब पर बाख़बर है क्योंकि ये सब चीज़ें उसी बा कमाल ज़ात के लिए पैदा की गयी हैं।"

(अलकलिमतुल अुलिया अल आला इल्मुल मुस्तफ़ा-4)

यही साहब आगे लिखते हैं-"जनाब मुहम्मद सल्ल० सारी छिपी मालूमात व बातों पर मुहीत हैं।"

एक और बरेलवी इर्शाद फ़रमाते हैं-

"नबी सल्ल० अल्लाह को भी जानते और सारे मौजूद जीवों उनके समस्त मालों व कमालों को जानते हैं। अतीत, वर्तमान और भविष्य में कोई वस्तु किसी भी हाल में हो नबी सल्ल० से छिपी हुई नहीं है।"

(तसकीनुल ख़्वातिर मस-अलतुल हाज़िर वन्नाज़िर-65)

एक और बरेलवी इन्कारी इससे भी आगे बढ़ जाते हैं और इस प्रकार लिखते हैं -

"नबी सल्ल० को अल्लाह ने ऐसा इल्मे ग़ैब प्रदान किया कि आप पत्थर के दिल का हाल भी जानते थे तो इन सरकार को अपने चाहने वाले इन्सानों के दिलों का पता क्यों न होगा ?" (मवाअिज़े नईमिया)

आगे इसी किताब में फ़रमाया गया है-

"जिस जानवर पर सरकार क़दम रखें उसकी आखों से पर्दा उठा दिया जाता है जिस दिल के सर पर हुज़ूर का हाथ हो उस पर सब ग़ाइब व हाज़िर क्यों न ज़ाहिर हो जाएं।"

स्वयं बरेलवियत के इमाम सहाबा किराम रज़ि० की ज़ात पर झूठ बांधते हुए फ़रमाते हैं-"सहाबा किराम यक़ीन के साथ हुकम लगाते थे कि नबी सल्ल० को ग़ैब का इल्म है।" (ख़ालिसुल एतिक़ाद-28)

कुरआन करीम की खुली मुख़ालिफ़त करते हुए बरेलवियों का यह अक़ीदा है कि नबी करीम सल्ल० को उन पाँच छिपी बातों का भी ज्ञान था जो कुरआनी आयतों के अनुसार अल्लाह ही के लिए ख़ास हैं- अतएवं अल्लाह का इर्शाद है-

इन्नल्लाहा अ़िन्दहु अ़िल्मुस्सा अति व युनज़्ज़िलुल ग़य्सा व य-अलमु मा फ़िल्अर्हामि वमा तद्री नफ़सुम्माज़ा तकसिबु ग़दन वमा तदरी नफ़सुन बिअय्यि अर्ज़िन तमूतु॰ इन्नल्लाहा अलीमुन ख़बीर॰

अनुवाद-"बेशक अल्लाह के पास ज्ञान है क़ियामत का और उतारता है बारिश और जानता है जो कुछ मां के पेटों में है और नहीं जानता कोई व्यक्ति कि वह कल क्या अमल करेगा और कोई नहीं जानता कि यह किस ज़मीन पर मरेगा। बेशक अल्लाह सब बातों को जानने वाला है।"

(लुक़मान-34)

अल्लाहु यअ़-लमु मा तह्मिलु कुल्लु उन्सा वमा तग़ीजुल अर्हामु वमा तज़्दादु व कुल्लु शैइन अ़िन्दहु बिमिक्दारिन॰ आ़लिमुल ग़यबि वश्शहादतिल कबीरूल मु-त-आल॰

"अल्लाह जानता है जो कुछ उठाती है हर औरत और जो कुछ (गर्भ) में कमी बेशी होती है और हर वस्तु अल्लाह के निकट ठीक अन्दाज़े पर है जानने वाला है खुली व छुपी का सबसे बड़ा आलीशान है।" (रअ़्द-8-9)

इन्नस्सा-अ़ता आतियतुन अकादु उख़्फ़ीहा लितुज्ज़ाकुल्लु नफ़्सिन

बिमा तस्अ़ा०

"बेशक क़ियामत आने वाली है निकट है कि छुपा डालूं उसको ताकि हर व्यक्ति को उसके किए का बदला मिल जाए।" (ताहा-15)

अल्लाह नबी करीम सल्ल० को सम्बोध करते हुए इर्शाद फ़रमाता है-

यस्अलू-न-क अनिस्सा-अ़ति अय्याना मुर्साहा कुल इन्नमा अ़िल्मुहा अ़िन्दा रब्बी ला युजल्लीहा लिवक़्तिहा इल्ला हुवा सक़ुलत फ़िस्समा वाति वल अर्ज़ि ला तातीकुम इल्ला बग़ततन यस्अलू-नका क-अन्न-क हफ़िय्युन अ़न्हा० कुल इन्नमा अ़िल्मुहा अ़िन्दल्लाहि वला कि ना अक्सरन्नासि ला यअ़्लमून०

"ये लोग आप से क़ियामत के बारे में सवाल करते हैं कि वह कब आएगी ? आप कह दीजिए कि इसका पता केवल मेरे रब ही को है इसके समय पर उसको कोई और न ज़ाहिर करेगा। वह ज़मीन व आसमान में भारी (दुर्घटना) होगी इसलिए कि वह तुम पर बस अचानक आ पड़ेगी। वे आप से पुछते हैं मानो आप इसकी जाँच कर चुके हैं आप कहिए कि इसका ज्ञान ख़ास अल्लाह ही को है लेकिन बहुत से लोग नहीं जानते।" (आराफ़-186)

अल्लाह का इर्शाद है-

यस अलूनका अनिस्साअति कुल इन्नमा अ़िल्मुहा अिन्दल्लाहि०

"(यि) लोग आपसे क़ियामत के बारे में पूछते हैं आप कह दीजिए

इसका पता तो बस अल्लाह ही को है।" (अह्ज़ाब-73)

अल्लाह का एक और इर्शाद है-

हुवल्लज़ी ख़-ल-क़-कुम मिन तीनिन सुम्मा क़ज़ा अ-ज-लम मुसम्मन अ़िन्दहू सुम्मा अन्तुम तम तरून०

"वह (अल्लाह) वही है जिसने तुमको मिट्टी से पैदा किया फिर एक समय निर्धारित किया और वह निर्धारित समय उसके इल्म में है फिर भी तुम शक करते हो।" (अनआ़म-2)

व अ़िन्दहू अ़िल्मुस्साअति व इलैहि तुर्जअून०

"और उसी को क़ियामत की ख़बर है और उसी की ओर (तुम सब) वापस किए जाओगे।" (ज़ुख़रूफ़-85)

अ़िन्दहू मफ़ातिहुल ग़ैबिला यअ़्लमुहा इल्ला हुवा०

"और उसके पास हैं ग़ैब के ख़ज़ाने उन्हें उसके अलावा कोई नहीं जानता।" (अनआम-59)

और नबी करीम सल्ल० ने अपने कथनों में स्पष्ट कर दिया है कि ये ग़ैबी बातें केवल अल्लाह के ही ज्ञान तक सीमित हैं अतएवं प्रसिद्ध हदीसे जिब्राईल इस बात को स्पष्ट करती है कि जब जिब्राईल अलैहि० ने आपसे क़ियामत के बारे में मालूम किया तो आपने जवाब दिया- सवाल करने

वाले की तरह जवाब देने वाला भी यह बात नहीं जानता।"

फिर आपने यह आयत तिलावत फ़रमायी-

"बे शक क़ियामत का इल्म अल्लाह ही के पास है।" (बुख़ारी)

इसी तरह नबी सल्ल० से रिवायत है कि आपने फ़रमाया-

"ग़ैब की कुन्जियां पाँच हैं अल्लाह के सिवा कोई नहीं जानता।

1. मां के गर्भ में क्या है 2. आने वाले कल के बारे में 3. बारिश होगी या नहीं ? 4. मौत कहाँ आएगी ? 5. क़ियामत कब आएगी ?

(बुख़ारी मुस्लिम, मुसनद अहमद)

इसके अलावा हज़रत जाबिर रज़ि० नबी सल्ल० से रिवायत करते हैं कि आपने अपनी वफ़ात से एक माह पूर्व इर्शाद फ़रमाया-

"तुम मुझसे क़ियामत के बारे में सवाल करते हो यद्यपि इसका पता तो सिवाए अल्लाह के किसी को भी नहीं।" (मुस्लिम)

हज़रत बरीदा रज़ि० रिवायत करते हैं कि नबी सल्ल० ने फ़रमाया पाँच चीज़ों का इल्म अल्लाह के सिवा किसी को भी नहीं। क़ियामत का समय, बारिश का समय, मां के पेट में क्या है, आने वाले समय का हाल और कहाँ मौत होगी।" (मुसनद अहमद)

कुरआनी आयतों और हदीसों की किताबों में इस संदर्भ की बहुत सी हदीसें मौजूद हैं मगर बरेलवी हज़रत नबी की शिक्षाओं को नज़र अंदाज़ करते हुए बिल्कुल इसके विपरीत अक़ीदा रखते हैं अतएवं अहमद रज़ा बरेलवी लिखते हैं-

"नबी सल्ल० दुनिया से न तशरीफ़ ले गए मगर बाद इसी के कि

अल्लाह तआला ने हुजूर को इन पाँचों ग़ैबों का इल्म दे दिया।

(ख़ालिसुल एतिक़ाद बरेलवी-53)

आगे इर्शाद होता है-"नबी सल्ल० को पाँचों छिपी बातों का ज्ञान था मगर आपको इन सबको छिपाने का हुक्म दिया गया था।"

एक दूसरे बरेलवी का इर्शाद भी सुनिए-लिखते हैं-

"नबी सल्ल० को समस्त पिछली और आगे आने वाली घटनायें जो लौह में सुरक्षित हैं उनका बल्कि इससे भी अधिक का ज्ञान हो गया। आपको क़ियामत का भी ज्ञान मिला कि कब होगी ?

(जाअल हक़-43)

एक और जगह लिखते हैं-"नबी सल्ल० लोगों के पहले के हालात जानते थे अल्लाह तआला के मख़्लूक़ात को पैदा करने के पहले की घटनाओं और उनके पीछे के हालात भी जानते हैं क़ियामत के हालात, लोगों की घबराहट और अल्लाह का प्रकोप आदि।"

"हजूर सल्ल० लोगों के हालात को देखने वाले हैं और उनके हालात जानते हैं उनके हालात उनके मामलात और उनके क़िस्से आदि। और उनके पीछे के हालात भी जानते हैं आख़िरत के हालात, जहन्नमियों के हालात और वे लोग नबी सल्ल० के मालूमात में से कुछ भी नहीं जानते मगर उतना ही जितना कि आप (सल्ल०) चाहें औलिया उल्लाह का ज्ञान अम्बिया के सामने ऐसा है जैसे एक बूंद सात समुन्द्रों के सामने और अम्बिया का ज्ञान नबी सल्ल० के ज्ञान के सामने इसी दर्जे का है।"

(जाअल हक़-50-51)

आगे और सुनिए-

नबी सल्ल० की ज़िन्दगी और वफ़ात में कोई फ़र्क़ नहीं। अपनी उम्मत को देखते हैं और उनके हालात व नीयतों व इरादों और दिल की बातों को जानते हैं। (ख़ालिसुल एतिक़ाद-39)

एक और साहब फ़रमाते हैं-"नबी सल्ल० मदीना मनुव्वरा में रहकर कण कण को देख रहे हैं।" (मवाइज़े नईमिया-326)

बरेलवीयत का एक अनुयायी नबी सल्ल० की ओर झूठ थोपते हुए कहता है कि आपने फ़रमाया-

"मेरा ज्ञान मेरी वफ़ात के बाद इसी तरह है जिस तरह मेरी ज़िन्दगी में था।" (ख़ालिसुल एतिक़ाद बरेलवी-14)

अहमद रज़ा बरेलवी पाँच ग़ैब की बातों के बारे में फ़रमाते हैं-

"नबी सल्ल० को न केवल स्वयं इन बातों का ज्ञान है बल्कि आप जिसे चाहें प्रदान कर दें।" (ख़ालिसुल एतिक़ाद बरेलवी-14)

एक और बरेलवी लिखते हैं-"कुरआनी आयत (व हु-व बिकुल्लि शैइन अलीम) से तात्पर्य है कि नबी सल्ल० हर चीज़ को जानते हैं।"

(तस्कीनुल ख़्वातिर काज़मी बरेलवी-52-53)

देखिए, कुरआन करीम में संशोधन व कतर बैत करते हुए, इन तथा कथित आलिमों को थोड़ा सा भी अल्लाह का भय महसूस नहीं होता।

'खुद बदलते नहीं कुरआं को बदल देते हैं'

पाँच ग़ैबों का ज्ञान केवल नबी सल्ल० तक ही सीमीत नहीं है बल्कि आपकी उम्मत में से बहुत से दूसरे लोग भी इस अल्लाह की विशेषता में

भागीदार हैं। अतएवं बरेलवीयों के इमाम अहमद रज़ा साहब बरेलवी नक़ल करते हैं-

"क़ियामत कब आएगी ? वर्षा कब होगी ? कब, कहाँ, कितनी होगी? मादा के पेट में क्या है ? कल क्या होगा ? कौन कहाँ मरेगा ? ये पाँचों ग़ैब की बातें नबी सल्ल० से पोशीदा नहीं हैं और नबी सल्ल० से किस तरह छिपी रह सकती हैं यद्यपि नबी की उम्मत से सातों कुतुब इन (बातों) को जानते हैं और इनका दर्जा ग़ौस के नीचे है तो फिर ग़ौस का क्या कहना। फिर इनका क्या पूछना जो सब अगले पिछले सारे जहान के सरदार और हर चीज़ के सबब हैं और हर चीज़ उन्हीं से है।"

(ख़ालिसुल एतिक़ाद-53-54)

आगे और सुनिए और अन्दाज़ा लगाइए कि शैतान से स्पष्ट कुरआनी आयतों के मुक़ाबले में इनको देखने व सोचने समझने से किस प्रकार वंचित कर रखा है। ये लोग शैतान की पैरवी को दीन का नाम देकर स्वयं भी गुमराही की दल दल में फंसे हुए हैं और सीधे सादे लोगों की गुमराही का भी कारण बने हुए हैं। आगे इर्शाद फ़रमाते हैं-

"इन पाँचों छिपी बातों का मामला नबी सल्ल० पर क्यों छुपा है जबकि हुज़ूर सल्ल० की उम्मत में कोई साहिबे तसर्रूफ़, तसर्रूफ़ नहीं कर सकता जब तक कि इन पाँचों को न जाने तो ऐ इन्कार करने वालो उनके कलाम को सुनो और औलिया उल्लाह को न झुठलाओ।"

(ख़ालिसुल एतिक़ाद-54)

देखिए--कहते हैं कि नबी सल्ल० परोक्ष का ज्ञान रखते हैं और इस

की दलील न कुरआनी आयत, न हदीसे नबवी, बल्कि दलील और हुज्जत केवल यह है कि औलिया-ए-किराम को ग़ैब का इल्म है और चूंकि औलिया ग़ैब का ज्ञान जानते हैं इसलिए नबी सल्ल० भी परोक्ष के ज्ञानी हैं ये है वे दलीलें जिनपर इन के अक़ीदों की इमारत खड़ी है।

एक और दलील सुनिए-

"हमने ऐसी जमाअतों को देखा कि जिन्होंने यह जान लिया कि कहाँ मरेंगे और गर्भ की हालत में और इससे पहले यह मालूम कर लिया कि औरत के पेट में क्या है लड़का या लड़की ? कहिए अब भी आयत के अर्थ मालूम हुए या कुछ शंका बाक़ी है।" (अल कलिमतुल अुलियामुरादाबादी-35)

यद्यपि कुरआन की आयत में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि इन छिपी बातों को अल्लाह के अलावा कोई नहीं जानता मगर चूंकि बरेलवी हज़रात में ऐसे पहुँचे हुए बुजुर्ग अल्लाह वाले मौजूद हैं जिनको इन बातों का पहले से इल्म हो जाता है अत: बिना किसी संकोच यह जानना पड़ेगा कि परोक्ष का ज्ञान ग़ैरूल्लाह को भी है इस अक़ीदे के लिए यदि कुरआनी भाव में परिवर्तन भी करना पड़े तो बरेलवी मज़हब में यह जाइज़ है।

ख़ौफ़े खुदा-ए पाक दिलों से निकल गया
आँखों से शर्म सर्वरे कोनो मकां गयी

इन स्पष्ट दलीलों के बाद यदि आपको अब भी संकोच है तो एक दलील सुन लीजिए। बरेलवियत के एक इमाम नक़ल करते हैं-

"मैंने औलिया से यह बहुत सुना है कि कल वर्षा होगी या रात को

तो हो जाती है अर्थात उस दिन जिस दिन की उन्होंने ख़बर दी। मैंने कुछ औलिया से यह भी सुना है कि उन्होंने मां के पेट की ख़बर दी कि लड़का है या लड़की और मैंने अपनी आँखों से देख लिया कि उन्होंने जैसी ख़बर दी वैसा ही हुआ।" (अल कलिमतुल अुलिया-94-95)

यदि अब भी कोई संदेह शेष है तो एक हिकायत और सुन लीजिए ताकि कुरआनी आयतों और नबी सल्ल० की शिक्षाओं के अध्ययन के बाद आपके अक़ीदों में जो बिगाड़ पैदा हो गया है उसका सुधार हो जाए। अहमद रज़ा बरेलवी लिखते हैं-

"एक दिन शेख़ मकारिम रज़ि० ने कहा-शीघ्र ही यहाँ तीन व्यक्ति आएंगे और वे यहीं मरेंगे। फ़लां इस तरह और फ़लां इस तरह। थोड़ी देर गुज़री थी कि तीनों लोग आ गए और फिर उनकी मौत भी वहीं हो गयी और जिस तरह उन्होंने बयान की थी उसी तरह हुई।"

(अद दौलतुल मक्किया-164)

ये हैं उनकी बे तुकी मनगढ़त दलीलें जिनको न मानना औलिया का अपमान करना है और खुले झूठ से काम लेते हुए जनाब अहमद रज़ा बरेलवी शेख़ जीलानी रहिम० की ओर झूठ गढ़ते हुए लिखते हैं कि आप अक्सर फ़रमाया करते थे-

सूरज उदय नहीं होता जब तक मुझे सलाम न करे नया साल जब आता है मुझे सलाम करता और ख़बर देता है जो कुछ उसमें होने वाला है नया हफ़ता आता है मुझे सलाम करता और मुझे ख़बर देता है जो कुछ भी उसमें होने वाला है नया दिन जो आता है मुझ पर सलाम करता

है और मुझे ख़बर देता है जो कुछ उसमें होने वाला है मुझे अपने रब की इज़्ज़त की क़सम कि सब नेक व बद मुझ पर पेश किए जाते हैं मेरी आँख लौहे महफ़ूज़ पर लगी है अर्थात लौहे महफ़ूज़ मेरे सामने है तो अल्लाह अज़्ज़-जल के इल्म व मुशाहिदे से दरियाओं में डूबा हुआ हूँ। मैं तो सब पर मुहब्बते इलाही हूँ और नबी सल्ल॰ का नाइब और उनका वारिस हूँ।" (ख़ालिसतुल एतिक़ाद बरेलवी-49 कलिमतुल अुलिया-67)

झूठ व बकवास की एक और मिसाल देखिए-

"हुज़ूर पुर नूर सय्यदना ग़ौस पाक रज़ि॰ फ़रमाते हैं यदि मेरी ज़बान पर शरीअत की नोक न होती तो मैं तुम्हें ख़बर देता जो कुछ तुम खाते और जो कुछ अपने घरों में जमा करके रखते हो। तुम मेरे सामने शीशे की तरह हो मैं तुम्हारा खुला व छुपा देख रहा हूँ।"

(ख़ालिसुल एतिक़ाद-49)

बरेलवियत का एक अनुयायी कहता है-

दिलों के इरादे तुम्हारी नज़र में

अयां तुम पे सब बेशो कम ग़ौस आज़म

(बाग़े फ़िरदौस-40)

परोक्ष का ज्ञान कुछ औलिया तक ही सीमित नहीं बल्कि सारे पीर मशाइख़ इस में शामिल हैं अतएवं इर्शाद होता है-

"आदमी कामिल नहीं होता जब तक उसे अपने मुरीद की हरकतें उसके बाप दादा की पीठ में न मालूम हों अर्थात जब तक यह न मालूम करे कि अनादि काल से किस किस पीठ में ठहरा और उसने किस समय

हरकत की यहाँ तक कि उसके जन्नत या जहन्नम में जाने तक के हालात जाने।" (जाअल हक़-87, कलिमलुत अुलिया-79)

जनाब अहमद रज़ा बरेलवी को सुनिए-लिखते हैं-

"कामिल का दिल तमाम आलम अुलवी व सुफ़ली विस्तार पूर्वक दर्पण है।"

(ख़ालिसुल एतिक़ाद बरेलवी-51)

अर्थात मर्द कामिल दुनिया व आख़िरत के समस्त घटनाओं व जाइज़ों की विस्तार में जानकारी रखता है। ज़मीन व आसमान में घटने वाली घटनाएं उसकी नज़रों से ओझल नहीं होती उसे हर खुली व छुपी बात का पता होता है।

खुदा के वास्ते ज़रा सोचिए क्या यह अक़ीदा इस्लामी अक़ीदा कहला सकता है ? कितने दुख की बात है कि इस तरह की बकवास व खुराफ़ात का प्रचार करके मुसलमानों को गुमराह करने वाले अपने आप पर इल्म व मारफ़त का लेबल लगाने में ज़रा सी भी लज्जा महसूस नहीं करते।

आगे लिखा जाता है-

"मर्द वह नहीं जिसे अर्श और जो कुछ उसके घेरे में है आसमान व ज़मीन, जन्नत व जहन्नम ये चीज़ें सीमित व क़ैद कर लें। मर्द वह है जिसकी नज़र समस्त सृष्टि के पार गुज़र जाए अर्थात पूर्ण परोक्ष के ज्ञान की प्राप्त के बिना कोई व्यक्ति वली युल्लाह नहीं हो सकता।"

आगे और सुनिए-

"सातों आसमान और ज़मीनें मोमिन कामिल की निगाह में ऐसे हैं

जैसे एक चटियल मैदान में एक छल्ला पड़ा हुआ है।"

(ख़ालिसुल एतिक़ाद-52)

एक और बरेलवी इस प्रकार इर्शाद फ़रमाते हैं-

"कामिल बन्दा चीज़ों की हक़ीक़तों पर बा ख़बर हो जाता है और उस पर ग़ैब और ग़ैबुल ग़ैब खुल जाते हैं।" (जाअल हक़-85)

ग़ैबुल ग़ैब से क्या तात्पर्य है यह तो बरेलवियत के विद्वान ही बता सकते हैं। इसके अलावा बहुत सी हिकायतें व कहानियां भी इनकी किताबों में मिलती हैं जिनसे तर्क देते हैं कि औलिया से कोई भी बात या चीज़ छुपी नहीं है उनको हर छोटी बड़ी बात का पता है हम इनमें से कुछ हिकायतें एक अलग अध्याय में जमा करेंगे। ऐसी घटनाओं से भी इनकी किताबें भरी पड़ी हैं जिनसे साबित होता है कि औलिया के जानवरों को भी ग़ैब का इल्म है।

अल्लाह तआला हमें इन समस्त खुराफ़ात और शिर्क जैसे अक़ीदों से बचाए रखे (आमीन)

जहाँ तक किताब व सुन्नत का संबन्ध है उनमें स्पष्ट रूप से इस तरह के अक़ीदे का खंडन किया गया है।

अल्लाह का इर्शाद है-

व लिल्लाहि ग़ैबुस्समावाति वल अर्ज़ि वमा अमरूस्सा अति इल्ला कलम्हिल ब-सरि अव हुवा अक़रबु इन्नल्लाहा अला कुल्लि शैइन क़दीर। (नहल-170)

"और अल्लाह ही के लिए (ख़ास हैं) आसमानों और ज़मीनों की पोशीदा बातें और क़ियामत का मामला भी ऐसा होगा जैसे आँख का झपकना बल्कि इससे भी जल्द बेशक अल्लाह हर चीज़ पर समर्थ है।"

(नहल-170)

इन्नल्लाहा आलिमुल ग़ैबिस्समा वाति वल अर्ज़ि इन्नहू अलीमुम बि-ज़ातिस्सुदूरि॰ (कहफ़-38)

बेशक अल्लाह जानने वाला है आसमानों और ज़मीन की छिपी चीज़ों का बेशक वही जानने वाला है दिलों की बातों का।"

यअ्लमु मा बय्ना अय्दीहिम वमा ख़ल्फ़हुम वला युहीतूना बिही अिल्मा॰ (ताहा-110)

"वह सबके अगले पिछले हालात को जानता है और (लोग) उसका (अपने) इल्म से इहाता नहीं कर सकते।" (ताहा-110)

और अल्लाह ने अपने नबी को हुक्म फ़रमाया कि लोगों को बता दें-

कुल ला अम्लिकु लिनफ़्सि नफ़्अंव्वला ज़र्रन इल्ला माशा अल्लाहु व लव कुन्तु अअ्लमुल ग़ैबा लस तकसर्तु मिनल ख़ैरि-वमा मस्स-नियस्सूउ इन अना इल्ला नज़ीरूंव्वबशीरून लिक़व मियंयूमिनून॰ (आराफ़-188)

"आप कह दीजिए कि मैं अपनी ही ज़ात के लिए किसी लाभ का

इख़्तियार नहीं रखता और न किसी हानि का, मगर उतना ही जितना अल्लाह चाहे। यदि मैं ग़ैब को जानता रहता तो अपने लिए बहुत से नफ़े हासिल कर लेता और कोई हानि मेरे ऊपर न घटती मैं तो केवल डराने वाला और बशारत देने वाला हूँ उन लोगों को जो ईमान रखते हैं।"

(आराफ़–188)

कुल ला अकूलु लकुम ज़िन्दी ख़ज़ाइनुल्लाहि वला अअ्-लमुल ग़ैबा वला अकूलु लकुम इन्नी म-ल-कुन इन अत्तिबि-उ इल्लामा यूहा इलय्या कुल हल यस्तविल अअ्-मा वल बसीरू अ-फ़-ला-त-त-फ़क्करून०

(अनआम–50)

"आप कह दीजिए कि मैं तुम से यह तो नहीं कहता कि मेरे पास अल्लाह के ख़ज़ानें हैं और न मैं ग़ैब जानता हूँ और न मैं तुम से कहता हूँ कि मैं फ़रिश्ता हूँ मैं बस उस वहयि का अनुसरण करता हूँ जो मेरे पास आती है। आप कहिए कि अन्धा और देखने वाला कहीं समान हो सकते हैं तो क्या तुम ग़ौर नहीं करते ?" (अनआम–50)

अल्लाह तआला अपने नबी को सचेत और मख़्लूक़ को ख़बरदार करते हुए फ़रमाते हैं कि नबी सल्ल० ग़ैब नहीं जानते।

या अय्युहन्नबिय्यु लिमा तुहर्रिमु मा अहल्लल्लाहु ल-क तब्तग़ी मर्ज़ाता अज़्वाजिका वल्लाहु ग़फ़ूर्रुर्रहीम० (तहरीम–1)

ऐ नबी (सल्ल०) जिस वस्तु को अल्लाह ने आपके लिए हलाल किया है उसे आप क्यों हराम कर रहे हैं अपनी पत्नियों की खुशी प्राप्त करने के लिए और अल्लाह बड़ा माफ़ करने वाला व रहम करने वाला है।"

(तहरीम-1)

अल्लाह तआला ने नबी सल्ल० के इल्म ग़ैब का अपने इस फ़रमान में इनकार किया है।

व मिन अहलिल मदीनति म-र-दू अलन्निफ़ाकि़ ला तअ्-ल-मुहुम नह्नु नअ्-लमुहुम० (तौबा-101)

"कुछ मदीने वालों में से (ऐसे) कपटी हैं (कि) कपट में अड़ गए हैं आप (भी) उन्हें नहीं जानते हम ही उन्हें जानते हैं।" (तौबा-101)

अफ़ल्लाहु अन्का लिमा अज़िन्ता लहुम हत्ता य-त-बय्य-न ल-कल्लज़ीना स-द-कू व तअ्-लमल काज़िबीन० (तौबा-43)

"अल्लाह ने आपको माफ़ कर दिया (लेकिन) आपने उनको इजाज़त क्यों दे दी थी जब तक कि आप पर सच्चे लोग ज़ाहिर न हो जाते और झूठों को जान लेते। (तौबा-43)

जिस तरह अल्लाह ने अपने रसूलों से इल्म ग़ैब की नफ़ी की है और इर्शाद फ़रमाया-

अव्मा यज्मअुल्लाहुर्रूसुला फ़-यकूलु माज़ा उजिब्तुम क़ालू लाअिल्मा

लना इन्न-क अन्ता अल्लामुल ग़ुयूबि॰ (माइदा-109)

"जिस दिन अल्लाह पैग़म्बरों को जमा करेगा फिर उनसे पूछेगा कि तुम्हें क्या जवाब मिला था वे कहेंगे कि हमें पता नहीं, छिपी हुई बातों को ठीक से जानने वाला तो बस तूही है।" (माइदा-109)

जैसा कि अल्लाह ने अपने इस कथन में फ़रिश्तों के इल्मे ग़ैब का इन्कार किया-

क़ालू सुब्हा-न-क ला अिल्मा लना इल्लामा अल्लम्तना इन्न-क अन्तल अलीमुल्हकीम॰ (बक़रा-32)

"वे बोले तू पाक है हमें तो कुछ पता नहीं मगर हां वही जो तूने हमें इल्म देदिया बेशक तू ही है बड़ा इल्म वाला हिकमत वाला।

(बक़रा-32)

इस प्रकार अम्बिया व रसूलों की घटनाओं से भी इस बात की खुली दलील कि उनको ग़ैब का इल्म नहीं था और स्वयं पाक जीवनी की घटनाएं भी इस की सबूत हैं जैसे 70 क़ारियों की शहादत की घटना, बैअते रिज़्वान, इफ़्क की घटनाओं पर थोड़ा सा भी सोच विचार कर लेने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि परोक्ष का ज्ञान केवल अल्लाह की ज़ात तक ही सीमित है और उसके इस गुण में कोई नबी व वली उसका शरीक व साझी नहीं है।

लेकिन बरेलवी क़ौम का यह कहना है कि समस्त अम्बिया किराम और बुज़ुर्गाने दीन अल्लाह के इस गुण में उसके साझी हैं और जो यह

अक़ीदा नहीं रखता वह उनका गुस्ताख़ है यहाँ तक कि बरेलवियों ने विभिन्न मन गढ़त घटनाओं से यह साबित करने की कोशिश की है कि अहमद रज़ा को अपनी मौत के समय का पहले से ही पता था।

(वसाया शरीफ़-7)

अम्बिया व औलिया की शान में हद से बढ़ जाना और उनके लिए वे गुण व इख़्तियारात साबित करना जो केवल अल्लाह ही के साथ ख़ास हैं उनका सम्मान नहीं बल्कि क़ुरआन व हदीस से खुला विद्रोह है इसी लिए नबी करीम सल्ल० ने इर्शाद फ़रमाया-

"अल्लाह तआला ने मुझे जो दर्जा प्रदान किया है मेरी ज़ात को उससे न बढ़ाओ।" (अहमद, बैहक़ी)

मेरी ज़ात के बारे में सीमा से आगे बढ़ कर काम न लो जैसा कि ईसाइयों ने हज़रत ईसा अलैहि० के साथ किया है।" (मजमउल फ़वाइद)

और जब मदीना मुनव्वरा में किसी बच्ची ने एक शेअर पढ़ा जिसका अर्थ था "हमारे अन्दर ऐसा नबी मौजूद है जो आने वाले कल के हालात को जानता है तो यह सुनकर नबी सल्ल० ने उसे तुरन्त टोका और उस शेअर को दोबारा दोहराने से मना किया और इर्शाद फ़रमाया-"होने वाली घटनों की ख़बर अल्लाह की ज़ात के सिवा किसी को नहीं।"

(इब्ने माजा)

अब आप ही फ़ैसला कीजिए कि अल्लाह की किताब और नबी सल्ल० की हदीस पाक सच्ची है या ये बरेलवी रहनुमा ? फ़ैसला करने से पूर्व उम्मुल मोमिनीन हज़रत आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा का स्पष्ट और

साफ़ साफ़ इ द भी सुन लीजिए-

आप फ़रमाती हैं-"जो यह कहे कि नबी सल्ल० ग़ैब जानते हैं वह झूठा है ग़ैब का इल्म अल्लाह के सिवा किसी और को नहीं है।"

(बुख़ारी)

कुरआनी आयतों व हदीसों और फिर हज़रत आइशा रज़ि० के इस स्पष्ट इर्शाद के बाद भी यदि कोई व्यक्ति यह अक़ीदा रखे कि न केवल तमाम अम्बिया किराम बल्कि सभी बुज़ुर्गाने दीन भी ग़ैब जानते हैं तो आप ही फ़ैसला करें कि उनका इस्लामी शरीअत से या संबन्ध है ?

नबी की बशरियत का मसला

बरेलवी लोगों के बहुत से ऐसे अक़ीदे हैं जिनका कुरआन व हदीस से कोई वास्ता नाता नहीं इसके बावजूद भी ये लोग स्वयं को अहले सुन्नत कहलाना पसन्द करते हैं और इसमें ज़रा सी भी हिचकिचाहट महसूस नहीं करते। अतएवं उनका अक़ीदा है कि नबी सल्ल० अल्लाह के नूर का हिस्सा हैं ये लोग आपको इन्सानियत के दाइरे से बाहर करके नूरी मख़लूक़ में दाख़िल कर देते हैं।

यह अक़्ल से अलग समझ से दूर एक अक़ीदा है और आम आदमी के सोच व समझ से परे है। इस्लामी शरीअत सादा और सरलता से समझ में आने वाली शरीअत है इस प्रकार की उलझी हुई और अक़्ल से हटी हुई बातों का उससे कोई संबन्ध नहीं है। अत: कुरआनी आयतों में इस बात की व्याख्या मौजूद है कि आप इन्सान थे और इसी प्रकार कुरआन हमें यह भी बताता है कि काफ़िर पहले गुज़रे हुए नबियों व रसूलों की

रिसालत पर जो आपत्तियां उठाते थे उनमें से एक आपत्ति यह भी थी कि वे कहते हैं कि यह किस प्रकार संभव है कि अल्लाह ने किसी इन्सान को अपनी तर्जुमानी के लिए चुन लिया हो और उसके सर पर नुबूवत का ताज रख दिया हो। इस काम के लिए ज़रूरी था कि अल्लाह नूरी मख़लूक़ में से किसी फ़रिश्ते का चयन कर लेता तो मानो नबियों व रसूलों की बशरियत को अल्लाह ने काफ़िरों की हिदायत में रूकावट क़रार दिया है।

साबित हुआ कि यह अक़ीदा रखना कि कोई इन्सान रसूल नहीं हो सकता, काफ़िरों का अक़ीदा था अन्तर केवल इतना है कि काफ़िर कहते थे कि इन्सान होना रिसालत के ख़िलाफ़ है और बरेलवियों के अनुयायी यह अक़ीदा रखते हैं कि रिसालत इन्सान के मनाफ़ी है। बहर हाल इस हद तक दोनों शरीक हैं कि बशरियत व रिसालत का एक जगह जमा होना असंभव है।

अब इस सिलसिले में कुरआन पाक की आयतें देखिऐ-

व मा मनअन्नासा अंय्यूमिनू इज़ जा अहुमुल हुदा इल्ला अन क़ालू अब असल्लाहु ब-श-ररसूला० (बनी इस्राईल-94)

"और नहीं मना किया लोगों को यह कि ईमान लाएं जिस समय आयी उनके पास हिदायत मगर यह कि कहा उन्होंने भेजा अल्लाह ने आदमी को पैग़ाम पहुंचाने वाला।" (बनी इस्राईल-94)

फिर अल्लाह ने उसका अपने इस कथन से खंडन किया-

कुल लव का-न फ़िल अर्ज़ि मलाइकतुन यम्शूना मुत्मइन्नीना ल-नज़्ज़ल्ना अलैहिम मिनस्समाइ म-ल-कर्रसूला क़ालू इन अन्तुम इल्ला ब-श-रूम मिस्लुना तुरीदूना अन तसुद्दूना अम्मा काना यअ्बुदु आबा अना फ़ातूना बिसुल्तानिम मुबीन०

"कह यदि होते बीच ज़मीन के फ़रिश्ते चला करते आराम से अलबत्ता उतारते हम ऊपर उनके आसमान से फ़रिश्ते को पैग़ाम पहुंचाने वाला कहा उन्होंने नहीं तुम, मगर आदमी हमारी तरह इरादा करते हो तुम यह कि, बन्द करो हम को उस चीज़ से कि थे इबादत करते बाप हमारे तो ले आओ हमारे पास खुली दलील।"

पैग़म्बरों ने अपनी बशरियत का सबूत देते हुए उनका खंडन किया-

"उनके रसूलों ने (इसके जवाब में) कहा कि हम भी तुम्हारे जैसे आदमी ही हैं लेकिन अल्लाह अपने बन्दों में से जिस पर चाहे एहसान करे। (इब्राहीम-11)

जिस तरह कि अल्लाह ने अन्ताकिया वालों के बारे में हिकायत बयान फ़रमायी है-

वज़रिब लहुम म-स-लन अस्हाबल क़र्यति इज़ जा अहल मुर्सलून० इज़ अर्सल्ना इलय्हिमुस्नय्नि फ़कज़्ज़बूहुमा फ़अज़ज़्ना बिसालिसिन

फ़-क़ालू इन्ना इलयकुम मुर्सलून॰ क़ालूमा अन्तुम इल्ला ब-श-रूम मिसलुना॰ (यासीन-13-15)

"और आप उनके सामने एक क़िस्सा अर्थात एक बसती वालों का क़िस्सा उस समय का बयान कीजिए जबकि उस बसती में कई रसूल आए अर्थात जब हमने उनके पास (पहले) दो को भेजा तो उन लोगों ने (पहले) दोनों को झूठा बताया फिर तीसरे (रसूल) से पुष्टि की तो उन तीनों ने कहा कि हम तुम्हारे पास भेजे गए हैं उन लोगों ने कहा तुम तो हमारी तरह मामूली आदमी हो।" (यासीन-13-15)

फिर अल्लाह तआला ने फ़िरऔन और उसके लश्कर की हिकायत बयान फ़रमायी-

सुम्मा अर्सल्ना मूसा व अख़ाहु हारूना बि आयातिना व सुल्तानिम मुबीन॰ इला फ़िर औना व अलाइही मस्तक्बरू व कानू क़ौमन आलीन॰ फ़क़ालू अअ्-मिनु लिब्र-श-रय्नि मिस्लिना॰

(मोमिनून-45-46-47)

फ़ क़ालल म-ल-उल्लज़ीना क-फ़रू मिन क़व्मिही मा हाज़ा इल्ला ब-शं-रूम मिस्लुकुम युरीदू अय्य-त-फ़ज़्ज़-ल अलयकुम व लव शाअल्लाहु ल अन्ज़-ल मलाइ-कतुम मा समिअ्ना बिहाज़ा-फ़ी आ बाइनल अव्वलीन॰ इन हुवा इल्ला रजुलुन बिही जिन्नतुन फ़-त-रब्बसू बिही हत्ता हीन॰

(मोमिनून-24-25)

"तो उनकी क़ौम में जो काफ़िर रईस थे वे कहने लगे कि यह व्यक्ति सिवाए इसके कि तुम्हारी तरह का एक (मामूली) आदमी है और कुछ नहीं इसका मतलब यह है कि तुमसे बरतर होकर रहे और अल्लाह को (रसूल भेजना) मन्जूर होता तो फ़रिश्तों को भेजता। हमने यह बात अपने पहले बड़ों में नहीं सुनी। बस यह एक आदमी है जिसे जुनून हो गया है तो एक ख़ास वक़्त तक उसकी हालत का इन्तिज़ार करो।

(मोमिनून-24-25)

मा हाज़ा इल्ला ब-श-रूम मिस्लुकुम याकुलु मिम्मा ताकुलूना मिन्हु व यश्रबु मिम्मा तश्रबून॰ व लइन अतअ्तुम ब-श-रम मिस्लुकुम इन्नकुम इज़ल्लख़ासिरून॰ (मोमिनून-33-34)

"बस यह तो तुम्हारी तरह एक (मामूली) आदमी है (अतएवं) ये वही खाते हैं जो तुम खाते हो और वही पीते हैं जो तुम पीते हो और यदि तुम अपने जैसे एक (मामूली) आदमी के कहने पर चलने लगे तो बेशक तुम घाटे में हो।" (मोमिनून-33-34)

और ऐका वालों ने भी हज़रत शुऐब अलैहि॰ को इस तरह कहा था-

व मा अन्ता इल्ला ब-श-रूम मिस्लुना व इन्नजुन्न-क-ल मिनल काज़िबीन॰ (शोअ्रा-186)

"और तुम भी क्या हो सिवाए हमारे ही जैसे एक आदमी के और

हम तुम को झूठों में समझते हैं।" (शोअ्रा-186)

और मक्का के काफ़िरों ने भी इसी तरह नबी सल्ल० को कहा था

व असर्सन नज्वल्लज़ी ज़लमू इन हाज़ा इल्ला ब-श-रूम मिसलुकुम अ-फ़-तातूनस्सिह्रा व अन्तुम तुब सिरून०   (अम्बिया-3)

"और ये लोग अर्थात ज़ालिम लोग (और काफ़िर) चुपके चुपके कानाफूसी करते हैं कि यह (नबी सल्ल०) केवल तुम जैसे एक आदमी हैं तो क्या तुम फिर भी जादू (की बात) सुनने को उनके पास जाओगे जबकि तुम जानते हो।"   (अम्बिया-3)

अल्लाह तआला ने उनको अपने इस फ़रमान के साथ जवाब दिया-

व मा अर्सल्ना क़ब ल-क इल्ला रिजालन्नूही इलैहिम फ़स्अलू अह्लज़्ज़िक्रि इन कुन्तुम ला तअ्-लमून० (अम्बिया-7)

"और हमने आपसे पहले केवल आदमियों ही को पैग़म्बर बनाया जिनके पास हम वहयि भेजा करते थे तो (ऐ इन्कार करने वालो) यदि तुम को (यह बात) मालूम न हो किताब वालों से मालूम कर लो।"

(अम्बिया-7)

अल्लाह ने नबी अकरम सल्ल० को हुक्म दिया कि आप लोगों से कहें-

कुल इन्नमा अना ब-श-रूम मिसलुकुम यूहा इलय्या अन्नमा इलाहुकुम

इलाहुंव्वाहिद० (कहफ़-110)

"आप कह दीजिए कि मैं तो बस तुम्हारे ही जैसा इन्सान हूँ मेरे पास तो बस यह वहयि आती है कि तुम्हारा माबूद एक ही माबूद है।"

(कहफ़-110)

कुल सुबहाना रब्बी हल कुन्तु इल्ला ब-श-र्रसूला०

"आप कह दीजिए कि पाक है अल्लाह मैं केवल एक आदमी (और) रसूल के और क्या हूँ।" (बनी इस्राईल-93)

लक़द मन्नल्लाहु अलल मोमिनीना इज़ ब-अ-स फ़ीहिम रसूलम मिन अन्फुसिहिम०

"हक़ीक़त में अल्लाह ने (बड़ा) एहसान किया जबकि उन्हीं में से एक पैग़म्बर उन में भेजा बेशक तुम्हारे पास एक पैग़म्बर तुम में से ही आए हैं।" (आले इमरान-164)

कमा अर्मल्ना फ़ीकुम रसूलम मिन्कुम यत्लू अलय्कुम आयातिना०

(बक़रा-151)

इस मसले में उम्मुल मोमिनीन हज़रत आइशा रज़ि यल्लाहु अन्हा का फ़ैसला भी सुन लीजिए-

"नबी सल्ल० बशर के सिवा कोई दूसरी मख़्लूक़ न थे अपने कपड़े धोते अपनी बकरी का दूध दुहते और अपनी सेवा आप करते थे।"

(तिर्मिज़ी)

और स्वयं बरेलवियों के ख़ान साहब ने भी अपनी किताब में एक रिवायत दर्ज की है कि नबी सल्ल० ने फ़रमाया-

"हर व्यक्ति की नाभि में उस मिट्टी का कुछ हिस्सा मौजूद है जिससे उसकी रचना हुई है और उसी में वह दफ़न होगा और मैं अबू बकर और उमर एक मिट्टी से पैदा किए गए हैं और उसी में दफ़न होंगे।"

(फ़तावा अफ़्रीक़ा-85)

ये हैं कुरआनी शिक्षाएं और नबी के कथन। इन्कारियों के अक़ीदों के बिल्कुल विपरीत। बरेलवी अम्बिया व रसूलों की नुबूवत व रिसालत का इनकार तो न कर सके मगर उन्होंने काफ़िरों व मुश्रिकों का अनुसरण करके उनके इन्सान होने से इन्कार कर दिया यद्यपि इन्सानियत को रिसालत के योग्य न समझना इन्सानियत का अपमान है और इस अक़ीदे के बाद इन्सान के सबसे सर्व श्रेष्ठ जीव से उच्च भी हो और फिर उसमें नुबूवत व रिसालत की योग्यता भी मौजूद न हो मगर बरेलवियत चूंकि ऐसी भिन्न भिन्न विचार धारा और अप्ताकृतिक अक़ीदों के संग्रहों का नाम है जिन्हें समझना आम इन्सान के त्रम से बाहर है इसलिए उसके अनुयायियों के यहाँ उस तरह के अक़ीदे अधिकांश मिलेंगे।

इन अक़ीदों में से एक अक़ीदा यह भी है कि यह नबी अकरम सल्ल० को नूरे खुदा वन्दी का हिस्सा समझते हैं अतएव बरेलवियत के एक इमाम लिखते हैं-

"रसूल अल्लाह के नूर से हैं और सारी मख़्लूक़ आपके नूर से है।"

आगे लिखते हैं-   (मवाइज़े नईमिया-14)

"बे शक अल्लाह ज़ाते करीम ने सूरते मुहम्मदी को अपने नाम पाक, और क़ादिरे बेबाक और करोड़ों साल ज़ाते करीम इसी सूरतेमुहम्मदी को देखता रहा अपने इस्म मुबारक मन्नान और क़ाहिर से फिर तजल्ली फ़रमायी इसपर अपने इस्म पाक लतीफ़ ग़ाफ़िर से।"

(फ़तावा नईमिया-37)

स्वयं बरेलवियत के संस्थापक ने नबी सल्ल० की बशरियत से इन्कार में बहुत सी किताबें लिखी हैं इनमें से एक किताब का नाम है "सलातुस्सिफ़ाति फ़ी नुरिल मुस्तफ़ा" इसे उन्होंने अरबी में लिखा है जिसकी शैली बड़ी अजीब और न समझ में आने वाली है इसका अनुवाद कुछ इस तरह है-

"ऐ अल्लाह तेरे लिए सारी प्रशंसाएं हैं तू नूरों का नूर है सब-नूरों से पहले नूर सब नूरों के बाद नूर। ऐ वह ज़ात जिसके लिए नूर है जिसके साथ नूर है जिससे नूर है जिसकी ओर नूर है और जो स्वयं नूर है दरूद व सलामती और बरकतें उतार अपने रोशन नूर पर जिसे तूने अपने नूर से पैदा किया है और फिर उसके नूर से सारी मख़लूक़ को पैदा किया है और सलामती फ़रमा उसके नूर की किरनों पर उसकी सन्तान पर असहाब पर और उसके चाँदों पर।"   (सलातुस्सफ़ा-23)

इस ग़ैर मन्तिक़ी और उलझी हुई लेखनीय के बाद उन्होंने एक कमज़ोर और गढ़ी हुई रिवायत से दलील देने का प्रयास किया।

हाफ़िज़ अब्दुर्रज़्ज़ाक़ की ओर मन्सूब करते हुए लिखते हैं कि उन्होंने

लेखक अब्दुर्रज़ाक़ में रसूलुल्लाह सल्ल० की हदीस बयान की--कि--

"नबी सल्ल० ने फ़रमाया हज़रत जाबिर रज़ि० से –ऐ जाबिर ! बेशक अल्लाह ने तमाम जीवों से पहले तेरे नबी सल्ल० का नूर अपने नूरे कुदरत इलाही से जहाँ खुदा ने चाहा दौरा करता रहा उस समय लोह व क़लम, जन्नत व जहन्नम, फ़रिश्ते, आसमान ज़मीन, सूरज, चाँद, जिन्न, आदमी कुछ न था फिर जब अल्लाह तआला ने जीव को पैदा करना चाहा तो नूर के चार भाग किए। पहले से क़लम, दूसरे से लौह, तीसरे से अर्श बनाया फिर चौथे के चार हिस्से किए।" (अलहदीस)

यह कमज़ोर हदीस बयान करने के बाद लिखते हैं-

"इस हदीस को उम्मत ने कुबूल कर लिया है और उम्मत का कुबूल कर लेना वह महान चीज़ है जिसके बाद किसी सनद की ज़रूरत नहीं रहती बल्कि सनद कमज़ोर भी हो तो कोई हरज की बात नहीं।"

(रिसालतुस्सफ़ा)

ख़ान साहब बरेलवी इस उम्मत से कौन सी उम्मत मुराद ले रहे हैं? यदि इससे मुराद ख़ान साहब जैसे लोगों (जो गुमराही का शिकार हैं) की उम्मत है तो कोई बात नहीं और उनकी इससे यदि मुराद उलमा व माहिरीने हदीस हैं तो उनके बारे में तो साबित नहीं होता कि उन्होंने इस हदीस को कुबूल किया हो और फिर यह किसने कहा है कि उम्मत के किसी हदीस को कुबूल कर लेने से उस की सनद देखने की ज़रूरत नहीं रहती।

और यह रिवायत तो कुरआनी आयतों और हदीसों के विरूद्ध है और

फिर सारी घटनाएं व वाक़ेआत इस ग़ैर इस्लामी व ग़ैर अक़्ली दृष्टिकोण का खंडन करते हैं इसलिए कि नबी सल्ल० दूसरे इन्सानों की तरह अपने बाबा अब्दुल्लाह बिन अब्दुल मुत्तलिब के घर पैदा हुए। अपनी वालिदा आमना की गोद में पले, हलीमा सादिया का दूध पिया और अबू तालिब के घर पले बढ़े। हज़रत ख़दीज़ा रज़ियल्लाहु अन्हा, हज़रत ज़ैनब और हज़रत हफ़सा रज़ियल्लाहु अन्हा और दूसरी पाक पत्नियों से शादी की। फिर मक्का मुकर्रमा में आपने जवानी के दिन गुज़ारे। मदीना मुनव्वरा हिजरत की। आपके यहाँ बेटों इब्राहीम, क़ासिम, तय्यब और ताहिर बेटियों में ज़ैनब, रूक़य्या, उम्मे कुलसूम और फ़ातिमा पैदा हुईं। हज़रत अबु बकर, हज़रत उमर हज़रत अबु सुफ़ियान आपके ससुर थे। हज़रत अबुल आस, हज़रत उसमान और हज़रत अली आपके दामाद थे। हज़रत हमज़ा और हज़रत अब्बास रज़ि० आपके चचा थे हज़रत सफ़िया और हज़रत अर्वी रज़ियल्लाहु अन्हा आपकी फूफियां थीं और दूसरे रिश्ते नाते वाले भी थे।

इन सारी बातों के बावजूद आपकी बशरियत और आपके इन्सान होने से इन्कार कितनी अजीब और कितनी ग़ैर मन्तिक़ी बात है ? क्या मज़हबे इस्लाम इतना विरोधा भास और ग़ैर अक़्ल वाला धर्म है क्या ऐसे विरोधाभास अक़ीदों का नाम ही इस्लाम है ? इन दृष्टिकोणों व अक़ीदों की ओर दावत देकर आप ग़ैर मुस्लिमों को किस तरह विश्वास दिला सकेंगे ? क्या ये अक़ीदे दीन इस्लाम के प्रचार व प्रसार में बाधा नहीं बनेंगे ? अल्लाह के वास्ते कुछ तो सोचिए।

असल में बरेलवियत अज्ञानता का भंडार होने के साथ साथ इस अक़ीदे में शिआ और असत्य धर्मों से प्रभावित नज़र आती है। अजीब अजीब तावीलें और पुनर्जन्म के अक़ीदे यहूदियत व यूनानी दर्शन शास्त्र से बातिनी मज़हब और फिर वहाँ से सन्यास वाद और बरेलवियत की ओर परिवर्तित हुए हैं। अब इन लोगों की बक्वास सुनिए-नबी करीम सल्ल० के बारे में लिखते हैं-

"आदम, हव्वा जिन्न व इन्सान, अर्श न कुर्सी, हर चीज़ मुहम्मद के नूर का ही भाग है।" (दीवान दीदार अली-41)

जनाब बरेलवी फ़रमाते हैं-

फ़रिश्ते आप ही के नूर से पैदा हुए हैं क्योंकि नबी सल्ल० फ़रमाते हैं अल्लाह ने हर चीज़ मेरे ही नूर से पैदा फ़रमायी।"

(सलातुस्सफ़ा-37)

आगे लिखते हैं-

"मर्तबा ईजाद में केवल एक ज़ात मुस्तफ़ा है शेष सब उसके प्रतिबिम्ब का फ़ैज। वजूद मर्तबा हर ओर नूर अहमद आफ़ताब है और सारा जगत उसके आइने और मर्तबा तकवीन में नूर अहमदी आफ़ताब और सारा जहाँ उसके आबगीने।" (सलातुस्सफ़ा बरेलवी-27)

इस वाक्य का एक एक शब्द पुकार कर कह रहा है कि यह अक़ीदा यूनानी पर्शनशास्त्र और बातनीयत से लिया गया है और वहदतुल वजूद की एक सूरत है उसका इस्लाम से तो कम से कम कोई संबन्ध नहीं है।

जनाब बरेलवि का एक और उलझा हुआ वाक्य देखिए-

"यह सारी सृष्टि नूरे मुहम्मदी (सल्ल०) का प्रारंभिक वजूद में मोहताज थी कि वह न होता तो कुछ भी न बनता। इसी तरह हर वस्तु अपने जीवन में उसकी मोहताज है आज उसका क़दम बीच से निकाल लें तो यह सारी काइनात तुरन्त समाप्त हो जाए। वे जो न थे तो कुछ न था वे जो न हों तो कुछ न हो।" (सलातुस्सफ़ा बरेलवी-37)

अनुमान लगाइए इस प्रकार के अक़ीदे कुरआनी धारणा से कितनी दूर हैं। कुरआन की किसी आयत में भी इस प्रकार के दृष्टिकोण व धारणाओं का वजूद नहीं है मगर इस प्रकार के अक़ीदों को यदि निकाल लें तो बरेलवियत यकायक समाप्त ही हो जाए।

अहमद रज़ा ख़ां साहब बरेलवी अपने एक और रिसाले के खुत्बे में लिखते हैं-

"सारी प्रशंसाएं उस ज़ात के लिए हैं जिसने सारी वस्तुओं से पूर्व हमारे नबी का नूर पैदा फ़रमाया। फिर अनवार के स्थान आपके आगमन की किरनों से पैदा किए आप सल्ल० नूरों के नूर हैं। तमाम सूरज और चाँद आप से रोशनी हासिल करते हैं इसी लिए अल्लाह ने आपका नाम नूर और सिराजे मुनीर रखा है। यदि आप न होते तो सूरज रोशन न होता, दिन रात की तमीज़ न हो सकती और न ही नमाज़ के समयों का पता चलता।" (मजमूआ रसाइल-199)

देखिए किस प्रकार शब्दों की जादूगरी को अक़ीदों की बुनियाद बनाया गया है। आगे लिखते हैं-

"आपका साया ज़मीन पर न पड़ता था और आप केवल एक नूर थे

जब आप धूप या चाँदनी में चलते आपका साया नज़र न आता था।"

(मजमूआ रसाइल-202)

अब लगे हाथों इनके अशआर भी सुनते जाइए-

तू है साया नूर का हर अज़्व टूकड़ा नूर का

साया का साया न होता है न साया नूर का

तेरी नस्ल पाक में है बच्चा बच्चा नूर का

तू है ऐन नूर तेरा सब घराना नूर का

(मजमूआ रसाइल-264)

अर्थात न केवल यह कि नबी मोहतरम सल्ल० की बशरियत से इन्कार किया बल्कि आपकी सारी सन्तान को नूरी मख़लूक़ क़रार दे दिया। इसी प्रकार के बातिनी अक़ीदों के कारण उनके अन्दर अक़ीदा आवा गवन पैदा हो गया और इसी आधार पर ये लोग यहूद व नसारा के अक़ीदों को इस्लामी अक़ीदों में दाख़िल करके इस्लाम का उपहास उड़ाने के अपराधी हुए अतएवं बरेलवी शाइर कहता है-

वही जो मुस्तवी-ए-अर्श था ख़ुदा होकर

उतर पड़ा है मदीने में मुस्तफ़ा होकर

आप सल्ल० का इन्सानी गुणों से निपुण होने के बावजूद नूर होना किसी भी व्यक्ति की समझ में नहीं आ सकता अतएवं इस दृष्टिकोण के न समझ में आने वाला होने के बावजूद बरेलवी विद्वान लिखते हैं-

"आप सल्ल० के नूर होने की कैफ़ियत अल्लाह ने बयान नहीं की और न ही हम समझ सकते हैं अतः बिना सोचे समझे इसी पर ईमान

लाना फ़र्ज़ है।"   (मनहुवा अहमद रज़ा बरेलवी-39)

अर्थात अक़ल, सोच विचार, सूझ बूझ से काम लेने की कोई ज़रूरत नहीं क्योंकि विचार मनन करने से बरेलवियत की सारी इमारत ध्वस्त होकर रह जाती है। इसे बनाए रखने के लिए सोच विचार पर पाबन्दी ज़रूरी है।

कुरआन की खुली आयतों की तावील करते हुए बरेलवी हज़रात कहते हैं "(कुल) के शब्द से मालूम होता है कि (बशरूम मिस्लुकुम) कहने की हुनूर ही को इजाज़त है।"   (मवाइज़े नईमिया-115)

अब उनसे कौन पूछे कि (कुल) का शब्द तो आयते करीमा (कुल इन्नमा इलाहुकुम इलाहुवं वाहिद) में भी तो है क्या खुदा एक है कहने की इजाज़त आप (सल्ल०) के सिवा किसी को नहीं ?

कहते हैं-"बशर कहना काफ़िरों का कथन है।"

(फ़तावारिज़विया-6-103)

यदि यही बात है तो (खुदा अपनी पनाह में रखे) बुख़ारी शरीफ़ की इस हदीस का क्या मतलब होगा जिसमें हज़रत आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने फ़रमाया है कि हुज़ूर बशर थे। हदीस गुज़र चुकी है। अल्लाह हमें इन गुमराह अक़ीदों व दृष्टिकोणों से बचाये रखे आमीन।

मसला हाज़िर व नाज़िर

पिछले पन्नों में गुज़र चुका है कि बरेलवियत की विचारधारा और दृष्टिकोण व अक़ीदे अक़ल से परे और आम लोगों की समझ से दूर हैं इन्हीं अक़ीदों में से एक अक़ीदा यह है कि बरेलवियत के मानने वाले

कहते हैं कि नबी सल्ल० हर जगह हाज़िर व नाज़िर हैं और एक समय में अपने पाक शरीर सहित कई स्थानों पर मौजूद हो सकते हैं।

यह अक़ीदा न केवल कुरआन व हदीस की खुली मुख़ालिफ़त पर आधारित है बल्कि अक़्ल और सोच विचार से भी परे है। इस्लामी शरीअत इस प्रकार के बेकार और हिन्दुवाने अक़ीदों से बिल्कुल पाक साफ़ है।

बरेलवी अक़ीदा रखते हैं-"कोई स्थान और कोई समय हुज़ूर सल्ल० से ख़ाली नहीं।" (मसला हाज़िर व नाज़िर-85)

आगे इसी किताब में लिखा है-"नबी करीम सल्ल० की पवित्र शक्ति और नुबूवत के नूर से यह काम मुश्किल नहीं कि एक पल में पूर्व व पश्चिम, दक्षिण व उत्तर आकाश व पाताल हर दिशाओं में सरकार अपने पाक वजूद व अपने शरीर के साथ तश्रीफ़ फ़रमा होकर अपने प्रिय उम्मतियों को अपने जमाल की ज़ियारत और निगाहे करम की रहमत व बरकत से सुशोभित कर दें।"

अर्थात एक पल में आप (सल्ल०) का अपने पाक शरीर के साथ असंख्य स्थानों पर मौजूद होना मुश्किल नहीं। यह अक़ीदा किताब व सुन्नत, इस्लामी शरीअत, अल्लाह के फ़रमान व इर्शादात, नुबुवत व अक़्ल व सोच समझ से परे है। हां इमाम बरेलवियत जनाब अहमद रज़ा ख़ां साहब बरेलवी की शरीअत और उनके मन गढ़त फ़लसफ़े में यह काम भले ही मुश्किल न हो तो अलग बात है।

एक बरेलवी अनुयायी नक़्ल करते हैं-"औलिया उल्लाह एक पल में

कुछ स्थानों पर हो सकते हैं और उनके एक साथ कई शरीर हो सकते हैं।"

(जाअल हक़-150)

अर्थात जब औलिया-ए-किराम के लिए यह चीज़ संभव है तो भला नबी सल्ल० से क्यों संभव नहीं।

"हुज़ूर सल्ल० को दुनिया की सैर करने का अपने सहाबा की अर्वाह के साथ इख़्तियार है आपको बहुत से औलिया उल्लाह ने देखा है।"

(जाअल हक़-154)

दावा और दलील दोनों एक ही साथ लिख दिए गए हैं। दावा यह कि नबी सल्ल० सहाबा किराम के साथ विभिन्न स्थानों पर मौजूद हो सकते हैं और दलील यह कि बहुत से औलिया ने उनको देखा है।

आगे लिखते हैं-"अपनी उम्मत के आमाल पर निगाह रखना, उनके लिए गुनाहों से इस्तिग़फ़ार करना, उनसे बलाओं को दूर करना, ज़मीन के चारों ओर आना जाना, उसमें बरकत देना और अपनी उम्मत का कोई नेक आदमी मर जाए तो उसके जनाज़े में जाना यह हुज़ूर सल्ल० का मशग़ला है।" (जाअल हक़-154)

अब जनाब अहमद रज़ा ख़ां का बुज़ुर्गाने किराम के बारे में इर्शाद सुनिए-उनसे पूछा गया कि क्या औलिया एक समय में कुछ जगह हाज़िर होने की ताक़त रखते हैं ? तो जवाब दिया-"यदि वे चाहें तो एक समय में दस हज़ार शहरों में दस हज़ार जगह की दावत क़ुबूल कर सकते हैं।"

(मलफ़ूज़ात-113)

नबी सल्ल० के बारे में लिखते हैं-

"नबी सल्ल० की रूह करीम तमाम दुनिया में हर मुसलमान के घर तश्रीफ़ फ़रमा है।" (ख़ालिसुल एतिक़ाद-40)

जनाब अहमद रज़ा के एक अनुयायी लिखते हैं-

"नबी सल्ल० की पाक निगाह हर समय जगत के कण कण पर है और नमाज़ व तिलावते कुरआन, महफ़िले मीलाद शरीफ़ और नअ़त ख़्वानी की मज्लिसों में इसी तरह नेक लोगों की जनाज़े की नमाज़ में ख़ास तौर पर अपने जिस्म पाक के साथ तश्रीफ़ फ़रमा होते हैं।"

(ख़ालिसुल एतिक़ाद-156)

बरेलवियत के ये अनुयायी आगे चलकर लिखते हैं-

"नबी सल्ल० ने हज़रत आदम का पैदा होना, उनका सम्मान होना और ग़लती पर जन्नत से निकाला जाना और फिर तौबा कुबूल होना, आख़िर तक उनके सारे मामले जो उनपर गुज़रे सबको देखा है और इबलीस की पैदाइश और जो कुछ उस पर गुज़रा उसे भी देखा और जिस समय रूहे मुहम्मदी की तौबा हमेशा के लिए हज़रत आदम से हट गयी तब उनसे भूल व उसके नतीजे हुए।" (जाअल हक़्-155)

अर्थात नबी सल्ल० दुनिया में आने से पहले भी (हाज़िर व नाज़िर) थे। आगे सुनिए-

"अहलुल्लाह कभी कभी जागने की हालत में अपने शरीर की आँखों से हुज़ूर के जमाल को देखते हैं।" (मसला हाज़िर व नाज़िर-18)

एक और जगह लिखते हैं-

"अहले बसीरत नबी सल्ल० को नमाज़ के दौरान में भी देखते हैं।"

(मसला हाज़िर व नाज़िर-16)

आगे नक़ल करते हैं-

नबी अकरम सल्ल० अपने पाक शरीर और पाक रूह के साथ जीवित हैं और बेशक हुज़ूर सल्ल० ज़मीन के इर्द गिर्द और आसमानों में जहाँ चाहते हैं घुमते व तसर्रूफ़ करते हैं और नबी सल्ल० आपकी इस पाक शक्ल के साथ हैं जिस पर वफ़ात से पूर्व थे और नबी सल्ल० की कोई चीज़ बदली नहीं हैं और बेशक नबी करीम सल्ल० ज़ाहिरी आँखों से ग़ाइब कर दिए गए हैं जिस प्रकार फ़रिश्ते ग़ाइब कर दिए गए हैं यद्यपि वे सब अपने शरीर के साथ जीवित हैं। जब अल्लाह अपने किसी बन्दे को नबी सल्ल० का जमाल दिखाकर सम्मान व बुजुर्गी प्रदान करना चाहते हैं तो उससे पर्दे को दूर कर देता है और वह प्रिय बन्दा हुज़ूर को उस शक्ल पर देख लेता है जिसपर हुज़ूर मौजूद हैं। इसके देखने में कोई चीज़ रूकावट नहीं और ऐसा होना मिसाली की ओर कोई अग्रदाओी नहीं।"

(मसला हाज़िर व नाज़िर-18)

जनाब अहमद रज़ा बरेल्वी इर्शाद फ़रमाते हैं-

"कि कृष्ण कनैहा काफ़िर था और एक समय में कई सौ जगह मौजूद हो गया। फ़तह मुहम्मद (किसी बुज़ूर्ग का नाम) यदि कुछ जगह एक समय में हो गया हैरत है क्या सोचते हो कि शेख़ एक जगह थे बाक़ी मिसालें ? हां शेख़ अपने आप में स्वयं हर जगह मौजूद थे बातिन के रहस्य आम सोच व समझ से बाहर हैं इन पर सोच विचार बेजा है।"

(फ़तावा रिज़विया-1-142)

सुबहानल्लाह ! दावे की दलील में न आयत न हदीस दलील है तो यह कि कृष्ण यदि काफ़िर होने के बावजूद कई जगह मौजूद हो सकता है तो क्या औलिया किराम कुछ जगह मौजूद नहीं हो सकते ?

हम पैरवी कैस न फ़रहाद करेंगे
कुछ तर्ज़ जुनूं और ही ईजाद करेंगे

यह अनोखा तर्क का तरीक़ा बरेलवियों ही की विशेषता है। इमाम बरेलवी के इस इर्शाद को भी देखिए-

बातिन के रहस्य आम सोच व समझ से बाहर हैं इन पर सोच विचार बेजा है।"

"यह वह नाज़ुक हक़ीक़त है जो समझाई नहीं जाती"

बरेलवियत के एक अनुयायी लिखते हैं-

"नबी सल्ल० की रिसालत और आदम अलैहि० से लेकर आपके शारीरिक दौर तक की तमाम घटनाओं पर हाज़िर हैं।"

(जाअल हक़-193)

बरेलवियत के इन अक़ीदों का ज़रा अल्लाह के इर्शादों से तुलना कीजिए-अल्लाह का इर्शाद है-

वमा कुन्ता बिजानिबिल ग़रबिय्यि इज़ क़ज़यना इला मूसल अमरा वमा कुन्ता मिनश्शाहिदीना० (क़सस-44)

"और आप (नूर पहाड़ के) पश्चिमी दिशा में मौजूद न थे जब कि

हमने मूसा को अहकाम दिए थे और आप उन लोगों में से न थे जो वहां मौजूद थे। (क़सस-44)

वमा कुन्ता सावियन फ़ी अहलि मदयनातत्लू अलयहिम आयातिना वाला किन्ना कुन्ना मुर्सिलीन० (क़सस-45)

"और न आप मदयन वालों में ठहरे हुए थे कि हमारी आयतें पढ़ कर लोगों को सुना रहे हों लेकिन हम (आप ही को) रसूल बनाने वाले थे।"

(क़सस-45)

वमा कुन्ता बिजानिबित्तूरि इज़ नादयना वला किर्रह्मतम मिर्रब्बिका लितुन्ज़िरा कौमम मा आताहुम मिन नज़ीरिम मिन क़ब्लि-क लअल्लहुम य-त-ज़क्करून० (क़सस-46)

"और आप तूर के पहलू में न उस मसय मौजूद थे जब हमने (मूसा को) आवाज़ दी थी लेकिन अपने रब की रहमत से (नबी बनाए गए) ताकि आप ऐसे लोगों को डराएं जिनके पास आप से पहले कोई डराने वाला नहीं आया ताकि वे लोग नसीहत कुबूल करें।" (क़सस-46)

अल्लाह तआला ने हज़रत मर्यम का क़िस्सा बयान करने के बाद नबी सल्ल० से फ़रमाया-

वमा कुन्ता ल-दय्हिम इज़ युल्कूना अक़्लामहुम अय्युहुम यकफ़ुलु मर्यमा वमा कुन्ता ल-दय्हिम इज़ यख़्तसिमून० (आले इमरान-44)

"और आप उन लोगों के पास न थे उस समय जब वे क़लम डाल रहे थे कि उनमें से कौन मर्यम की सरपरस्ती करे। और न आप उनके पास उस समय थे जब वे आपस में ये मतभेद कर रहे थे।"

(आले इमरान-44)

तिलका मिन अम्बाइल ग़यबि नूहीहि इलय्का मा कुन्ता तअ्-लमुहा अन्ता वला क़व्मुका मिन क़ब्लि हाज़ा फ़स्बिर इन्नल आक़ि-बता लिल्मुत्तक़ीन० (हूद-49)

"यह (क़िस्सा) ग़ैब की ख़बरों से है हमने इसे वहयि द्वारा आप तक पहुँचा दिया। इसे इससे पहले न आप ही जानते थे और न आपकी क़ौम तो सब्र कीजिए निश्चय ही नेक अंजाम परहेज़गारों ही के लिए है।"

(हूद-49)

ज़ालिका मिन अम्बाइल ग़य्बि नूहि इलय्का वमा कुन्ता ल-दय्-हिम इज़ अजमअू अमरहुम वहुम यमकुरून० (यूसफ़-102)

"यह (क़िस्सा) ग़ैब की ख़बरों में से है जिसकी हम आपकी ओर

वह्यि करते हैं और आप उनके पास उस समय मौजूद न थे जब उन्होंने अपना इरादा पक्का कर लिया था और वे चालें चल रहे थे।"
(यूसुफ़-102)

अल्लाह तआला हुज़ूर सल्ल॰ के मस्जिदे हराम से अक़्सा तक जाने का क़िस्सा बयान करते हुए फ़रमाते हैं-

सुबहानल्लज़ी अस्रा बिअब्दिही लय्लम मिनल मस्जिदिल हरामि इलल मस्जिदिल अक़्सल्लज़ी बारक्ना हव्लहु लिनुरियहू मिन आयातिना इन्नहू हुवस्समीअुल बसीरू॰ (बनी इसराईल-1)

वह पाक (ज़ात) है जो अपने बन्दे (नबी सल्ल॰) को रातो रात मस्जिदे हराम (अर्थात काबा श) से मस्जिदे अक़्सा (अर्थात बैतुल मुक़द्दस) तक ले गया जिसके इर्दगिर्द को हमने बरकत वाला बना रखा है ताकि उनको हम कुछ अपने आश्चर्य (कुदरत) दिखाएं बेशक वह सुनने वाला व देखने वाला है। (बनी इसराईल-1)

अल्लाह तआला का इर्शाद है-

इल्ला तन्सुरूहु फ़-क़द न-स-रहुल्लाहु इज़ अख्र-ज-हुल्लज़ीना क-फ़रू सानियस नयनि इज़ हुमा फ़िल ग़ारि इज़ यक़ूलु लिसाहिबिहीला तहज़न इन्नल्लाहा म-अ-ना। (तौबा-40)

"यदि तुम लोग उनकी (रसूलुल्लाह) की मदद न करोगे तो उनकी मदद तो (स्वयं) अल्लाह कर चुका है जबकि काफ़िरों ने उनको वतन से निकाल दिया था जबकि दो में से एक वे थे दोनों खोह में थे जबकि वे अपने साथी से कह रहे थे कि ग़म न करो बेशक अल्लाह हमारे साथ है।"

(तौबा-40)

व-न-स-रकुमुल्लाहु बिबद्‌रिव्ं-अन्तुम अज़िल्लतुन फ़त्तकुल्लाहा लअल्लकुम तश्‌कुरून॰ (आले इमरान-123)

और बे शक अल्लाह ने तुम्हारी मदद की बद्र में यद्यपि तुम पस्त थे तो अल्लाह से डरते रहो ताकि तुम शुक्र करने वाले बन जाओ।"

(आले इम्‌रान-123)

इज़ अन्तुम बिल अुद वतिद दुन्या व हुम बिल अुदवतिल कुसवा वर्रकबु अस फ़-ल मिन्कुम॰ (अन्फ़ाल-42)

"(यह वह समय था) जब तुम (जंग के मैदान के) निकट वाले कनारे पर थे और वे दूर वाले किनारे पर और काफ़िला तुम से नीचे की (दिशा) को था।" (अन्फ़ाल-42)

लक़द रज़ियल्लाहु अनिल मोमिनीना इज़ युबायिअ-न-क तह्‌तश्श-ज-रति॰ (फ़तह-18)

बेशक अल्लाह खुश हुआ उन मुसलमानों पर जबकि वे आपसे बैअत कर रहे थे पेड़ के नीचे।" (फ़तह–18)

ल–तदखुलुन्नल मस्जिदल हरामा इन शाअल्लाह् आमिनीना मुहल्लिक़ीना रूऊ सकुम व मुक़स्सिरीना ला तख़ाफून० (फ़तह–27)

"तुम लोग मस्जिदे हराम में इन्शाअल्लाह अवश्य प्रवेश करोगे शान्ति के साथ सर मुंडाते हुए और बाल कतराते हुए और तुम्हें डर (किसी का भी) न होगा।" (फ़तह–27)

इन आयतों के साथ साथ घटनाएं व तथ्य भी इस अक़ीदे का खंडन करते हैं कि आप सल्ल० हुजरे मुबारक में मौजूद होते थे तो सहाबा किराम रज़ि० आपका मस्जिद में इन्तिज़ार फ़रमाया करते थे अगर आप सल्ल० हाज़िर व नाज़िर थे तो सहाबा का मस्जिद में इन्तिज़ार करना क्या अर्थ रखता है ?

इसी तरह जब आप मदीना में थे तो हुनैन में आपका वजूद न था आप तबूक में थे तो मदीने में आप मौजूद न थे और जब अरफ़ात में थे तो न मक्का में आपका वजूद था न मदीना मुनव्वरा में।

मगर बरेलवी हज़रात इन तमाम आयतों घटनाओं और तथ्यों से आँखे चुराते हुए अक़ीदा रखते हैं कि–"नबी सल्ल० हर पल हर स्थान पर हाज़िर व नाज़िर हैं।" (मसला हाज़िर व नाज़िर–5)

"नबी सल्ल० अल्लाह तआला को भी जानते हैं और सारी मख़्लूक़ व मौजूद चीज़ों व उनके हालात को भी जानते हैं। अतीत, वर्तमान और

भविष्य में कोई चीज़ किसी भी हाल में नबी सल्ल० से छिपी नहीं है।"
(मसला हाज़िर व नाज़िर-39)

"नबी करीम सल्ल० सारी दुनिया को अपनी नज़र मुबारक से देख रहे हैं।" (मसला हाज़िर व नाज़िर-90)

"नबी सल्ल० न किसी से दूर हैं और न किसी से बे ख़बर।"
(ख़ालिसुल एतिक़ाद-39)

आगे लिखते हैं-

"हुज़ूर सल्ल० की हयात व वफ़ात में इस बात में कुछ फ़र्क़ नहीं कि वे अपनी उम्मत को देख रहे हैं और अपनी हालतों, नीयतों, इरादों और दिल के ख़तरों को पहचानते हैं और यह सब हुज़ूर सल्ल० पर रोशन है जिसमें असलन पोशीदगी नहीं हैं।" (ख़ालिसुल एतिक़ाद-46)

एक और जगह लिखते है-"नबी सल्ल० हाज़िर व नाज़िर हैं और दुनिया में जो कुछ हुआ है और जो कुछ होगा आप हर चीज़ को देख रहे हैं आप हर जगह मौजूद हैं और हर चीज़ को देख रहे है।"
(ख़ालिसुल एतिक़ाद-46)

केवल अम्बिया व औलिया ही नहीं बल्कि इमाम बरेलवियत जनाब अहमद रज़ा बरेलवी भी इस गुण में उनके शरीक हैं अतएवं उनके एक अनुयायी का इर्शाद है-"अहमद रज़ा आज भी हमारे बीच मौजूद हैं वे हमारी मदद कर सकते हैं।" (अनवारे रज़ा-246)

ये हैं बरेलवी अक़ीदे व विचार धारा कि जिनका अक़्ल व समझ से दूर का भी ताल्लुक़ नहीं है। अल्लाह का दीन तो फ़ितरत के अनुसार है।

इर्शाद बारी तआला है-

कुल हाज़िही सबीली अदऊ इलल्लाहि अला बसीरतिन अना व मनित्त-ब-अनी॰ व सुबहानल्लाहि वमा अना मिनल मुश्रिकीन॰

(यूसुफ़-108)

"आप कह दीजिए कि मेरा तरीक़ा यही है मैं अल्लाह की ओर बुलाता हूँ दलील पर क़ाइम हूँ मैं भी और मेरे अनुयायी भी और पाक है अल्लाह और मैं मुश्रिकों में से नहीं हूँ।" (यूसुफ़-108)

व अन्ना हाज़ा सिराती मुस्तक़ीमन फ़त्त-बिऊहु वला तत्तबिउस्सुबुला फ़-त-फ़र्र-क़ बिकुम अन सबीलिही ज़ालिकुम वस्साकुम बिही ल अल्लकुम तत्तकून॰ (अन्आम-154)

"और यह भी कह दीजिए कि यही मेरी सीधी राह है तो इसी पर चलो और दूसरी पगडंडियों पर न चलो कि वे तुम को अल्लाह की राह से अलग कर देंगी। इस का (अल्लाह ने) हुक्म दिया है ताकि तुम मुत्तक़ी बन जाओ।" (अनआम-154)

अ-फ़ला य-त-दब्बरूनल कुरआना अम अला कुलूबिन-अक़्फ़ालुहा॰

(मुहम्मद-24)

"तो क्या ये लोग कुरआन पर ग़ौर व फ़िक्र नहीं करते थे दिलों पर

ताले लग रहे हैं।" (मुहम्मद-24)

" इनके अक़ीदे कुरआन व हदीस के बीच इतनी भिन्नता के बाद इस बात से इन्कार की गुंजाइश बाक़ी नहीं रहती कि इस्लामी शरीअत और बरेलवी विचार धारा की सोच व अमल अलग अलग है और दोनों के बीच किसी प्रकार की समानता नहीं है अल्लाह हम सबों को हिदायत का सौभाग्य प्रदान करे। आमीन।

●

बरेलवी शिक्षाएं

जिस प्रकार बरेलवी हज़रात के विशेष अक़ीदे हैं उसी तरह उनकी कुछ खास़ शिक्षाएं भी हैं जो खाने पीने और कमाने के गिर्द घूमती हैं। बरेलवी मज़हब में अधिकांश मसले केवल इसलिए गढ़े गए हैं कि उनके द्वारा सीधे सादे लोगों को अपने जाल में फांस कर खाने पीने का सिलसिला जारी रखा जाए। बरेलवी मुल्लाओं ने नए नए मसले गढ़ कर दीन को ऐसी फ़ाइदे वाली तिजारत बना लिया है जिसमें पैसा लगाने की भी ज़रूरत नहीं।

बरेलवी हज़रात ने मज़ारों के बनाने का हुक्म दिया और स्वयं उनके दरबान और मुजावर बन गए। नज़र व नियाज़ के नाम पर जाहिल लोगों ने दौलत के ढेर लगा दिए। उन्होंने इसे समेटना शुरू किया और उनका शुमार बड़े बड़े जागीर दारों, धनवानों में होने लगा। ग़रीबों का खून चूस कर बुज़ुर्गों के नाम पर नज़र व नियाज़ पर पलने वाले लोग दीन के व्यापारी और दुनिया के पुजारी हैं। कोई भी समाज उस समय तक इस्लामी समाज नहीं कहला सकता जब तक वे तौहीद बारी तआला की धारणा से परिचित न हो। हिन्द व पाक में जब तक शिर्क व बिदअत के ये केन्द्र और इनको चलाने वाले ग़ैरत व आत्म सम्मान से वंचित

मुजावर मौजूद हैं उस समय तक सही इस्लामी व्यवसाय को लागू करने का सपना पूरा नहीं हो सकता।

मुरीदों की जेबों पर नज़र रखने वाले ये दुनिया के भूखे पीर जब तक इन्सान को इन्सान की गुलामी का पाठ पढ़ाते रहेंगे उस समय तक हमारा समाज तौहीद की शान व शौकत से परिचित नहीं हो सकता और जब तक किसी समाज में तौहीद की शिक्षा पर अमल न किय जायें उस समय तक कुफ़्र व बे दीनी का मुक़ाबला नहीं हो सकता।

वास्तिकता व ला दीनियत के सैलाब को रोकने के लिए इन्सान की गुलामी की ज़ंज़ीरों को टूकड़े करना होगा और समाज के लोगों को तौहीद का पाठ देना होगा। "अल्लाहू" की धुन पर सर हिलाना, क़व्वाली के नाम पर ढोल ताशों की थाप पर नाचना, नाचते हुए और अनैतिक हरकतें करते करते दामन फैलाकर मांगते हुए और सब्ज़ चादर के कोने पकड़कर हाथ फैलाना, मज़ारों पर चढ़ावे के लिए जाना, हास्यस्पद क़िस्से कहानियों को करामतों का नाम देना, खाने पीने के लिए नित्य नयी रस्मों का निकालना।

आधुनिक वर्ग जब सोचता है कि यदि इसी का नाम मज़हब है तो वह लादीनियत व नास्तिकता व सैक्युलरिज़्म के सुन्दर जाल का शिकार बन जाता है। बुरा हो इन मुल्लाओं और पीरों का जो दीन का नाम लेकर दुनिया के धंधों में मगन रहते और अल्लाह की सीमाओं का उल्लघंन करते हैं। यह क़ब्र परस्ती की लानत, यह सालाना उर्स और मेले यह ग्यारहवीं, कुल और चलीसवें, इनका इस्लाम से कोई ताल्लुक़ नहीं, सारी

दुनिया की दौलत को जमा करने के ढंग हैं मगर कौन समझाए इन पीरों व मशाइख़ीने तरीक़त को। ये लोगों की आँखों पर पट्टी बांधकर दुनिया में भी अपना मुंह काला कर रहे हैं और अपनी आख़िरत को भी बर्बाद कर रहे हैं।

जो लोग इनको रोकने और इन हरकतों से मना करते हैं उनको वहाबी और औलिया-ए-किराम का गुस्ताख़ कहकर बदनाम किया जाता है। इन की किताबों को देखना और इनके साथ उठना बैठना अपराध क़रार दे दिया जाता है। (फ़तावा रिज़विया 6-54, 5-89)

ऐसा न हो कि लोग इनके वाअ्ज़ व नसीहत से प्रभावित होकर सीधे रास्ते पर आ जाएँ और उनकी दीनदारी ख़तरे में पड़ जाए।

आइए अब बरेलवियत की शिक्षाओं का जाइज़ा लें और किताब व सुन्नत के साथ साथ स्वयं फ़िक़्ह हनफ़ी के साथ उसकी तुलना करें ताकि पता चले कि इन लोगों की विचार धारा व शिक्षाओं की सनद किताब व सुन्नत से मिलती है और न फ़िक़्ह हनफ़ी से।

अहमद यार गुजराती लिखते हैं-

"साहिबे क़ब्र की इज़हारे अज़मत के लिए मक़बरा आदि बनाना शर्अन जाइज़ है।" (जाअल हक़-282)

आगे-"उलमा व औलिया व सालिहीन की क़ब्रों पर इमारतें बनाना जाइज़ काम है जबकि उससे मक़्सद लोगों की निगाहों में महानता पैदा करना हो ताकि लोग उस क़ब्र वाले को तुछ से जानें।"

(जाअल हक़-285)

जबकि हदीस में यह स्पष्टीकरण मौजूद है कि-

"नबी सल्ल० ने क़ब्र को चूना गच करने (व पक्की बनाने) और उसपर कोई मक़्बरा बनाने से मना फ़रमाया है।"

(मुस्लिम, तिर्मिज़ी, नसई)

इसी तरह नबी सल्ल० ने हज़रत अली रज़ि० को ख़ास तौर पर हुक्म दिया था कि-

'वे ऊँची क़ब्रों को ज़मीन के बराबर कर दें।"

(अहमद, बेहक़ी)

हज़रत उमर बिन अल हारिस रज़ि० हज़रत समामा रज़ि० से रिवायत करते हैं कि उन्होंने कहा-"रूम में हमारा एक साथी ख़त्म हो गया तो हज़रत फ़ुज़ला बिन उबैद रज़ि० ने क़ब्र को ज़मीन के बराबर करने का हुक्म दिया और फ़रमाया कि मैंने नबी सल्ल० को इस बात का हुक्म देते हुए सुना है।" (मुस्लिम)

अब फ़िक़ह हनफ़ी की इबारतें भी देखिए-

"क़ब्रों को पक्का बनाना मना है।" (किताबुल आसार)

इमाम मुहम्मद बिन अल हसन से पूछा गया कि क्या क़ब्र को पक्का बनाना ना पसन्दीदा काम है ? तो उन्होंने जवाब दिया--हां।"

(किताबुल अस्ल-1-422)

इमाम सुर्ख़सई रहिम० "अल मबसूत" में फ़रमाते हैं-"क़ब्रों को पक्का न बनाओ क्योंकि नबी सल्ल० से इसकी मनाही साबित है।"

(अल मब्सूत-2-62)

काज़ी ख़ां अपने फ़तावा में फ़रमाते हैं-

"क़ब्रों को पक्का न बनाया जाए और न ही उस पर मक़बरा आदि बनाया जाए क्योंकि इमाम अबू हनीफ़ा से इसकी मनाही आयी है।"

(फ़तावा क़ाज़ी ख़ां-1-194)

इमाम कासानी रहिम० का इर्शाद है-

"क़ब्र को पक्का करना मकरूह है और इमाम अबू हनीफ़ा ने क़ब्र पर मक़बरा आदि बनाना मकरूह समझा है इसमें माल की बर्बादी है अलबत्ता क़ब्र पर पानी छिड़कने में कोई हरज नहीं। मगर इमाम अबू यूसुफ़ से मन्कूल है कि पानी छिड़कना भी मकरूह है क्योंकि इससे क़ब्र पक्की होती है।" (बदाइउस्सनाअ-1-320)

इसी प्रकार इबारतें फ़िक़ह हनफ़ी की तमाम विश्वासनीय किताबों में आयी हुई हैं। देखिऐ-

बहरूर्राइक़ 2-209, बदाइउस्सनाइअ 1-320, फ़तहुल क़दीर 1-472, रद्दुल मुख़्तार अला दुर्रे मुख़्तार 1-601 ,फ़तावा हिन्दिया 1-166,फ़तावा बज़ाज़िया और कन्ज़ुद दक़ाइ़- आदि।

क़ाज़ी इब्राहीम हनफ़ी फ़रमाते हैं-

" वे मक़बरे जो क़ब्रों पर बनाए गए हैं उन्हें गिराना फ़र्ज़ है क्योंकि नबी सल्ल० की अवज्ञा व नाफ़रमानी पर बनाए गए है। और वह इमारत जो नबी की नाफ़रमानी पर बनायी गयी हो उसका गिराना मस्जिदे ज़िरार के गिराने से भी अधिक ज़रूरी है।

(मजालिसुल अब्रार-129)

नबी सल्ल० का फ़रमान है-

"अल्लाह यहूद व ईसाइयों पर लानत करे उन्होंने अपने नबियों की क़ब्रों को सज्दा गाह बना लिया है।" (बुख़ारी)

ये तो हैं किताब व सुन्नत और फ़िक़्ह हनफ़ी की स्पष्ट दलीलें मगर बरेलवी क़ौम को ज़िद है कि क़ब्रों को पक्का कराना और उनपर मक़बरे आदि बनाना ज़रूरी है। जनाब अहमद रज़ा ख़ां साहब बरेलवी कहते हैं-

"मक़बरों आदि का बनाना इस लिए ज़रूरी है ताकि मज़ार आम क़ब्रों से अलग नज़र आएं और आम लोगों की नज़रों में हैबत व महानता पैदा हो।" (मजालिसुल अबरार-129)

बाक़ी चादरें डालना और रोशनी करना यह भी जाइज़ है ताकि आम लोग जिस मज़ार पर कपड़े और अमामे रखे देखें मज़ार वली जान कर उसका अपमान करने से बचे रहें और ताकि ज़ियारत करने वाले ग़ाफ़िलों के दिलों में अदब व डर आए और हम बयान कर चुके हैं कि मज़ारों के पास औलिया किराम की रूहें मौजूद रहती हैं।"

(मजालिसुल अबरार-71)

आगे लिखते हैं-शमअें रोशन करना, क़ब्र के सम्मान के लिए जाइज़ है ताकि लोगों को इल्म हो कि यह किसी बुज़ुर्ग की क़ब्र है और वे इससे तबर्रूक हासिल करें।" (फ़तावा रिज़विया-4-144)

एक और बरेलवी विद्वान लिखते हैं-

"यदि किसी वली की क़ब्र हो तो उनकी रूह का सम्मान करने और लोगों को बतलाने के लिए कि यह वली की क़ब्र है ताकि लोग इससे

बरकत हासिल कर लें तो चराग़ जलाना जाइज़ है।"

(जाअल हक़-300)

ये तो हैं बरेलवी उलमा के फ़तवे मगर हदीस में इसकी स्पष्ट मनाही आयी है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० से रिवायत है।

"नबी सल्ल० ने क़ब्रों की ज़ियारत के लिए आने वाली औरतों, क़ब्रों पर सज्दागाह बनाने वालों और उनपर चराग़ जलाने वालों पर लानत फ़रमायी है।" (अबूदाऊद, तिर्मिज़ी, नसई)

मुल्ला अली क़ारी हनफ़ी लिखते हैं-

"क़ब्रों पर चराग़ जलाने की मनाही इसलिए आयी है कि यह माल की बर्बादी है और इसलिए कि यह जहन्नम के आसार में से हैं और या इसलिए आयी है कि इसमें क़ब्रों का सम्मान है।" (मिरक़ात-1-470)

क़ाज़ी इब्राहीम हनफ़ी क़ब्र परस्तों के उसूल ज़िक्र करते हुए लिखते हैं-"आज कुछ गुमराह लोगों ने क़ब्रों का हज करना भी शुरू कर दिया है और उसके तरीक़े गढ़ लिए हैं। और दीन व शरीअत के ख़िलाफ़ कामों में से यह भी है कि लोग क़ब्रों और मज़ारों के सामने बड़ी विनयता को पेश करते हैं और उनपर चराग़ आदि जलाते हैं।

क़ब्रों पर चादरें चढ़ाना, उनपर दरबान बैठाना, उनको चूमना और उनके पास रिज़्क़ व सन्तान मांगना इन सब कामों का इस्लामी शरीअत में कोई स्थान नहीं है।" (मजालिसुल अबरार-118)

स्वयं अहमद यार ने फ़तावा आलम गीरी से नक़ल किया है कि-

"क़ब्रों पर चराग़ जलाना बिदअत है।"

इसी प्रकार फ़तावा बज़ाज़ियह में भी है कि-''क़ब्रिस्तान में चराग़ ले जाना बिदअत है इसकी कोई हक़ीक़त नहीं।'' (जाअल हक़-302)

इब्ने आबिदीन फ़रमाते हैं-

''मज़ारों पर तेल या चराग़ आदि की नज़र चढ़ाना असत्य है।''

(रद्दुल मुख़्तार-2-139)

अल्लामा हसकफ़ी हनफ़ी फ़रमाते हैं-

''वह नज़र व नियाज़ जो आप लोगों की तरफ़ से क़ब्रों पर चढ़ाई जाती है चाहे वह नक़दी की सूरत में हो या तेल आदि की शक्ल में तो समान रूप से सबके निकट बातिल व हराम है।''

(दुर्रे मुख़्तार-2-139)

फ़तावा आलमगीरी में है-''क़ब्रों पर रोशनी करना अज्ञानता की रस्मों में से है।'' (1-178)

अल्लामा आलूसी हनफ़ी फ़रमाते हैं-

''क़ब्रों पर से चराग़ों व शमओं को हटाना ज़रूरी है ऐसी कोई भेंट जाइज़ नहीं।'' (रूहुल मआनी-10-219)

इसी तरह-''चादर आदि से क़ब्र को ढांपना भी ठीक नहीं।''

(फ़तावा मतालिबुल मोमिनीन)

और-''यह सब बातिल है इन कामों से बचना चाहिए।''

(फ़तावा अज़ीज़िया-9)

''चराग़ जलाना और चादरें चढ़ाना हराम है।''

(फ़तावा शाह रफ़ीउद्दीन-14)

हनफ़ी उलमा हज़रत अली रज़ि० के बारे में बयान करते हैं कि वे किसी ऐसी क़ब्र के पास से गुज़रे जिसे कपड़े से ढांप दिया गया था तो आपने उससे मना फ़रमा दिया।" (मतालिबुल मोमिनीन)

इन सारी बिदअतों का इस्लामी शरीअत में कोई बजूद नहीं और न ही यह पहले के ज़माने से साबित हैं। यदि इसमें किसी प्रकार का कोई दीनी लाभ होता तो सहाबा किराम, और ताबअीन आदि से इसका अमल साबित होता।

बल्कि नबी सल्ल० ने तो दुआ फ़रमायी थी-

"ऐ अल्लाह मेरी क़ब्र को मेलागाह न बनाना कि उसकी पूजा शुरू कर दी जाए।" (मिश्कात)

बरेलवी हज़रात ने उर्सों, महफ़िलों, मीलाद, फ़ातिहा की नज़र, कुल, ग्यारहवीं और चालीसवें आदि की शक्ल में बहुत सी इस प्रकार की बिदअतें गढ़ लीं ताकि वे इनके द्वारा पेट की आग ठंडी कर सकें।

वे लिखते हैं-

"औलिया उल्लाह रहमते रब के दरवाज़े हैं रहमत दरवाज़ों ही से मिलती है। क़ुरआन करीम में है हुना लिका दआ ज़-क-रिय्या रब्बहू० साबित हुआ कि ज़करिया अलै० ने हज़रत मरयम के पास खड़े होकर बच्चे की दुआ की। अर्थात वलियों के पास दुआ करना कुबूलियत का सबब है।" (जाअल हक़-335)

अब आप स्वयं देख लें कि किस तरह ये लोग कुरआन मजीद में कतरबौन्त का अपराध कर रहे हैं और नुबूवत की शान में गुस्ताख़ी कर

रहे हैं इससे यह मालूम होता है कि विलायत नुबुवत से अफ़ज़ल है और यही अक़ीदा है गुमराह इब्न अरबी सूफ़ी साहब अहमद यार गुजराती ने हज़रत ज़करिया अलैहि० का दर्जा मरयम अलैहिस्सलाम से घटा दिया है।

आगे बरेलवी बकवास पढ़िए-

"क़ब्रों पर उर्स औलिया की सेवा में हाज़िरी का सबब है और यह सम्मान अल्लाह का हुक्म है और इसमें असंख्य फ़ाइदे हैं।"

(मवाइज़े नईमिया-224)

अहमद रज़ा साहब के एक शिष्य कहते हैं-

"उर्स करना और इस अवसर पर रोशनी, फ़र्श और लंगर की व्यवस्था करना शरीअत से साबित है और नबी सल्ल० की सुन्नत है।"

जी हां यह काम बरेलवी शरीअत में तो साबित हो सकता है परन्तु इस्लामी शरीअत से साबित नहीं हो सकता।

आगे लिखते हैं-

"औलिया के मज़ारों पर नमाज़ पढ़ना और उनकी रूहों से मदद मांगना बरकत का कारण है।" (फ़तावा रिज़विया-2-333)

और-"वहाबियों का यह कहना कि क़ब्रों को चूमना शिर्क है यह उनकी ज़्यादती है।" (फ़तावा रिज़विया-1-66)

और- नज़र लिग़य्रिल्लाह से आदमी मुश्रिक नहीं होता।"

(फ़तावा रिज़विया-210)

क़ब्रों के गिर्द तवाफ़ करना भी बरेलवी शरीअत में जाइज़ है।

"यदि बरकत के लिए क़ब्र के गिर्द तवाफ़ किया तो कोई हरज

नहीं।"   (बहारे शरीअत-4-133)

इसलिए कि- "औलिया की क़ब्रें अल्लाह के आदेश में से हैं और उनके सम्मान का हुक्म है।"   (इल्मुलकुरआन-36)

और-"तवाफ़ को शिर्क ठहरा देना वहाबियों का गुमान फ़ासिद व सीमा से आगे बढ़ जाना है।"   (हिकायाते रिज़वियह-46)

उर्स की असल वजह

उर्स को उर्स इसलिए कहते हैं क्योंकि यह उरूस अर्थात दुल्हा मुहम्मद सल्ल० के दीदार का दिन है।"   (जाअल हक़-146)

अहमद यार गुजराती का फ़तवा है-

"नमाज़ केवल उसके पीछे जाइज़ है जो उर्स आदि करता हो और जो इन चीज़ों का विरोधी हो उसके पीछे नमाज़ जाइज़ नहीं।"

(अलहक़्कुल मुबीन-74)

ईद मीलादुन्नबी सल्ल० भी ग़ैर इस्लामी ईद है। पिछले ज़मानों में इसका कोई वजूद नहीं था। स्वयं दीदार अली ने इस बात को माना है कि-

"मीलाद शरीफ़ का सल्फ़े सालिहीन से पिछले ज़माने में कोई सबूत नहीं। यह बाद में ईजाद हुई है।"   (रसूलुल कलाम-15)

इसके बावजूद भी उनका अक़ीदा यह है-

"केवल मीलाद शरीफ़ करना और विलादते पाक की खुशी मनाना, उसके ज़िक्र के अवसर पर खुश्बू लगाना, गुलाब छिड़कना, मिठाई बांटना, मतलब यह कि खुशी प्रकट करना जिस जाइज़ तरीक़े से हो वह मुस्तहब

है और बहुत ही बरकत की चीज़। आज भी इतवार को ईसाई इसलिए ईद मनाते हैं कि उस दिन दस्तरख़्वान उतरा था और नबी सल्ल० की आमद उस फ़ाइदे से कहीं बढ़कर नेमत है अत:' उनकी विलादत का दिन भी ईद का दिन है।" (जाअल हक़्-1-231)

और-

"मीलाद शरीफ़ कुरआन व हदीस और फ़रिश्ते व पैग़म्बरों से साबित है।" (जाअल हक़्-231)

मीलाद मलाइक की सुन्नत है इससे शैतान भागता है।"

(जाअल हक़्-233)

दीदार अली लिखते हैं-

"मीलाद सुन्नत और वाजिब है।" (रसूलुल कलाम-58)

मीलाद के ज़िक्र के समय खड़े होने का कुरआन मजीद (कौन से कुरआन) में आदेश है। (रसूलुल कलाम-60)

और यही दीदार अली हैं जिन्होंने कहा है कि मीलाद शरीफ़ की असल पिछले ज़माने से साबित नहीं।"

जनाब बरेलवी कहते हैं-"मीलाद शरीफ़ में रूला देने वाले क़िस्से बयान करना नाजाइज़ है।"(अहकामे शरीअत-145)

बरेलवी क़ौम ने खाने पीने को क़ाइम रखने के लिए इस तरह की बिदअतें जारी की हैं और इसलाम को ग़ैर शरअी रस्मों का गजीना बना दिया है। इस सिलसिले में उन्होंने नबी सल्ल० के पाक नाम को भी इस्तेमाल किया ताकि खाने पीने का बाज़ार बराबर चलता रहे। जबकि

नबी करीम सल्ल० का इर्शाद गरामी है।

"जिसने दीन के मामले में कोई नयी चीज़ ईजाद की उसे रद्द कर दिया जाएगा।" (बुख़ारी व मुस्लिम)

और-

"दीन में नयी नयी रस्मों से बचो। हर नयी रस्म बिदअत है और हर बिदअत गुम्राही है।" (मुस्लिम, नसई)

और स्वयं नबी सल्ल० के ज़माने में आपने अपने किसी रिश्तेदार की ईद मीलाद नहीं मनायी और न ही उनकी वफ़ात के बाद कुल आदि कराए। आपके बेटों और बेटियों, आपकी पाक पत्नी हज़रत ख़दीज़ा रज़ि० और आपके चचा हज़रत हमज़ा रज़ि० की वफ़ात आपकी ज़िन्दगी में हुई मगर आपने मौजूदा रस्मों में से कोई रस्म अदा नहीं की। यदि इन रस्मों का कोई फ़ाइदा होता या ईसाले सवाब का ज़रिया होतीं तो आप ज़रूर अमल फ़रमाते और सहाबा किराम रज़ि० को भी उसकी नसीहत फ़रमाते।

यदि किसी की क़ब्र पर उर्स आदि करना सवाब का काम और बरकत का सबब होता तो खुलफ़ाए राशिदीन किसी सूरत में भी इससे महरूम न रहते। नबी सल्ल० के साथ उनसे अधिक मुहब्बत किसको हो सकती है मगर उनमें किसी से भी इस क़िस्म के आमाल साबित नहीं। मालूम हुआ ये सारी रस्में खाने कमाने के लिए गढ़ी गयी हैं। सवाब व बरकात की प्राप्ती केवल धोखा है।

शाह वली उल्लाह मुहददिस देहलवी फ़रमाते हैं-

"नबी करीम सल्ल० ने किसी क़ब्र की ओर ख़ास तौर से सफ़र करने से मना किया है और क़ब्रों पर होने वाली बिदअतें बहुत बुरी हैं स्वयं आपने अपनी क़ब्र को मेलागाह न बनने की दुआ फ़रमायी थी।"

(हुज्जतुल वलिग़ा-2-77)

मशहूर हनफ़ी टीकाकार क़ाज़ी सनाउल्लाह पानी पती फ़रमाते हैं-

"आजकल कुछ जाहिल लोगों ने क़ब्रों के पास ग़ैर शरअी हरकतें शुरू कर दी हैं उनकी कोई दलील नहीं उर्स आदि और रोशनी करना सब बिदअत के काम हैं।" (तफ़सीर मज़हरी-2-65)

क़ब्रों के गिर्द तवाफ़ के बारे में इब्ने नजीम अल हनफ़ी का इर्शाद है:- काबा के सिवा किसी दूसरी चीज़ के गिर्द तवाफ़ कुफ़्र है।"

(बहरूर्राइक़)

मुल्ला अली क़ारी इसकी व्याख्या फ़रमाते हैं-

"रसूल के रौज़े के गिर्द इसका तवाफ़ करना भी जाइज़ नहीं क्योंकि यह केवल काबा ही की ख़ासियत है आज कल कुछ जाहिल लोगों ने मशाइख़ और उलमा का लबादा ओढ़ कर यह काम शुरू कर दिया है उनका कोई भरोसा नहीं उनका यह काम अज्ञानता का काम है।"

(शरहुल मनासिक)

जहां तक ईद मीलाद का संबन्ध है तो यह सातवीं सदी हिजरी में एक बिदअती बादशाह मुज़फ़्फ़रूद्दीन की ईजाद है।

"वह एक फ़ुज़ूल ख़र्च बादशाह था वह मीलाद मनाया करता था वह सबसे पहला व्यक्ति था जिसने यह काम शुरू किया।"

(अल क़ौलुल मोतमिद्फ़ी अमलि मौलिद)

और-" वह हर साल लगभग तीन लाख रूपए इस बिदअत पर ख़र्च किया करता था।" (दौलुल इस्लाम अज़-इमाम ज़हबी-2-102)

और-"उसके दौर में एक बिदअती विद्वान उमर बिन दहीया ने भी उसका साथ दिया। बादशाह ने उसे एक हज़ार दीनार इनाम दिया।"

(अल बदाया वन्नहाया अज़ इमाम इब्ने कसीर-13-144)

इसी किताब में उमर बिन दहीया के बारे में लिखा है-

"यह झूठा व्यक्ति था। लोगों ने इसकी रिवायतों पर भरोसा करना छोड़ दिया था और उसका बड़ा भारी अपमान किया था।"

इमाम इब्ने हजर ने भी इसके बारे में लिखा है-

"यह बहुत झूठा था हदीसें स्वयं बनाकर उनको नबी सल्ल० की ओर मन्सूब कर देता था। सल्फ़ सालिहीन के ख़िलाफ़ बद ज़बानी किया करता था।"

अबुल अुला अस्बहानी ने उसके बारे में एक घटना नक़ल की है-वह एक दिन मेरे वालिद के पास आया उसके हाथ में एक मुसल्ला भी था उसने उसे चूमा और आंखों को लगाया और कहा-

"यह मुसल्ला बड़ी बरकत वाला है मैंने इस पर कई हज़ार नफ़्लें अदा की हैं और बैतुल्लाह शरीफ़ में इस पर बैठकर कुरआन पाक ख़त्म किया है इत्तिफ़ाक़ ऐसा हुआ कि उसी दिन एक व्यापारी मेरे वालिद के पास आया और कहने लगा।

आपके मेहमान ने मुझसे आज बड़ा महंगा जानमाज़ ख़रीदा है मेरे

वालिद ने वह मुसल्ला जो मेहमान उमर बिन दहीया के पास था उसे दिखाया तो ताजिर ने कहा कि यही वह जानमाज़ है जो उसने मुझसे आज ख़रीदी है इसपर मेरे वालिद ने उसे बड़ा शर्मिन्दा किया और घर से निकाल दिया।" (लिसानुल मीज़ान अज़ इमाम इब्ने हजर-4-396)

मतलब यह कि ऐसे व्यक्ति ने उस बादशाह की पुष्टि की और मीलाद के सिलसिले में उसका साथ दिया। ईद मीलाद केवल ईसाइयों की समानता में जारी की गयी है इस्लामी शरीअत से इसका कोई संबन्ध नहीं। मीलाद की महफ़िल में बरेलवी हज़रात मीलाद पढ़ते समय खड़े हो जाते हैं उनका अक़ीदा होता है कि रसूल सल्ल० स्वयं उस में हाज़िरी के लिए तशरीफ़ लाते हैं। बरेलवी प्राय: यह शेअर पढ़ते हैं-

दम बदम पढ़ो दुरूद   हुज़ूर भी हैं यहां मौजूद

एक बरेलवी ने लिखा है-

"मीलाद शरीफ़ के ज़िक्र के समय खड़े होना फ़र्ज़ है।"

(अल अन्वारूस्सातिअह-250)

जबकि नबी करीम सल्ल० फ़रमाया करते थे-"जिसे यह बात अच्छी लगती है कि लोग उसके लिए सम्मान पूर्वक खड़े हों उसका ठिकाना जहन्नम है।" (तिर्मिज़ी, अबु दाऊद)

इसी लिए सहाबा किराम रज़ि० आपको देख कर खड़े नहीं हुआ करते थे क्योंकि उनको पता था कि आप इसे ना पसन्द करते हैं। बरेलवी हज़रात पर हैरत है कि वे नबी सल्ल० की पैदाइश की मीलाद आपकी वफ़ात की तारीख़ के दिन मनाते हैं क्योंकि आपने 12 रबीउल अव्वल को

इन्तिक़ाल फ़रमाया था। आप की तारीख़े मीलाद 9 रबीउल अव्वल है और तारीख़ से यह बात साबित हो चुकी है और इससे भी अधिक हैरत इस बात पर है कि कुछ साल पूर्व बरेलवी हज़रात इसे बारह वफ़ात कहा करते थे मगर अब बारह वफ़ात से बदल कर बारह मीलाद कर दिया है।

जहां तक कुल, सातवीं, दसवीं और चालीसवें आदि का संबन्ध है यह सब मनगढ़त बिदअतें हैं न नबी सल्ल० से इनका सबूत मिलता है और न सहाबा किराम से और न ही फ़िक्ह हनफ़ी से। असल में ये लोग हनफ़ी नहीं क्योंकि हनफ़ी फ़िक्ह की पाबन्दी नहीं करते। इनकी अलग अलग अपनी फ़िक्ह है जिस पर ये अमल करते हैं।

फ़िक्ह हनफ़ी के इमाम मुल्ला अली क़ारी रहिम० फ़रमाते हैं-

"हमारे मज़हब के उलमा की सहमति है कि तीजा और सातवां आदि जाइज़ नहीं है।" (शरह मिश्कात-5-48)

इब्ने बजाज हनफ़ी फ़रमाते हैं-"तीजा और सातवां आदि मक्रूह है इसी प्रकार ख़ास दिनों में ईसाले सवाब के लिए खाना पकाना और ख़त्म आदि भी मक्रूह हैं।" (फ़तावा बज़ाज़ियह-4-81)

मगर बरेलवी हज़रात किसी व्यक्ति के मर जाने के बाद उसके वारिसों पर कुल आदि करना फ़र्ज़ क़रार देते हैं और ईसाले सवाब के बहाने पेट भरने का सामान उपलब्ध करते हैं। ग्यारहवीं के बारे में बरेलवी क़ौम का अक़ीदा है-

ग्यारहवीं तारीख़ को कुछ निर्धारित पैसों पर फ़ातिहा पाबन्दी से की

जाए तो घर में बड़ी बरकत रहती है किताब याज़दह मजालिस में लिखा है कि हुज़ूर ग़ौस पाक रज़ि० हुज़ूर सल्ल० की बारहवीं अर्थात 12 तारीख़ के मीलाद के बहुत पाबन्द थे। एक बार सपने में सरकार ने फ़रमाया कि अब्दुल क़ादिर ! तुमने बारवहीं से हमें याद किया हम तुम को ग्यारहवीं देते हैं अर्थात लोग ग्यारहवीं से तुमको याद किया करेंगे यह सरकारी अनुदान है।" (जाअल हक़-1-270)

यह है ग्यारहवीं और उसकी शक्ति शाली दलील। न जाने कौन कौन से दिन इन्होंने बरकात की प्राप्ती के लिए गढ़ रखे हैं। बरेलवी मज़हब में "जुमेरात की रोटी" भी बड़ी मशहूर है क्योंकि---

"जुमेरात के दिन मोमिनों की रूहें अपने घरों में आती हैं और दरवाज़े के पास खड़ी होकर दर्दनाक आवाज़ से पुकारती हैं कि ऐ मेरे घर वालो ! ऐ मेरे बच्चो ! ऐ मेरे अज़ीज़ो ! हम पर सदक़े से मेहरबानी करो। अतएवं मय्यत की रूह अपने घर में जुमा की रात को आ आकर देखती है कि उसकी तरफ़ से सदक़ा किया गया है या नहीं--?"

(मजमूआ रसाइल-2-69)

केवल जुमेअ्रात ही के दिन रूहें सदक़ा ख़ैरात की मांग करने के लिए नहीं आतीं बल्कि ईद, जुमअतुल मुबारक, आशूरा और शबे बराअत के अवसर पर भी आतीं और इस प्रकार की मांग करती हैं।"

(इतयानुल अर्वाह-2-69)

खाने पीने के लिए ईजाद की जाने वाली बरेलवी हज़रात की रस्म "ख़त्मशरीफ़" जाहिलों में बड़ी मशहूर है। उनके मुल्लाओं ने पेट के

लिए ईंधन उपलब्ध करने के उद्देश्य से इस रस्म को रिवाज देकर शरीअते इस्लामिया को बहुत बदनाम किया है। इस रस्म से उलमाए किराम के मान सम्मान को भी बड़ा धक्का लगा है और हमारे यहाँ यह रस्म उलमा-ए-किराम के लिए गाली समझी जाने लगी है। इन मुल्लाओं के पेट भरने का सामान उपलब्ध होता रहे। बाक़ी किसी चीज़ से उन्हें कोई मतलब नहीं।

इसी तरह यह लोग किसी धनवान के घर इकट्ठे होकर कुरआन मजीद ख़त्म करते हैं और फिर इसका सवाब मय्यित को हिबा कर देते हैं धनवान खुश हो जाता है कि कुछ टकों के लिए उसका रिश्तेदार बख़्शा गया और ये लोग खुश हो जाते हैं कि थोड़े से समय के बदले भिन्न भिन्न प्रकार के खाने भी मिल गए और जेब भी गर्म हो गयी यद्यपि हनफ़ी फुक़्हा का कहना है-

"मज़दूरी (पैसा) लेकर कुरआन मजीद ख़त्म करने का सवाब स्वयं पढ़ने वाले को नहीं मिलता। मय्यित को कैसे पहुँचेगा।"

(शर्हुद दराया)

इमाम ऐनी हनफ़ी फ़रमाते हैं-

"इसी तरह कुरआन मजीद ख़त्म करके उजरत लेने वाला और देने वाला दोनों गुनाहगार हैं इस प्रकार करना जाइज़ नहीं।"

(बग़ाया शर्हुल हदाया-3-655)

इब्ने आबिदीन लिखते हैं:-

ऐसा करना किसी मज़्हब में जाइज़ नहीं, इसका कोई सवाब नहीं

मिलता। (मज्मूआ रसाइल-1-173-174)

इमाम शामी नक़ल करते हैं-

"कुरआन मजीद उजरत पर (पैसों के लिए) पढ़ना और फिर इसका सवाब मय्यित को हिबह करना किसी से साबित नहीं है जब कोई व्यक्ति उजरत लेकर पढ़ता है तो उसे पढ़ने का सवाब नहीं मिलता फिर वह मय्यित को क्या हिबा कर सकता है।" (मजमूआ रसाइल-175)

अल्लाह ने कहा है-

"मेरी आयतों के बदले माल का कुछ हिस्सा न ख़रीदो।"

(बक़रा-41)

टीकाकार कहते हैं-"इस पर उजरत न लो"

(तफ़सीर तिबरी, इब्ने कसीर)

शरह अकीदह तहावियह में है-

"कुछ लोगों का उजरत देकर कुरआन मजीद ख़त्म करवाना और फिर इसका सवाब मय्यित को हिबह करना। यह सल्फ़ सालिहीन में से किसी से भी साबित नहीं और न इस तरह सवाब मय्यित तक पहुँचता है यह ऐसे ही है जैसे कोई व्यक्ति किसी को उजरत देकर उससे नवाफ़िल आदि पढ़वाए और उनका सवाब मय्यित को हिबह कर दे इसका कोई लाभ नहीं। यदि कोई व्यक्ति यह वसीयत कर जाए कि उसके माल में से कुछ हिस्सा कुरआन मजीद की तिलावत करके उसे हिबह करने वालों को दिया जाए तो ऐसी वसीयत बातिल है।

बहर हाल इस बिदअत का व्यक्तिगत इच्छाओं की पूर्ति से तो संबन्ध

हो सकता है मगर दीन व शरीअत से कोई संबन्ध नहीं है। बरेलवियों ने माल व दौलत जमा करने के लिए तबर्रूकात की बिदअत भी ईजाद की है ताकि जुब्बा व दस्तार की ज़ियारत कराके दुनियावी दौलत को समेटा जाए।

बरेलवी आला हज़रत लिखते हैं-

"औलिया के तबर्रूकात अल्लाह की सीमाओं में से हैं इनका सम्मान करना ज़रूरी है।" (मजमूआ रसाइल आला हज़रत-2-8)

और-"जो व्यक्ति तबर्रूकात शरीफ़ा का इन्कारी हो वह कुरआन व हदीस का इन्कारी और सख़्त जाहिल, गुमराह व अ ज्ञाकारी है।"

(बदरूल अनवार-12)

और-"नबी सल्ल० के सम्मान का एक अंश यह भी है कि जो चीज़ हुज़ूर के नाम से पहचानी जाती है उसका सम्मान किया जाए।"

(बदरूल अनवार-21)

किसी भी चीज़ को नबी सल्ल० की ओर मन्सूब कर दो और फिर उसकी ज़ियारत कराके सदके़, ख़ैरात और नज़राने जमा करना शुरू कर दो। कोई ज़रूरत नहीं तहक़ीक़ की कि इस तबर्रूक का वास्तव में आपसे संबन्ध है भी या नहीं। जनाब बरेलवी इसकी व्याख्या करते हुए लिखते हैं-

"इसके लिए किसी सनद की भी ज़रूरत नहीं बल्कि जो चीज़ हुज़ूर सल्ल० के पाक नाम से मशहूर हो उसका सम्मान दीन के आवश्यक काम से है।" (बदरूल अनवार-43)

सम्मान का तरीक़ा क्या है ? जनाब अहमद रज़ा साहब स्वयं ही बयान करते हैं-

"दरवाज़े व दीवार को छूना, तबर्रूकात को छूना और बोसा देना यद्यपि इन इमारतों का उस ज़माने में वजूद ही न हो-इसकी दलील ? मजनू का कथन--क्या खूब किसी ने कहा है-

"मैं लैला के शहरों से गुज़रता हूँ तो कभी
उस दीवार को बोसा देता हूँ तो कभी उस
दीवार को और यह शहर की मुहब्बत की
वजह से नहीं बल्कि यह तो शहर वालों की
मुहब्बत है।" (मजमूआ रसाइल-2-141)

और-"यहां तक कि बुजुर्गों की क़ब्र पर जाने के समय दरवाज़े की चौखट चुमना भी जाइज़ है।" (मजमूआ रसाइल-159)

बरेलवी क़ौम के निकट मदीना मुनव्वरा और बुजुर्गों की क़ब्रों को चूमना ही नहीं बल्कि मज़ारों आदि की चित्रों को चूमना भी ज़रूरी है। बरेलवी साहब इर्शाद फ़रमाते हैं-

"उलमाए दीन जूता शरीफ़, रोज़ा शरीफ़ हुजूर सय्यदुल बशर के नक़शे काग़ज़ों पर बनाने और उनको बोसा देने, आंखों से लगाने और सर पर रखने का हुक्म फ़रमाते रहे।"

(मजमूआ रसाइल-144)

और-"उलमाए दीन इन तस्वीरों से बीमारी दूर करने, मक़सद हासिल करने के लिए तवस्सुल फ़रमाते थे।"

(बदरूल अनवार फ़ी आदाबिल आसार-39)

बरेलवी आला हज़रत नबी करीम सल्ल० के पाक जूतों की काल्पनिक तस्वीर के फ़ाइदों को बयान करते हुए लिखते हैं-

"जिसके पास ये नक़्शा हो ज़ालिमों व जलने वालों (हासिदों)से बचा रहे। औरत बच्चा होने के दर्द के समय अपने दाएं हाथ में रखे तो आसानी हो, जो हमेशा पास रखेगा इ़ज़्ज़त वाला हो और उसे ज़ियारत रौज़-ए रसूल नसीब हो, जिस सेना में हो न भागे जिस क़ाफ़िले में हो न लुटे, जिस कश्ती में हो न डूबे, जिस माल में हो न चोरी हो, जिस हाजत में उससे सिफ़ारिश की जाए पूरी हो जिस मुराद की नीयत से पास रखें हासिल हो।" (बदरूल अनवार फ़ी आदाबिल आसार-40)

इन ख़ुराफ़ात और अज्ञानता के दौर की ख़ुराफ़ात में कोई फ़र्क़ नहीं है। नबी करीम सल्ल० ने उन ख़ुराफ़ात को ख़त्म किया था ये लोग दोबारा उनको ज़िन्दा कर रहे हैं। ख़ान साहब नक़ल करते हैं-

"यदि हो सके तो इस ख़ाक को बोसा दे जिसे जूता मुबारक के असर से नम हासिल हुई वर्ना उसके नक़शे ही को बोसा दे।"

(अबरूल मक़ाल-148)

और-"इस नक़शे के लिखने में एक फ़ायदा यह है कि जिसे असल रोज़ा की ज़ियारत न मिली हो वह इसकी ज़ियारत कर ले और शौक़ से इसे बोसा दे कि यह मिसाल उस असल की तरह है।"

(अबरूल कुक़ाल-148)

और- रौज़-ए-मुनव्वरा हुज़ूर सल्ल० की नक़ल सही बेशक दीन के

महान कामों में से है इसका सम्मान हर मुसलमान के लिए शरअी तौर पर सहीहुल ईमान की दलील है।" (बदरूल अनवार-53)

तस्वीर की ज़ियारत के आदाब बयान करते हुए लिखते हैं-

"इन चीज़ों की ज़ियारत के समय नबी सल्ल० की कल्पना मास्तिष्क में लाएं और दुरूद शरीफ़ की अधिक्ता रखें।"

(बदरूल अनवार-86)

एक और जगह लिखते हैं-

"नबी सल्ल० के जूते मुबारक के नक़्शे को छूने वाले को क़ियामत में बहुत अधिक भलाई मिलेगी और दुनिया में अत्यन्त ऐशो इशरत व सम्मान का जीवन बसर करेगा। उसे क़ियामत के दिन कामयाबी के उद्देश्य से बोसा देना चाहिए। जो इस नक़्शे पर अपने गाल रगड़े उसके लिए बड़ी अजीब बरकतें हैं।" (मजमूआ रसाइल अहमद रज़ा-144)

अन्दाज़ा लगाएं बरेलवी हज़रात की इन हरकतों और बुत परस्ती में क्या फ़र्क़ रह जाता है। अपने हाथों से एक तस्वीर बनाते हैं और फिर नबी सल्ल० की कल्पना अपने ज़ेहन में लाकर उसे चूमते अपनी आँखों से लगाते और अपने गालों पर रगड़ते हैं और फिर बरकतों के हुसूल की आशा करते हैं।

एक ओर तो तस्वीर और बुतों की इतनी ताअज़ीम करते हैं और दूसरी ओर अल्लाह की शान में इतनी गुस्ताख़ी और अनादर कि कहते हैं-

जूते शरीफ़ के नक़्शा पर बिस्मिल्लाह लिखने में कोई हरज नहीं

(मजमूआ रसाइल-304)

जनाब अहमद रज़ा साहब इन मुश्रिकाना रस्मों की असल ग़रज़ व ग़ायत की ओर आते हैं।

"ज़ियारत करने वाले को चाहिए कि वह कुछ नज़र करे ताकि उससे मुसलमानों की मदद हो। इस तरह ज़ियारत करने वाले और कराने वाले दोनों को सवाब होगा। एक ने बरकत देकर उनकी मदद की और दूसरे ने थोड़ा सा माल देकर फ़ाइदा पहुँचाया। हदीस में है-

"तुम में जिससे हो सके कि अपने मुसलमान भाई को नफ़ा पहुँचाए तो उसे चाहिए कि नफ़ा पहुँचाए (ज़रा दलील पर विचार करें) और हदीस में है-

अल्लाह अपने बन्दों की मदद में है जब तक बन्दा अपने भाई की मदद में है खा़स कर जब ये तबर्रूकात वाले हज़रात सादात किराम हों तो उनकी सेवा उच्च दर्जे की बरकत व सआदत है।"

(बदरूल अनवार मजमूआ रसाइल-50)

यह है बरेलवी दीन व शरीअत और ये हैं उस दीन के मौलिक उसूल व क़ाइदे। आम लोगों को बेवकूफ़ बनाकर किस तरह ये लोग अपना कारोबार चमकाना चाहते हैं और अपनी तिजोरियां भरना चाहते हैं क्या यह कल्पना की जा सकती है कि इस्लाम तस्वीरों व बुतों के सम्मान का हुक्म दे, उनको बोसा देने और हाथ से छूने को बरकत बताए और फिर उस पर चढ़ावे को प्रोत्साहन दे-कभी नहीं।

दीन को एक लाभकारी तिजारत बनाने वाले कुछ बरेलवी मुल्लाओं

ने जनता की दौलत को दोनों हाथों से लूटने के लिए कुछ ऐसी बिदअतें ईजाद की हैं जो खुल्लम खुल्ला किताब व सुन्नत के ख़िलाफ़ खुली बग़ावत है। बरेलवियों का अक़ीदा है कि यदि किसी ने सारी ज़िन्दगी नमाज़ न पढ़ी हो रोज़े न रखे हों मरने के बाद अपना माल ख़र्च करके उसे बख़्शवाया जा सकता है जिसे ये लोग हीलए इसक़ात का नाम देते हैं। इसका तरीक़ा भी देख लीजिए और बरेलवी ज़ेहनियत की दाद दीजिए-

"मय्यित की उम्र का अन्दाज़ा लगा कर मर्द की उम्र से 12 साल और औरत की उम्र से 9 साल (ना बालिग़ की कम से कम अवधि) कम कर दिए जाएं। बाक़ी उम्र में अन्दाज़ा लगाइए कि ऐसे कितने फ़राइज़ हैं जिनको वह अदा न कर सका और न क़ज़ा। इसके बाद हर नमाज़ के लिए सदक़-ए फ़ित्र की मात्रा फ़िदये के तौर पर ख़ैरात कर दी जाए। सदक़-ए फ़ितर की मात्रा आधा साअ (आज के हिसाब से 2 किलो 300 ग्राम) अनाज है।

इस हिसाब से एक दिन की वित्र समेत छः नमाज़ों का फ़िदया लगभग 12 सेर एक महीने का 9 मन और एक साल का 108 मन होगा।"

(ग़ायतुल एहतियात फ़ी जवाज़ि हीलतिल इसक़ात-34)

इन्नल्लज़ीना याकुलूना अमवालल यतामा ज़ुलमन इन्नमा याकुलूना फ़ी बुतूनिहिम नारन व स-यस्लव्ना सअीरा० (निसा-10)

"बे शक वे ज़ालिम जो यतीमों का माल खाते हैं वे असल में अपने

पेट में जहन्नम की आग भर रहे हैं ऐसे लोग जहन्नम में दाख़िल होंगे।

(निसा-10)

ला तज़िरू वाज़िरतन विज़रा उख़रा० (बनी इसराईल-15)
"किसी का बोझ दूसरा नहीं उठा सकता।"

व अन्लय्सा लिल्इन्सानि इल्ला मा-सआ़० (नजम-39)
"इन्सान को उसी की सज़ा मिलेगी जो उसने स्वयं कमाया।"

(नजम-39)

मगर बरेलवी हज़रात ने न जाने ये बहाने कहां से पैदा कर लिए हैं इनका स्रोत इस्लाम के अलावा कोई और दीन तो हो सकता है लेकिन इस्लामी शरीअत में इनका कोई वजूद नहीं।

कहते हैं कि अपने रिश्तेदार को बख़्शवाने के लिए इतनी दौलत शायद ही कोई खर्च करे फिर इसमें कमी के लिए दूसरे हीले बहाने बयान करते हैं ताकि उसे हैसियत से बाहर समझ कर बिल्कुल ही न छोड़ दिया जाए। जो लोग इन हीलों को नहीं मानते उनके बारे में इनका विचार है कि-

"वहाबी आदि को दुनिया से रूख़्सत होने वालों के साथ न कोई हित है न हमदर्दी और न फ़ुक़रा व ग़रीबी (मतलब बरेलवी मुल्लाओं) के लिए हमदर्दी की भावना। यदि कोई व्यक्ति हिसाब के अनुसार फ़िदया

अदा करे तो कितना अच्छा हो।" (हीलतुल इसक़ात-35)

यदि हर मौहल्ले के लोग अपने सगे संबन्धी को बख़्शवाने के लिए इन हीलों पर अमल शुरू करें तो इन मुल्लाओं की तो पाँचों उंगलियां घी में हो जाएं। इन हीलों से बे नमाज़ियों और रोज़े न रखने वालों की संख्या में वृद्धि हो सकती है। बरेलवी अकाबिरीन की तिजोरियां भर सकती हैं मगर अज़ाब के मुस्तहिक़ मुर्दों को बख़्शवाया नहीं जा सकता क्योंकि इन हीलों का न तो कुरआन में ज़िक्र है न हदीस में। जिसने दुनिया में जो कमाया आख़िरत में उसका फल पाएगा। यदि नेक है तो उसे इन हीलों की कोई आवशयक्ता नहीं और यदि बद है तो उसे इनका कोई फ़ाइदा नहीं।

अंगूठे चुमना भी एक बिदअत है जिसका हदीस से कोई सबूत नहीं। बरेलवी हज़रात इस बिदअत को साबित करने के लिए मन गढ़त और कम्ज़ोर रिवायतों का सहारा लेते हैं। जनाब बरेलवी लिखते हैं-

"हज़रत ख़िज़्र अलैहि० से रिवायत है कि जो व्यक्ति अश्हदु अन्ना मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह सुन कर अपने अंगूठों को चूमेगा और फिर अपनी आंखों पर लगाएगा उसकी आंखें कभी न दुखेगी।"

(फ़तावा रिज़विया-383)

जनाब अहमद रज़ा ने इस रिवायत को इमाम सख़ावी से नक़ल किया है जबकि इमाम सख़ावी ने इस हदीस को ज़िक्र करते हुए लिखा है-

"इस रिवायत को किसी सूफ़ी ने अपनी किताब में नक़ल किया है इसकी सनद में जिन रावियों के नाम हैं वे मुहद्दिसीन के निकट मजहूल

ग़ैर माअरूफ़ हैं (अर्थात यह गढ़ी हुई सनद है) और फिर हज़रत ख़िज़्र अलैहि० से किसने सुना इस बात का भी कोई उल्लेख नहीं।"

(अल मक़ा सिदुल हसना लिल्सख़ावी)

अर्थात इमाम सख़ावी जिस रिवायत को सूफ़िया के ख़िलाफ़ इस्तेमाल कर रहे हैं उसपर आलोचना कर रहे हैं और उसे कम्ज़ोर क़रार दे रहे हैं जनाब अहमद रज़ा पूरी इल्मी बेइमानी का सबूत देते हुए एक ग़ैर इस्लामी बिदअत को रिवाज देने के लिए उसे ही दलील में पेश कर रहे हैं।

इमाम सुयूती रहिम० लिखते हैं-

"वे तमाम रिवायतें जिनमें अंगूठों के चूमने का ज़िक्र, मुहम्मद ताहिर अलफ़त्नी और अल्लामा शौक़ानी रहिम० आदि ने उन तमाम रिवायतों को मन गढ़त क़राद दिया है। (तज़्किरतुल मौज़ूआत)

लेकिन जनाब इमाम अहमद रज़ा का बराबर आग्रह है कि-

"अंगूठे चूमने का इन्कार इजमाअ उम्मत (बरेलवी उम्मत)के मनाफ़ी है।" (फ़तावा रिज़विया-496)

बरेलवी ख़ुराफ़ात में से यह भी है कि वे कहते हैं-

"जिसने" ला इला-ह इल्लल्लाहु वहदहू ला शरीक लहु" यह सारी दुआ लिखकर मय्यित के कफ़न में रख दी वह क़ब्र की तन्गियों से बचा रहेगा और मुन्किर नकीर उसके पास नहीं आएंगे।"

(फ़तावा रिज़वियह-4-127)

इसी प्रकार बरेलवी हज़रात ने "अहदनामा" के नाम से एक दुआ

गढ़ रखी है जिसका कोई सबूत नहीं। इसके बारें में उनका अक़ीदा है-

"उसे जिस मुर्दे के कफ़न में रखा जाए अल्लाह उसके सारे गुनाह माफ़ कर देगा।" (जाअल हक़-340)

बरेलवी हज़रात किताब व सुन्नत और स्वंय फ़िक़्ह हनफ़ी का विरोध करते हुए बहुत सी ऐसी बिदअतों को कर जाते हैं जिनका सल्फ़ सालिहिन से कोई सबूत नहीं मिलता ! इनमें से एक क़ब्र पर अज़ान देना भी है। ख़ान साहब बरेलवी लिखते हैं-

"क़ब्र पर अज़ान देना मुसतहब है इससे मय्यित को फ़ायदा होता है।" (फ़तावा रिज़वियह-4-54)

क़ब्र पर अज़ान से शैतान भागता है और बरकतें उतरती हैं।"

(जाअल हक़-1-315)

यद्यपि फ़िक़ह हनफ़ी में स्पष्ट रूप से इसका विरोध किया गया है अल्लामा इब्ने हमाम रहिम० फ़रमाते हैं-

"क़ब्र पर अज़ान देना या दूसरी बिदअतों को करना ठीक नहीं, सुन्नत से केवल इतना साबित है कि नबी सल्ल० जब जन्नतुल बक़ीअ में तश्रीफ़ ले जाते तो फ़रमाते-"अस्सलामु अलय्कुम दा-र क़व्मुम मोमिनीन" इसके अलावा कुछ साबित नहीं। इन बिदअतों से बचना चाहिए।"

(अबरूल मक़ाल फी क़िब्लति इज्लाल-143)

इमाम शामी रहिम० कहते हैं-

"आजकल क़ब्र पर अज़ान देने का रिवाज है इसका कोई सबूत नहीं यह बिदअत है।" (बदरूल अनवार फी आदाबिल आसार-38)

महमूद बलख़ी रहिम० ने लिखा है-

"क़ब्र पर अज़ान देने की कोई हैसियत नहीं।"

(बदरूल अनवार-40)

बहर हाल बरेलवी हज़रात की ये वे शिक्षाएं हैं जो न केवल किताब व सुन्नत के विरोधी हैं बल्कि फ़िक़्ह हनफ़ी के भी ख़िलाफ़ हैं यद्यपि बरेलवी क़ौम फ़िक़्ह हनफ़ी का पाबन्द होने का दावा करती है।

अल्लाह से दुआ है कि वह हमें सुन्नत पर अमल करने और बिदअतों से बचे रहने का सौभाग्य प्रदान करे। आमीन।

●

बरेलवियत और कुफ़्र के फ़तवे

बरेलवी हज़रात में इस्लामी समुदाय के अकाबिरीन के ख़िलाफ़ जिस तरह कुफ़्र के फ़तवे लगाए, उनको नास्तिक, ज़िन्दीक़, मुर्तद क़रार दिया है और उनको गन्दी व नापाक गालियों से नवाज़ा है किसी व्यक्ति का उस पर भावुक होना और जवाब में वही तरीक़ा व शैली अपनाना यद्यपि स्वाभाविक है मगर हमारा अन्दाज़ा चूंकि सकारात्मक, नर्म और अहिंसा का है अत: हम कुफ़्र के फ़तवों का उल्लेख करने के बावजूद अपनी शैली में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं आने देंगे। वैसे भी मोमिन की शान यह नहीं है कि वह लाअ्न ता-अ्न का तरीक़ा व अन्दाज़ अपनाए।

बरेलवी मज़हब के अनुयायीयों ने अपने ख़ास अक़ीदों व दृष्टिकोणों को इस्लाम का नाम दे रखा है। उनके निकट अल्लाह के तमाम इख़्तियारात औलिया के पास हैं उनके तथा कथित बुजुर्गानिदीन ही लोगों की सुनवाई और उनकी हाजतें पूरी करते हैं वे इल्मे ग़ैब रखते हैं और ज़रा सी देर में पूरी दुनिया का चक्कर लगा कर अपने मुरीदों की तकलीफ़ों को दूर करते, उनको दुश्मनों से नजात दिलाते और मुसीबतों

से छुटकारा दिलाते हैं। उनके पास नफ़ा व नुक़सान पहुँचाने, मुर्दे को ज़िन्दा करने और गुनाहगारों को बख़्शने जैसे इख़्तियारात मौजूद हैं।

वे जब चाहें वर्षा कर दें जिसे चाहें कुछ भी दे दें और जिसे चाहें महरूम कर दें। जानवर उनके आज्ञापालक हैं फ़रिश्ते उनके दरबान हैं वे हश्र व क़ियामत के दिन, हिसाब व किताब के समय अपने अनुयायियों की मदद करने पर सामर्थ हैं। ज़मीन व आसमान में उन की ही बादशाही है जब चाहें वे समुन्द्रों की तह में उतर जाएं, सूरज उनकी इजाज़त के बिना उदय नहीं होता, वह अन्धे को आँख वाला कर सकते हैं और कोढ़ी को ठीक कर सकते हैं। मरने के बाद उनकी ताक़त में हैरतनाक हद तक वृद्धि हो जाती है दिलों के राज़ जानने वाले और मौत व ज़िन्दगी के स्वामी हैं।

ये तमाम इख़्तियारात जब बुज़ुर्गाने दीन के पास हैं तो किसको क्या ज़रूरत पड़ी है कि वह अल्लाह को पुकारे, मस्जिदों का रूख़ करे रात के अंधेरों में उठकर वह अपने रब के सामने गिड़गिड़ाए। वह किसी पीर के नाम की नज़र नियाज़ देगा अपने आपको उसका मुरीद बना लेगा। वह स्वयं ही उसकी देखभाल रखेगा। मुसीबत में उसके काम आएगा और क़ियामत के दिन जहन्नम से बचाकर जन्नत में दाख़िल करेगा।

साफ़ सी बात है जिसकी अक़ल ठीक हो और इस्लाम की शिक्षाओं से थोड़ी भी जानकारी रखता हो वह तो इन अक़ीदों को नहीं मानेगा। वह तो जगत के रब को अपना पैदा करने वाला, स्वामी, रिज़्क़ देने वाला और दाता व हाजत पूरी करने वाला मानेगा और मख़लूक़ को उसका

मोहताज और उसके बन्दे ही समझेगा। वह इन्सान होकर इन्सान की गुलामी नहीं कर सकता। बस यही अपराध था अहले हदीस का उन्होंने इन मुश्रिकाना अक़ीदों को न माना अतएवं जनाब अहमद रज़ा ख़ां साहब बरेलवी और उनके अनुयायियों के तकफ़ीरी फ़त्वों का निशाना बन गए। अहले हदीस ने कहा कि हमें जनाब बरेलवी के पालन का नहीं बल्कि किताब व सुन्नत के पालन का हुक्म दिया गया है। उन्हें नबी सल्ल० का यह इर्शाद प्रिय था-

"मैं तुम्हारे अन्दर दो चीज़ें छोड़े जा रहा हूँ जब तक उनको मज़बूती से थामे रहोगे गुमराह नहीं होगे अल्लाह की किताब और मेरी सुन्नत।"

(मिश्कात शरीफ़)

यही जुर्म था जो उन्हें मक़तल ले गया,

उनपर फ़तवों की बौछार हुई और वे काफ़िर, गुमराह व मुर्तद ठहराए गए।

अल्लाह का इर्शाद है-

अती उुल्लाहा वर्रसूला ल अल्लकुम तुरहमून०

(आले इमरान-132)

अल्लाह और उसके रसूल का पालन करो ताकि तुम पर रहम किया जाए।

अती उुल्लाहा व रसूलहू वला तवल्लव अन्हु व अन्तुम तस मऊन०

(अन्फ़ाल-20)

"अल्लाह और उसके रसूल का पालन करो और उनके आदेश सुनने के बावजूद उनसे मुंह न मोड़ो।" (अन्फ़ाल-20)

Space

या अय्युहल्लज़ीना आ-मनू अतीअुल्लाहा व अतीअुर्रसूला०

(निसा-59)

'ऐ ईमान लाने वालो ! अल्लाह और उसके रसूल ही का पालन करो।" (निसा-59)

अल्लाह तआला ने कुरआन मजीद में अपनी व अपने नबी का पालन करने का ही हुक्म दिया है मगर बरेलवी अक़ाइद व विचार धारा की दलीलें चूंकि किताब व सुन्नत से नहीं ली गयी और अहले हदीस केवल किताब व सुन्नत ही पर भरोसा करते हैं तथा लोगों को इसी की दावत देते हैं अतएवं बरेलवी हज़रात को इनपर सख़्त गुस्सा था कि यह उनके कारोबारे ज़िन्दगी को ख़राब और उनकी चमकी हुई दुकानों को वीरान कर रहे हैं।

यही अपराध इमाम मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब नजदी रहिम० और उनके साथियों का था। बरेलवी हज़रात के निकट देवबन्दी भी इस्लाम से ख़ारिज हैं उनका भी अपराध यह था कि वे इनके गढ़े हुए क़िस्से काहानियों पर ईमान नहीं लाए और जनाब अहमद रज़ा का अनुसरण नहीं किया।

वे तमाम शाइर जिन्होंने समाज को ग़ैर इस्लामी रिवाजों से पाक

करना चाहा वे भी बरेलवियों के निकट काफ़िर व मुर्तद क़रार पाए। उनका दोष था कि वे लोगों को यह क्यों बतलाते हैं कि ख़ानक़ाही निज़ाम और आसतानों पर होने वाली खुराफ़ात व बिदअतों का इस्लाम से कोई ताल्लुक़ नहीं। शिक्षा विद्ध भी काफ़िर व मुर्तद क़रार दिए गए क्योंकि वे शिक्षा द्वारा शिर्क व जिहालत के अंधेरों का मुक़ाबला करते और समाज से हिन्दुवाना रस्म व रिवाजों को ख़त्म करने के लिए आवाज़ उठाते थे। और इससे उनका कारोबार ख़त्म हो सकता था। इसी प्रकार स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों, मुस्लिम राजनीतिज्ञों, ख़िलाफ़त तहरीक के नेताओं, अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ जिहाद करने वाले व जिहाद की दावत देने वाले बरेलवियों के फ़तवों और दुश्मनी से सुरक्षित न रह सके क्योंकि वे जनाब बरेलवी के दृष्टिकोण से सहमत न थे।

बरेलवियों के तकफ़ीरी मिशन के निशाने से शायद ही कोई व्यक्ति बच सका हो। हर वह व्यक्ति उनके निकट काफ़िर व मुर्तद ठहरा जिसका थोड़ा सा भी मतभेद हुआ यहाँ तक कि बहुत से ऐसे लोग भी उनके फ़तवों से न बच सके जो अक़ीदों व विचारधारा में तो उनके साथ थे मगर वे विरोधियों को काफ़िर कहने को तैयार न थे जबकि बरेलवियों के निकट विरोधियों के कुफ़्र व इर्तिदाद में संदेह करने वाला भी काफ़िर है इसको आगे विस्तार से बयान किया जाएगा।

इन्होंने अपने एक साथी अब्दुल बारी लखनवी को भी काफ़िर क़रार दे दिया क्योंकि उन्होंने कुछ उलमा को काफ़िर क़रार देने से इन्कार कर दिया था। और इसके लिए एक पूरी किताब "अत्तारी अददारी लि

हफ़वाति अब्दुल बारी" नाम से लिख डाली। जनाब अहमद रज़ा व उनके साथी इस वाक्य को बार बार दोहराते हैं "जिसने फ़लां के कुफ़्र में शक किया वह भी काफ़िर या जो उसे काफ़िर न कहे वह भी काफ़िर।"

प्रसिद्ध इस्लामी कातिब मौलाना अब्दुल हई लखनवी अहमद रज़ा बरेलवी के हालात का उल्लेख करते हुए लिखते हैं-

"अहमद रज़ा फ़िक्ही और कलामी मसाइल में बड़े हिंसक थे बहुत जल्द कुफ़्र का फ़तवा लगा देते। तक्फ़ीर का झंडा उठाकर मुसलमानों को काफ़िर क़रार देने की ज़िम्मेदारी उन्होंने बड़ी अच्छी निभाई। बहुत से उनके साथी भी पैदा हो गए जो इस सिलसिले में उनका साथ देते रहे।

अपनी किताब हिसाबुल हरमैन में लिखते हैं-जो व्यक्ति इनके कुफ़्र व अज़ाब में ज़रा सा भी संदेह करे वह भी काफ़िर है। जनाब अहमद रज़ा सारी ज़िन्दगी मुसलमानों पर कुफ़्र के फ़तवे लगाने में व्यस्त रहे यहाँ तक कि कुफ़्र के फ़तवे को एक साधारण सा काम मानने लगे और उनके इस अमल के कारण हिन्दुस्तान के मुसलमान आपसी मतभेद व फूट का शिकार हो गए।"

(नुज़हतुल ख़्वातिर इमाम अब्दुल हई लखनवी-8-39)

मुसलमान को काफ़िर कहने में बरेलवी अकेले नहीं थे बल्कि उनके अनुयायियों ने भी मुसलमानों को काफ़िर व मुर्तद के इस वर्ग में शामिल करने के लिए ऐड़ी चोटी का ज़ोर लगा दिया। अहले हदीस का इसके अलावा क्या अपराध था कि वे लोगों को शिर्क व बिदअत से बचने की

नसीहत करते और मतभेद के समय किताब व सुन्नत ही से हिदायत व रहनुमाई प्राप्त करने की दावत देते थे।

अल्लाह का इर्शाद है-

फ़इन तनाज़अ्तुम फ़ी शैइन फ़रूद्दूहु इलल्लाहि वर्रसूलि०

"यदि तुम्हारा आपस में मतभेद हो जाए तो उसके हल के लिए अल्लाह और उसके रसूल की ओर पलटो।" (निसा-59)

इसी प्रकार अहले हदीस की दावत है कि उम्मते मुहम्मदिया पर नबी सल्ल० के अलावा किसी का पालन व पैरवी फ़र्ज़ नहीं चाहे वह कितना ही बड़ा वली व मुहद्दिस और इमाम ही क्यों न हो। हदीस में है-

"जब तक तुम किताब व सुन्नत का अनुसरण करते रहोगे गुमराह नहीं होगे।" (मिश्कात)

अहले हदीस ने हिन्द व पाक में मुश्रिकाना रस्म रिवाज को इस्लामी सभ्यता का हिस्सा बनने से रोका और बिदअत व खुराफ़ात का खुलकर मुक़ाबला किया। उन्होंने कहा कि दीने इस्लाम के पूर्ण होने के बाद अब किसी नयी चीज़ की ज़रूरत नहीं रही।

अल यौ-मु अक्मल्तु लकुम दीनकुम व अत्मम्तु अलय्कुम नेअ्मती। अर्थात दीने इस्लाम नबी के दौर ही में मुकम्मल हो चुका था दीन में किसी नए मसले की ईजाद बिदअत है और बिदअत के बारे में नबी सल्ल० का इर्शाद है-

"जो दीन में कोई नयी चीज़ ईजाद करे उसे रद्द कर दिया जाए एक

रिवायत में है सबसे बुरी चीज़ दीन में नयी ईजादात हैं हर नयी चीज़ बिदअत है और हर बिदअत गुमराही।" (मिशकात)

नेकी और सवाब के तमाम कामों को अल्लाह और उसके रसूल ने बयान कर दिया है। नबी सल्ल० के दौर के बाद ईजाद होने वाली रस्में और बिदअतें इस्लाम का अंश नहीं इन्हें रद्द कर देना चाहिए।

अहले हदीस के उलमा ने इसी बात की तरफ़ दावत दी। बरेलवी हज़रात ने इस दावत को अपने अक़ीदों व दृष्टिकोणों के ख़िलाफ़ समझा क्योंकि इस दावत में उनके मेले उर्स व मीलाद तीजे व चालीसवें, क़व्वाली और गाने बजाने, नाच गानों की महफ़िलों और पेट भरने व नफ़सानी इच्छाओं की पूर्ति के लिए ईजाद की जाने वाली दूसरी बिदअतें ख़तरे में पड़ जाती थीं। अतएवं उन्होंने उलमा अहले हदीस को अपना सबसे बड़ा दुश्मन समझा और उनके ख़िलाफ़ कुफ़्र के फ़तवों की मुहिम शुरू कर दी।

इस सिलसिले में उन्होंने सबसे पहले वहाबी तहरीक के सर्वे सर्वा शाह इस्माईल शहीद रहिम० को निशाना बनाया। क्योंकि शिर्क बिदअत के विरूद्ध खुलकर एलाने जंग करने वाले वे सबसे पहले व्यक्ति थे। वे तौहीद व सुन्नत का परचम लेकर निकले और कुफ़्र व बिदअत के महलों में भूकम्प पैदा करते चले गए। उन्होंने जब देखा कि मुश्रिकाना अक़ीदे इस्लामी सभ्यता का अंश बन रहे हैं अल्लाह की सीमाएं ढह रही हैं इस्लामी शिआर का उपहास उड़ाया जा रहा है और जाहिल सुफ़िया ग़लत दृष्टिकोण का प्रचार कर रहे हैं तो वे किताब व सुन्नत की रोशनी में सही

इस्लामी दावत का झंडा लेकर उठे और अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ जिहाद के साथ साथ शिर्क व बिदअत के तूफ़ान का भी मुक़ाबला करने के लिए मैदान में उतर आए।

उन्होंने अपनी किताब तक्वियतुल ईमान[1] में लोगों को तौहीद के अक़ीदे की ओर दावत दी और ग़ैरूल्लाह से फ़रियाद करने जैसे अक़ीदों को बातिल साबित किया। तक़लीद व धार्मिक तास्सुब को भी जड़ से उखाड़ फेंका।

शाह इस्माईल शहीद अंग्रेज़ों और सिखों के ख़िलाफ़ जिहाद में भी व्यस्त रहे और दीनी शिक्षा देने, वाअ्ज़ और तब्लीग़ के द्वारा भी तौहीद का सबक़ मुसलमानों को देते रहे। वे दिन को जिहाद करते और रातों को नफ़िल में खड़े रहते। लगातार मेहनत और संघर्ष से शिर्क व बिदअत का मुक़ाबला करते हुए वे अल्लाह के रास्ते में शहीद हो गए। उनपर क़ुरआन की यह आयत पूरी तरह ठीक उतरती है-

Space

इन्नल्लाहश्तरा मिनल म्मोमिनीना अन्फ़ु-स-हुम व अम वालहुम बिअन्ना लहुमुल जन्न-त फ़-यक़्तुलूना व युक़्तलून०

"अल्लाह ने मोमिनों से उनकी जानें और उनका माल ख़रीद लिया है और इसके बदले में उनके लिए जन्नत लिख दी है। वे अल्लाह के

---

1. इमाम मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब की किताब अत्तौहीद और तक़्वीयतुल ईमा एक दूसरे से बड़ी हद तक समान हैं दोनों एक ही तर्ज़ पर लिखी गयी है-

रास्ते में जिहाद करते हैं और काफ़िरों को क़त्ल करते करते स्वयं भी शहीद हो जाते हैं।" (तौबा-111)

शाह शहीद रहिम० के बाद इन्होंने उनकी दावत के उत्तराधिकारी सय्यद इमाम नज़ीर हुसैन मुहद्दिस देहलवी रहिम० को तकफ़ीरी मुहिम का निशाना बनाया उनका दोष थाकि उन्होंने हदीस के प्रचार प्रसार में उस समय मौजूद दुनिया के उलमा से ज़्यादा रोल अदा किया। उनके शिष्यों ने दुनिया भर में हदीस की शिक्षा के प्रचार के लिए निरंतर मेहनत की और दर्स व तदरीस में लगे रहे। इसी लिए मिसरी विद्वान रशीद रज़ा ने लिखा है-

"यदि हमारे हिन्दुस्तानी अहले हदीस भाई हदीस के इल्म की व्यवस्था न करते तो शायद हदीस का ज्ञान का बहुत से क्षेत्रों में वजूद ख़त्म हो जाता।" क्योंकि-"बहुत से मुक़ल्लिदीन हदीस की किताबों का सिवाए तबर्रूक के कोई फ़ायदा नहीं समझते थे।"

जनाब बरेलवी ने शाह शहीद और सय्यद नज़ीर हुसैन रहिम० को काफ़िर क़रार दिया। शाह शहीद रहिम० की तक्फ़ीर के लिए इन्होंने एक मुस्तक़िल रिसाला" अल्कव्-ब-तुश्शहाबियत फ़ी कुफ़रियाति अबिल वहाबियह" लिखा। इसके वाक्य देखिए-

'ऐ सरकश कपटियो, अवज्ञा कारियो ! तुम्हारा बड़ा (शाह इस्माईल शहीद) यह गुमान करता है कि नबी सल्ल० की प्रशंसा आम इन्सानों से भी कम हैं। नबी सल्ल० से नफ़रत व कीना तुम्हारे मुंह से ज़ाहिर हो गयी जो तुम्हारे सीनों में है वह इससे भी अधिक है तुम पर शैतान छा

चुका है उसने तुमको खुदा की राह से और याद से और नबी सल्ल० की सम्मान से हटादिया है। कुरआन में तुम्हारी ज़िल्लत व रूसवाई बयान हो चुकी है। तुम्हारी किबात तक़वीयतुल ईमान असल में तफ़वीयतुल ईमान है अर्थात वह ईमान को नष्ट कर देने वाली है अल्लाह तुम्हारे कुफ़र से ग़फ़िल नहीं है।"

आगे इसी किताब में लिखते हैं-

"वहाबिया और उनके पेश्वा (शाह इस्माईल) पर अधिकतर कारणों से क़तअन यक़ीनन कुफ़्र लाज़िम और हस्बे तसरीहात फ़ुक़हाए किराम उन पर कुफ़्र का हुक्म साबित व क़ाइम है और बज़ाहिर उनका कलिमा पढ़ना उनको लाभ नहीं पहुँचा सकता और काफ़िर होने से नहीं बचा सकता और उनके पेश्वा ने अपनी किताब तक़वीयतुल ईमान में अपने और अपने सारे अनुयायियों के खुल्लम खुल्ला काफ़िर होने का साफ़ इक़रार किया है।"

अब आप ज़रा इनके काफ़िर होने का सबब भी देख लीजिए-

लिखते हैं-

"इस्माईल देहलवी कहता है कि एक व्यक्ति का अनुसरण पर जमे रहना बावजूद उसके अपने ईमाम के ख़िलाफ़ स्पष्ट हदीस मौजूद हो ठीक नहीं है उसका यह कहना उसकी कुफ़्रियात में से है।"

अर्थात इमाम इस्माईल शहीद इसलिए काफ़िर है कि वे कहते हैं कि स्पष्ट हदीस के मुक़ाबले में किसी के क़ौल पर अमल करना जाइज़ नहीं है यह उनकी कुफ़्रिया बातों में से हैं-

इसी किताब में अहमद रज़ा आगे लिखते हैं-

"उन्हें काफ़िर कहना फुक़्हा की रू से वाजिब है। स्पष्ट रहे कि वहाबिया मन्सूब इब्न अब्दुल वहाब नजदी हैं इब्न अब्दुल वहाब उनका पहला अध्यापक था उसने किताबुत्तैहीद" लिखी, तक़वीयतुल ईमान उसका अनुवाद है। इनका पेशवा नजदी था। इस फ़िरक़े अर्थात वहाबिया, इस्लामिया और इसके इमाम नाफ़र जाम पर जज़मन, क़तअन, यक़ीनन इजमालन ब वजूह कसीरह कुफ़्र लाज़िम है और बिला शुब्हा जमाहीर फुक़्हाए किराम की तसरीहाते वाज़ेहा पर सबके सब काफ़िर व मुर्तद हैं।"

एक और जगह लिखते हैं-"इस्माईल देहलवी काफ़िर महज़ था।"

(मलफ़ूज़ात अहमद रज़ा-1-110)

एक बार उनसे पूछा गया कि इस्माईल देहलवी के बारे में क्या इर्शाद है तो जवाब दिया-"मेरा अक़ीदा है वह यज़ीद की तरह है यदि उसे कोई काफ़िर कहे तो उसे रोका न जाए।" (मलफ़ूज़ात अहमद रज़ा-1-111)

"इस्माईल देहलवी सरकश, तागी़ शैतान लअीन का बन्दा दागी़ था।" (अलअमन वल अुला-112)

"इमामुल वहाबिया यहूदी विचार धारा का आदमी था।"

(अल अमन वलअुला-113)

उनकी किताब तक़वीयतुल ईमान के बारे में इर्शाद फ़रमाते हैं-

"तक़वीयतुल ईमान, ईमान को नष्ट कर देने वाला वहाबिया का झूठा कुरआन है।" (अल अमन वल अुला-72)

"मुहम्मद सल्ल० ने उसके आधुनिक कुरआन तक़वीयतुल ईमान को जहन्नम में पहुँचाया।" (अल अमन वल अुला-95)

"तक़वीयतुल ईमान आदि सब कुफ़्री क़ौल नजिस बोल हैं जो ऐसा न जाने ज़िन्दीक़ है। (मलफ़ूज़ात अहमद रज़ा-114)

"इस किताब का पढ़ना ज़िना और शराब पीने से भी बुरा है।"

(मलफ़ूज़ात अहमद रज़ा-115)

स्पष्ट है कि यह सारा प्रकोप इसलिए है कि तक़्वीयतुल ईमान के कारण बहुत से लोगों को हिदायत नसीब हुई और वह शिर्क व क़ब्र परस्ती की लानत से तौबा करके अल्लाह तआला की वहदानियत के क़ाइल हो गए।

जनाब बरेलवी भली प्रकार जानते थे कि इस किताब को पढ़ने वाला प्रभावित हुए बिना नहीं रहेगा अतएवं उन्होंने इसके पढ़ने को हराम क़रार दे दिया। तक़्वीयतुल ईमान कुरआनी आयतों और हदीसों से भरी हुई है और पढ़ने वाला जब एक ही विषय पर इतनी आयतों को देखता है तो वह हैरान रह जाता है कि ये तमाम आयतें बरेलवी अक़ीदों व विचारधारा से टकराती हैं और उनके मतलब का बरेलवी मज़हब के मौलिक दृष्टिकोणों से कोई ताल्लुक़ नहीं। इस किताब का पाठक कशमकश का शिकार हो कर अन्त में इस तनीजे पर पहुँचता है कि वह जिन अक़ीदों का हामिल है उनका शरीअते इस्लामिया से कोई वास्ता नहीं है और वह अपने शिर्किया अक़ीदों को छोड़ कर तौहीद व सुन्नत पर अमल करना शुरू कर देता है जनाब बरेलवी को इस बात का बहुत दुख था अतएवं स्वयं को बदलने के बजाए तकूवीयतुल ईमान को अपने हसद व जलन का निशाना बनाते रहे।

कुरआन करीम में है-

इज़ा ज़ुकिरल्लाहु वजिलत कुलूबुहुम व इज़ा तुलियत अलयहिम आयातुहू ज़ादत्हुम ईमाना।

"मोमिनों के सामने जब अल्लाह का ज़िक्र आता है तो उनके दिल डर जाते हैं और जब अल्लाह की आयतें उनको पढ़कर सुनायी जाती हैं तो वे उनके ईमान को और अधिक शक्ति शाली बना देती हैं।

(अन्फ़ाल-2)

व इज़ा समिअू मा उन्ज़िला इलर्रसूलि तरा आअ्युनहुम तफ़ीज़ुमिनद दमअि मिम्मा अ-र-फू मिनल हक़्क़ि।

"जब मोमिन कुरआन मजीद सुनते हैं और उनको हक़ की पहचान होती है तो उनकी आंखों से आँसू जारी हो जाते हैं।" (कुरआन)

बहरहाल कुरआन करीम की तिलावात और उसे समझने के बाद कोई व्यक्ति भी बरेलवी अक़ीदों से तौबा किए बिना नहीं रह सकता। इसी तरह नबी सल्ल० के इर्शादात व हदीसों को सुनकर किसी मोमिन के लिए उनको माने बिना कोई चारा नहीं।

व माकाना लिमोमिनिन वला मोमि-नतिन इज़ा क़ज़ल्लाहु व रसूलुहू अमरन अयंयकून लहुमुल ख़ि-य-रतु

"जब अल्लाह और उसका रसूल किसी बात का फ़ैसला कर दे तो

उसके आगे किसी मोमिन मर्द या मोमिन औरत को चूं चरां करने का हक़ नहीं।" (सूरह अहज़ाब-36)

व मय्युशाकि़ क़िर्रसूला मिम्बअ्दि मा तबय्यना लहुल हुदा व यत्तबिअ गय्रा सबीलिल मोमिनीना नुवल्लिहीमा तवल्ला व नुस्लिही जहन्न-म व साअत मसीरा।

"हिदायत के स्पष्ट हो जाने के बाद जो व्यक्ति अल्लाह के रसूल का अनुपालन करेगा और मोमिनों के रास्ते के अलावा किसी और का अनुसरण करेगा हम उसे गुमराही की ओर फेर देंगे और जहन्नम में दाखि़ल करेंगे और जहन्नम बुरा ठिकाना है।" (निसा-115)

मा आताकुमुर्रसूलु फ़-खुज़ूहु वमा नहाकुम अन्हु फ़न्तहू

"जो अल्लाह का रसूल कहे उस पर अमल करो और जिससे रोके उस से रूक जाओ।" (हश्र-7)

अब जिस व्यक्ति का भी यह ईमान हो कि अल्लाह और उसके रसूल के आदेशों के मुक़ाबले में किसी के कथन की कोई हैसियत नहीं तो ज़ाहिर है कि जब वह शिर्क व बिदअत के खि़लाफ़ तक़वीयतुल ईमान में मौजूद आयतों व हदीसों को पढ़ेगा तो वह रज़ा ख़ा के विचारों व दृष्टिकोणों पर क़ायम नहीं रह सकेगा और यही चीज़ ख़ां साहब और उनके साथियों पर बिदअत व खुराफ़ात और नज़र व नियाज़ के ज़रिए हासिल होने वाली कमाई को बन्द करने का कारण था अतः उन्होंने ये सारे फ़तवे लागू करके

अपने गुस्से को स्पष्ट किया।

सय्यद नज़ीर हुसैन मुहद्दिस देहलवी रहिम० कि जिन्हें जनाब बरेलवी काफ़िर व मुर्तद क़रार देते थे उनके बारे में मौलाना सय्यद अबुल हसन अली नदवी के वालिद अल्लामा अब्दुल हई लखनवी रहिम० की किताब "नुज़हतुल ख़वातिर" का एक वाक्य यहाँ दिया जाता है जिसमें आपने सय्यद नज़ीर हुसैन मुहद्दिस देहलवी के हालात बयान किए हैं।

वे लिखते हैं-

"हज़रत हूसैन बिन मोहसिनुल अन्सारी फ़रमाते हैं कि सय्यद नज़ीर हुसैन यकताए ज़माना थे। इल्म व फ़ज़्ल और हिल्म व बुर्दबारी में उनका कोई मिसाल न था। वे किताब व सुन्नत की शिक्षाओं की ओर लोगों की रहनुमाई फ़रमाते थे। हिन्दुस्तान के उलमा की बड़ी संख्या उनकी शिष्य थी। हसद के कारण कुछ लोग उनका विरोध करते रहे। मगर उनके हसद की वजह से इस श्रेष्ठ और महान इमाम व मुहद्दिस के सम्मान व दर्जों में कमी की बजाए वृद्धि ही होती रही।"

स्वयं अल्लामा अब्दुल हई फ़रमाते हैं-

"इमाम नज़ीर हुसैन मुहद्दिस देहलवी रहिम० की इल्मी शान व महानता पर तमाम उलमा की सहमति है आपने दर्स व तदरीस और इफ़्ता द्वारा इस्लामी उलूम की सेवा की। मैं स्वयं 1312 हिजरी में उनका शिष्य रहा हूँ। उसूले हदीस और उसूले फ़िक़्ह में उनसे ज़्यादा माहिर कोई न था। कुरआन व हदीस पर उनको पूर्ण उबूर हासिल था तक़वा व परहेज़गारी में भी उनकी कोई मिसाल न थी। हर समय दर्स व तदरीस

या ज़िक्र व तिलावत में व्यस्त रहते। अरब व ग़ैर अरब में उनके शिष्यों की संख्या बहुत अधिक थी वे अपने दौर के रईसुल मुहद्दिस थे।

दूसरे अइम्मा की भान्ति उनको भी बहुत सी आज़माइशों का सामना करना पड़ा। अंग्रेज़ दुश्मनी के आरोप में गिरफ़तार किए गए एक साल जेल में रहे। रिहा होने के बाद दोबारा दर्स व तदरीस में लग गए। फिर हिजाज चले गए। वहाँ आपके ऊपर आपके विरोधियों ने बहुत से आरोप लगाए। आपको गिरफ़तार कर लिया गया। मगर बरी होने पर एक दिन बाद छोड़ दिया गया।

आप वापस हिन्दुस्तान तशरीफ़ लाए यहाँ भी आप पर तकफ़ीरी फ़तवों की बौछार कर दी गयी। आपने तमाम तकलीफ़ों को सहन करके हिन्दुस्तान को कुरआन व हदीस के इल्म से रोशन किया और असबियत व जमूद की ज़ंजीरों को टूकड़े टूकड़े कर दिया।

आप अल्लाह की नेमतों में से एक नेमत थे। हिन्दुस्तान पर आपके बहुत अधिक एहसान हैं। कुरआन व हदीस के उलूम से दिलचस्पी रखने वाले आपके इल्मी कारनामों पर पूरी तरह सहमत हैं। अल्लाह आपको इसका अज्र प्रदान करे।" (नुज़हतुल ख़्वातिर-8-448)

आगे फ़रमाते हैं-

"सय्यद नज़ीर हुसैन मुहद्दिस रहिम० अधिकांश दर्स व तदरीस में व्यस्त रहे इसलिए आपकी किताबें बहुत अधिक हैं आपकी मशहूर किताबें मेयारे हक़, सबूतुल हक़, मजमूआ फ़तावा, रिसालतुल वली बित्तिबाइन्नबी, वक़अतुल फ़तवा व दाफ़अतुल बलवी, और रिसालतुफ़ी अबतालि अमलिल

मोलिद शामिल हैं।

अलबत्ता यदि आपके फ़तावा को जमा किया जाए तो कई मोटी किताबें तैयार हो जाऐं। आपके शिष्यों के कई वर्ग हैं-इनमें जो मशहूर हैं उनकी संख्या शेष शिष्यों हज़ारों शिष्यों से ऊपर है।"

आप रहिम० के मशहूर शिष्यों में सय्यद शरीफ़ हुसैन, मौलाना अब्दुल्लाह ग़ज़नवी, मौलाना अब्दुल जब्बार ग़ज़नवी, मौलाना मुहम्मद बशीर सहसवानी, सय्यद अमीर हुसैन, मौलाना अमीर अहमद अल हुसैन बटालवी, मौलाना अब्दुल्लाह ग़ाज़ीपुरी, सय्यद मुस्तफ़ा टोन्की, सय्यद अमीर अली मलीहाबादी, क़ाज़ी मुल्ला मुहम्मद पेशावरी, मौलाना गुलाम रसूल, मौलाना शमसुल हक़ दयानवी, शेख़ अब्दुल्लाह अल मग़रिबी, शेख़ मुहम्मद बिन नासिर बिन अल मुबारक नजदी और शेख़ साअद बिन हम्द बिन अतीक़ हैं।

बहुत से उलमा ने क़सीदों की शक्ल में आपकी सेवाओं को पेश किया है। मौलाना शम्सुल हक़ दयानवी ने "ग़ायतुल मक़्सूद" में आप की जीवन कथा लिखी है। इसी तरह मौलाना फ़ज़ल हुसैन मुज़फ़्फ़र पुरी ने अपनी किताब "अल हयात बाअ्दल ममात" में आपके जीवन के हालात विस्तार से बयान किए हैं।

मुझे (मौलाना अब्दुल हई) सय्यद साहब रहिम० ने अपने हाथों से सनद इजाज़त प्रदान की 1312 हिजरी में आप रहिम० की वफ़ात 10 रजब 1320 हिजरी सोमवार को दिल्ली में हुई।

सय्यद नज़ीर हुसैन मुहद्दिस देहलवी रहिम० के दर्स ने बुख़ारा व

बग़दाद की मज्लिसों की याद ताज़ा कर दी। हिन्दुस्तान के कोने कोने से लोग हदीस के इल्म की प्राप्ती के लिए आपके दर्स में शामिल होने लगे। जनाब अहमद रज़ा बरेलवी ने इल्म व माअ्रफ़त के इस बढ़ते धार को अपनी ख़ुराफ़ात व बिदअतों के लिए ख़तरा समझते हुए आपको ताअन व तशनीअ और तकफ़ीर का निशाना बनाया। उन्होंने कहा-''नज़ीर हुसैन देहलवी इमामला मज़हबां, मुजतहिद, नामुक़ल्लिदा, मुख़तरअ, तर्ज़नवी और मुबतदअ आज़ादरवी है। (फ़तावा रिज़वियह-2-210)

आगे लिखते हैं-

''नज़ीर हुसैन देहलवी के अनुयायी सरकश और शैतान, ख़न्नास के मुरीद हैं। (हिसामुल हरमैन-19)

तुम पर लाज़िम है कि अक़ीदा रखो बेशक नज़ीर हुसैन देहलवी काफ़िर व मुर्तद है और उसकी किताब मेयारे हक़ कुफ़्री क़ौल और पेशाब से अधिक नजिस है। वहाबियत की दूसरी किताबों की तरह।''

(दामाने बाग़ सुबहानुस्सुबूह-136)

केवल शाह इस्माईल शहीद रहिम० और सय्यद नज़ीर हुसैन मुहद्दिस देहलवी ही काफ़िर व मुर्तद नहीं बल्कि जनाब बरेलवी के निकट सारे अहले हदीस कुफ़्फ़ार व मुर्तद हैं। इर्शाद फ़रमाते हैं-

''ग़ैर मुक़ल्लिद (अहले हदीस) सब बेदीन, पक्के शैतान और पूरे मलाऊीन हैं।'' (सुबहानुस्सुबूह-134)

''जो शाह इस्माईल और नज़ीर हुसैन आदि का मोअ्तक़िद हुआ वह इब्लीस का बन्दा जहन्नम का निवासी है अहले हदीस सब काफ़िर व मुर्तद

हैं।" (फ़तावा रिज़वियह-6-33)

ग़ैर मुक़ल्लिदीन, अहले बिदअत और जहन्नमी हैं। वहाबियों से मेल जोल रखने वाले से भी निकाह जाइज़ नहीं है वहाबी से निकाह पढ़ाया तो इस्लाम व निकाह को दोहराना ज़रूरी। वहाबी मुर्तद का निकाह न जानवर से हो सकता है न इन्सान से जिससे होगा ख़ालिस ज़िना होगी।"

(फ़तावा रिज़वियह-10-210)

वहाबियों से मेल जोल को हराम क़रार देने वाले का हिन्दुओं की नज़र व नियाज़ के बारे में फ़तवा भी देखिए-

इनसे सवाल किया गया कि हिन्दुओं की नज़र व नियाज़ के बारे में क्या ख़्याल है ? क्या उनका खाना पीना जाइज़ है ? जवाब में इर्शाद फ़रमाते हैं हां इन बातों पर आदमी मुश्रिक नहीं होता।"

(फ़तावा रिज़विया-10-210)

एक दूसरी जगह हर प्रकार की नज़र व नियाज़ ग़ैरूल्लाह को मबाह क़रार दिया है। मगर सय्यद नज़ीर हुसैन मुहद्दिस देहलवी और उनके शिष्यों को मल्अून क़रार देते हैं।

"नज़ीरियह लअ्नहुमुल्लाहु मलअून व मुर्तद है।"

(फ़तावा रिज़वियह-6-59)

अहले हदीस को काफ़िर व मुर्तद कहने पर ही बस नहीं करते बल्कि अपनी आदत के अनुसार गाली देते हुए और गन्दी ज़बान इस्तेमाल करते हुए लिखते हैं-

"ग़ैर मुक़ल्लिदीन जहन्नम के कुत्ते हैं राफ़ज़ियों को उनसे बदतर

कहना राफ़ज़ियों पर ज़ुल्म और उनकी शाने ख़बासत में तन्क़ीस है।"
(फ़तावा रिज़वियह-6-121)

और कहते हैं-" कुफ़्र में मजूस यहूदियों व नसारा से बदतर हैं हिन्दु मजूस से बदतर हैं और वहाबियह हिन्दुओं से भी बदतर हैं।"

आगे इर्शाद फ़रमाते हैं-"वहाबी असल में मुसलमान नहीं। उनके पीछे नमाज़ नहीं होगी, उनसे मुसाफ़ह करना नाजाइज़ व गुनाह है जिसने किसी वहाबी की नमाज़ जनाज़ह पढ़ी तो इस्लाम दोबारा ग्रहण करे तथा निकाह भी दूसरी बार करे।" (फ़तावा रिज़विया-13)

उनसे मुसाफ़ह करना बिल्कुल हराम व गुनाह कबीरा है बल्कि यदि बिना इरादा भी उनके शरीर से छू जाए तो वुज़ू को दोबारा करना ज़रूरी है।" (फ़तावा रिज़विया-1-208)

ये तो थे जनाब खां साहब के अहले हदीस के बारे में विचार कि वहाबी मलऊन, काफ़िर और मुर्तद हैं न उनके पीछे नमाज़ पढ़ना जाइज़ न उनकी नमाज़ जनाज़ा जाइज़ न उनसे निकाह करना जाइज़ न उनसे मुसाफ़ह करना जाइज़। ये सब शैतानी, मलऊनों, हिन्दुओं से भी बदतर हैं काफ़िर व जहन्नम के कुत्ते हैं जिसने किसी वहाबी की नमाज़ जनाज़ा पढ़ी वह तौबा करे और अपना निकाह दोबारा पढ़ाए और जिससे इनका बदन छू जाए वह वुज़ू करे।

अब जनाब बरेलवी के अनुयायियों के फ़तवे भी देख लो। बरेलवी मसलक के एक मुफ़्ती इर्शाद फ़रमाते हैं-

"अहले हदीस जो नज़ीर हुसैन देहलवी, अमीर अहमद सहसवानी,

बशीर हसन कन्नोजी और मुहम्मद बशीर कन्नौजी के अनुयायी थे। सब बहुक्मे शरीअत काफ़िर व मुर्तद हैं और अबदी अज़ाब और रब की लानत के अधिकारी हैं।"

जबकि ये सब अपने दोर के बड़े बड़े विद्वान हदीस के इमाम थे।

सनाउल्लाह अमृत्सरी के अनुयायी सब के सब मुर्तद हैं शरीअत के हुक्म से। (तजानिब अहले सुन्नह-248)

शेखुल इस्लाम मौलाना सनाउल्लाह अमृतसरी रहिम० कि जिनके बारे में सय्यद रशीद रज़ा ने कहा है-"रजुलुन इलाही फ़िलहिन्द"

(मुजल्ला अल मनार-33-639)

और जिन्होंने तमाम बातिल मज़हब व क़ादियानी, आर्य, हिन्दू मजूसी और ईसाई आदि को मुनाज़िरों में करारी हार दी और जो इस विषय में हुज्जत समझे जाते थे इनके बारे में बरेलवी हज़रात का फ़तवा है-

"ग़ैर मुक़ल्लिदीन का रईस सनाउल्लाह अमृतसरी मुर्तद है।"

(तजानिब-247)

और स्वयं जनाब बरेलवी ने लिखा है-

"सनाउल्लाह अमृतसरी दर पर्दा नाम इस्लाम, आर्य का एक गुलाम बाहम जंग ज़र गरी काम।" (अल इस्तिमदाद अज़ अहमद रज़ा-147)

जनाब बरेलवी पूरी उम्मते मुस्लिमा के निकट अइम्मए दीन इमाम इब्न हज़म, इमाम इब्ने तैमिया और इमाम इब्ने क़य्यिम आदि के बारे में लिखते हैं। वहाबियह के इमाम इब्ने हज़्म नाक़िदुल जज़म और रूइल

मशरब थे।" (सुबहानुस्सुबूह-27)

और-"इब्ने हज़्म ला मज़हब बद ज़बान।"

"इब्ने तैमिया ने निज़ामे शरीअत को फ़ासिद किया। इब्ने तैमिया एक ऐसा व्यक्ति था जिसे अल्लाह ने रूसवा किया वह गुमराह, अंधा और बहरा था इसी तरह वह बिदअती गुमराह कुन और जाहिल था।"

(सेफुल मुस्तफ़ा-92)

"इब्ने तैमिया बेकार बातें बका करते थे।"

(फ़तावा रिज़वियह-3-399)

एक और ने लिखा है-"इब्ने तैमिया गुमराह और गुमराह करने वाला था।" (फ़तावा रिज़विया-4-199)

इब्ने तैमिया बद मज़्हब था (जाअल हक़्-465)

इब्ने क़ैइम बद दीन था। (फ़तावा रिज़्विया-199)

इमाम शौकानी के बारे में फ़रमाते हैं-

"शौकानी की समझ वहाबिया मुताख़्ख़िरीन की तरह नाक़िस थी।"

(फ़तावा रिज़विया-2-442)

और-"शौकानी बद मज़हब था।" (सैफुल मुस्तफ़ा-95)

जनाब बरेलवी और उनके मानने वाले इमाम मुहम्मद अब्दुल वहाब नजदी के भी सख़्त दुश्मन हैं क्योंकि उन्होंने भी अपने दौर में शिर्क व बिदअत और क़ब्र परस्ती की लानत के ख़िलाफ़ जिहाद किया और तौहीद बारी तआला का परचम बुलन्द किया।

इनके बारे में अहमद रज़ा साहब लिखते हैं-

"बद मज़हब जहन्नम के कुत्ते हैं उनका कोई अमल कुबूल नहीं मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब नजदी आदि गुमराहों के लिए कोई बशारत नहीं यद्यपि उसका नाम मुहम्मद है और हदीस में जो है कि जिसका नाम अहमद या मुहम्मद है। अल्लाह तआला उसे जहन्नम में दाख़िल नहीं करेगा। यह हदीस केवल सुन्नियों (बरेलवियों) के लिए है। बद मज़हब (अर्थात वहाबी) तो यदि हज्रे असवद और मक़ामे इब्राहीम के बीच मज़्लूम क़त्ल किया जाए और अपने इस मारे जाने पर साबिर तालिब सवाब रहे। जब भी अल्लाह उसकी किसी बात पर नज़र न फ़रमाए और उसे जहन्नम में डाले।" (अहकामे शरीअत अज़ अहमद रज़ा-1-80)

आगे अर्शाद फ़रमाते हैं-

"मुर्तदों में सबसे ख़बीस तर वहाबी हैं।" (अहकामे शरीअत-123)

और-वहाबिया ख़बीस गुमराह और हर काफ़िर असली यहूदी बुत परस्त आदि से बदतर हैं।" (अहकामे शरीअत-124)

ख़ां साहब लिखते हैं-

"वहाबी फ़िरक़ा ख़बीसियह ख़्वारिज की एक शाख़ हैं जिनकी निसबत हदीस में आया है कि वह क़ियामत तक ख़तम न होंगे। जब उनका एक गिरोह हलाक होगा दूसरा सर उठाएगा यहाँ तक कि उनका पिछला वर्ग दज्जाल लअीन के साथ निकलेगा। तेरहवीं सदी के शुरू में नजद से और फिर वह नज़दी मशहूर हुआ जिन का पेशवा शेख़ नजदी था। उसका मज़हब मियां इस्माईल देहलवी ने कुबूल किया।"

(अल्‌कव्‌कबतु श्शहाबियति अला कुफ़्रियाति अबी वहाबियह-58-59)

ख़ां साहब से पूछा गया कि क्या फ़िरक़ा वहाबिया खुलफ़ाए राशिदीन के ज़माने में था ?

इसके जवाब में लिखते हैं-

"हाँ यही वह फ़िरक़ा है जिनके बारे में हज़रत अली रज़ि० ने फ़रमाया था कि यह ख़त्म नहीं हुए उनका आख़िरी गिरोह दज्जाल के साथ निकलेगा। यही वह फ़िरक़ा है कि हर ज़माने में नए नए रंग नए नए नाम से ज़ाहिर रहा और अब अख़िरी समय में वहाबियह के नाम से पैदा हुआ। बज़ाहिर वह बात कहेंगे कि सबकी बातों से अच्छी मालूम हो और हाल यह होगा कि दीन से इस तरह निकल जाएंगे जैसे तीर निशाने से।"

(मलफ़ूज़ात अहमद रज़ा-66)

अपनी खुराफ़ात को आगे बढ़ाते हुए लिखते हैं-

"ग़ज़व-ए-हुनैन में नबी सल्ल० ने जो माल बांटे उसपर एक वहाबी ने कहा कि मैं इस तक़सीम में न्याय नहीं पाता। इस पर फ़ारूक़ आज़म ने अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल० इजाज़त दीजिए कि मैं इस कपटी की गर्दन मार दूं। फ़रमाया इसे रहने दे कि इसकी नस्ल से ऐसे लोग पैदा होने वाले हैं यह इशारा वहाबियों की ओर था। यह था वहाबियों का बाप जिसकी ज़ाहिरी व मानवी नस्ल आज दुनिया को गन्दा कर रही है।" (मलफ़ूज़ात अहमद रज़ा-67-68)

बरेलवी साहब के एक अनुयायी अपने हसद व जलन का इस प्रकार प्रदर्शन करता है।

"ख़ारजियों का गिरोह फ़ित्ने की शक्ल में मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब की अगवाई में नजद के अन्दर बड़े ज़ोर शोर के साथ ज़ाहिर हुआ। मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब बाग़ी, ख़ारिजी और बेदीन था। उसके अक़ीदों को अच्छा कहने वाले उसी जैसे दीन के दुश्मन गुमराह हैं।"

(अल हक़्कुल मुबीन-1-11)

अमजद अली रिज़वी ने भी इसी प्रकार की खुराफ़ात का प्रदर्शन किया है। (बहारे शरीअत-46-47)

एक बरेलवी लेखक ने तो आरोप प्रत्यारोप और गालियों की हद कर दी है बस हर नैतिक्ता को तलाक़ देकर लिखता है-

"वहाबियों ने मक्का मुकर्रमा और मदीना मुनव्वरा में बे गुनाहों को बे तहाशा और हरमैन शरीफ़ के रहने वालों की औरतों और लड़कियों से ज़िना किया, सादात किराम को बड़ी मात्रा में क़त्ल किया मस्जिदे नब्वी शरीफ़ के तमाम क़ालीन और झाड़ फ़ानूश उठाकर नजद ले गए। अब भी जो कुछ इब्ने सऊद ने हरमैन शरीफ़ में किया वह हर हाजी भली प्रकार जानता है।" (जाअल हक़-4)

एक और बरेलवी इमाम मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब और उनके साथियों के बारे में गन्दी और असभ्य ज़बान इस्तेमाल करते हुए लिखते हैं-

"यह प्यारे मज़हब अहले सुन्नत का रोब व हक़्क़ानियत है कि नज़द के फ़िरऔन हिजाज़ की पाक धरती पर छाये हुए लरज़ रहे हैं कपकपा रहे हैं (अब कहां गया रोबे हक़्क़ानिया ? अब तो न केवल काबिज़ हो

चुके हैं बल्कि अकाबिरीने अहले सुन्नत का प्रवेश भी बन्द कर दिया है)

लिखते हैं-

"नापाक गन्दे, कुफ़री अक़ीदे रखने वाले, सऊदी हुकूमत मिल्लते नजद, ख़बीसियह इब्ने सऊद की सन्तान ना मसऊद।"

(तजानिब अहले सुन्नह-267)

एक बार बम्बई की जामा मस्जिद के इमाम अहमद यूसुफ़ ने सऊदी शहज़ादों का स्वागत किया तो बरेलवी हज़रात ने उनके बारे में तक्फ़ीरी फ़तवा देते हुए कहा-

"अहमद यूसुफ़ मर्दूद ने शाह सऊद के बेटों का स्वागत किया है और नजदी हुकूमत की प्रशंसा की है। वह नजदी हुकूमत जिसके नजस, कुफ़्रिया और ख़बीस अक़ीदे हैं उसने काफ़िरों व मुर्तदों का सम्मान किया है और गन्दी नजदी मिल्लत का स्वागत किया है वह अपने इस अमल के कारण काफ़िर व मुर्तद हो गया है और अल्लाह के प्रकोप का अधिकारी ठहरा है और इस्लाम को ध्वस्त किया है उनके इस अमल से अर्शे इलाही हिल गया है जो इसके कुफ़्र में शक करे वह भी काफ़िर है।"

(तजानिब अहले सुन्नह-268)

अर्थात सऊदी परिवार के लोगों का स्वागत करना इतना महापापगुनाह है कि जिसके करने से इन्सान काफ़िर व मुर्तद क़रार पाता है और अल्लाह के प्रकोप का अधिकारी ठहरता है। इस अमल की वजह से अर्शे इलाही भी हिलने लगता है। दूसरी ओर अंग्रेज़ साम्राज्य की हिमायत व समर्थन करने से ईमान में कोई फ़र्क़ नहीं आता। इसका कारण केवल यही हो

सकता है कि अलहे तौहीद की दावत दीन के नाम पर उनकी दुनियादारी के रास्ते में बाधा बन जाती है और आम लोगों को उनके फैलाए हुए जाल से आज़ाद करती है।

दुख तो इस बात का है कि उनकी किताबें क़ादियानी, शिआ, बहाई, हिन्दू, ईसाई और दूसरे धर्मों के ख़िलाफ़ तो दलीलों से ख़ाली होती हैं मगर अहले हदीस और दूसरे तौहीद परस्तों के ख़िलाफ़ गालियों, तानों व कुफ़्र के फ़तवों से भरी हुई हैं।

अहले हदीस के अलावा जनाब बरेलवी साहब और उनके अनुयायियों ने देवबन्दी हज़रात को भी अपनी तकफ़ीरी मुहिम की लपेट में ले लिया और उन पर कुफ़्र व इर्तिदाद के फ़तवे लगाए।

सबसे पहले दारूल उलूम देव बन्द के संस्थापक मौलाना क़ासिम नानौतवी इनकी तक्फ़ीर का निशान बने जिनके बारे में मौलाना अब्दुल हई लखनवी लिखते हैं-

''मौलाना क़ासिम नानौतवी बहुत बड़े विद्वान थे। नेकी व परहेज़गारी में माअ्रूफ़ थे ज़िक्र व मुराक़बे में व्यस्त रहते। लिबास में तकल्लुफ़ न करते। शुरू शुरू में केवल अल्लाह के ज़िक्र में व्यस्त रहे फिर हक़ाइक़ व मआरिफ़ के मैदान में पहुँच गए तो शेख़ इमदादुल्लाह ने इनको अपना ख़लीफ़ा बना लिया। ईसाइयों व आर्यों के साथ इनके मुनाज़िरे भी बड़े मशहूर हैं। इनका इन्तिक़ाल 1297 हिजरी में हुआ।''

(नुज़हतुल ख़्वातिर-7-83)

देवबन्दी तहरीक संस्थापक और अपने समय के अहनाफ़ के इमाम

मौलाना क़ासिम नानौतवी के बारे में ख़ां साहब लिखते हैं-

"क़ासिमिया क़ासिम नानौतवी की ओर मन्सूब जिस की "तहज़ीरून्नास" है और उसने अपने रिसाले में कहा है। मान लो आपके ज़माने में कहीं और कोई नबी हो जब भी आपका ख़ातिम होना बदस्तूर बाक़ी रहता है बल्कि यदि मान लो नब्वी ज़माने के बाद भी कोई नबी पैदा हो तो भी ख़ातमियते मुहम्मदी में कोई फ़र्क़ नहीं आएगा। यह वही नानौतवी है जिसे मुहम्मद अली कानपूरी नाज़िम नदवा ने हकीमे उम्मत मुहम्मदिया की उपाधि दी तो यह सरकश शैतान के चेले इस मुसीबत अज़ीम में सब भागीदार हैं।" (हिसामुल हरमैन, अहमद रज़ा-19)

आगे इसी तरह लिखते हैं-

"क़ासिमिया लाअ्नहुमुल्लाहु मल्ऊन व मुर्तद हैं।"

(फ़तावा रिज़विया-6-59)

आगे उनके एक अनुयायी ने लिखा है-

"तहज़ीरून्नास मुर्तद नानौतवी की नापाक किताब है।"

(तजानिब अहले सुन्नह-173)

मौलाना रशीद अहमद गंगोही देवबन्दी हज़रात के बहुत बड़े चोटी के विद्वान हैं मौलाना अब्दुल हई लखनवी उनके बारे में लिखते हैं-

"शेख़ इमाम अल्लामा मुहद्दिस रशीद अहमद गंगोही मुहक़्क़िक़ आलिम व फ़ाज़िल थे, सच्चाई पाक दामनी, अल्लाह पर भरोसा और दीन में सूझ बूझ में उनकी कोई मिसाल न थी। धार्मिक मामलों में बड़े सख़्त थे।" (नुज़हतुल ख़्वातिर-8-148)

ख़ां साहब इनके बारे में लिखते हैं-

"इसे जहन्नम में फेंका जाएगा और आग उसे जलाएगी और "ज़ुक अन्नकल अशरफु रशीद" का मज़ा चखाएगी।" (ख़ालिसुल एतिक़ाद-62)

"रशीद अहमद को काफ़िर कहने में शंका रखने वाले के कुफ़्र में कोई संदेह नहीं।" (फ़तावा अफ़्रीक़ा अज़ अहमद रज़ा-124)

एक बरेलवी लेखक ने अपनी एक किताब के पन्ने में चार बार मुर्तद गंगोही का शब्द दोहराया है।" (तजानिब अहले सुन्नह-245)

उनके आला हज़रत लिखते हैं-

"रशीद अहमद की किताब "बराहीने क़ातेआ" कुफ़्रिया कथन पेशाब से भी अधिक पलीद है जो ऐसा न जाने वह ज़िन्दीक़ है।"

(सुबहानुस्सुबूह-134)

इनके अलावा बरेलवी ख़ां साहब ने मौलाना अशरफ़ अली थानवी को भी काफ़िर व मुर्तद क़रार दिया है। मौलाना अशरफ़ अली थानवी देवबन्दी अहनाफ़ के बहुत बड़े इमाम हैं-

नुज़हतुल ख़्वातिर में है-

"मौलाना अशरफ़ अली बहुत बड़े दीनी विद्वान थे उनकी बहुत सी किताबें हैं। वाअ्ज़ व तदरीस के लिए आयोजित की जाने वाली मज्लिसों से लाभ उठाया और मुश्रिकाना रस्मों व बिदअतों से तौबा की।"

इनके बारे में अहमद रज़ा ख़ां साहब लिखते हैं-

"इस फ़िर्क़ा वहाबिया शैतानिया के बड़ों में एक और व्यक्ति इसी गंगोही के दुम छल्लों में है जिसे अशरफ़ अली थानवी कहते हैं उसने एक

छोटी सी रिसलया लिखी कि चार पन्नों की भी नहीं और उसमें बताया कि ग़ैब की बातों का जैसा इल्म नबी सल्ल० को है ऐसा तो हर बच्चे और हर पागल बल्कि हर जानवर और हर चार पाए को हासिल है।

(हिसामुल हरमैन-28)

आगे चलकर लिखते हैं-

"बदकारी को देखो कि कैसे एक दूसरी को खींच कर ले जाती है कहने का मतलब यह कि यह वर्ग सबके सब काफ़िर व मुर्तद हैं और इस्लामी उम्मत से आप सहमति की रू से ख़ारिज हैं। जो इनके कुफ़्र व अज़ाब में संदेह करे स्वयं काफ़िर है और शिफ़ा शरीफ़ में है जो ऐसे को काफ़िर न कहे या उनके बारे में सोचे या संदेह लाए वह भी काफ़िर हो जाएगा। निःस्संदेह जिन चीज़ों का इन्तिज़ार किया जाता है उन सब में सबसे बुरी दज्जाल है और निःसंदेह उसके अनुयायियों के लोगों के अनुयायियों से भी बहुत अधिक होंगे।" (हिसामुल हरमैन-31)

ख़ां साहब आगे लिखते हैं-

" जो अशरफ़ अली को काफ़िर कहने में संकोच करे उसके कुफ़्र में कोई संदेह नहीं।" (फ़तावा अफ़्रीक़ा-124)

बहिश्ती ज़ेवर (मौलाना थानवी की किताब) के लेखक काफ़िर हैं तमाम मुसलमानों को उस किताब का देखना हराम है।

(फ़वावा रिज़्विया-6-54)

और-"अशरफ़िया सब मुर्तद हैं।" (फ़तावा रिज़विया-237)

इसी प्रकार ख़ां साहब ने मशहूर देवबन्दी उलमा मौलाना ख़लील

अहमद, मौलाना महमूदुल हसन, मौलाना शब्बीर अहमद उसमानी आदि के ख़िलाफ़ भी कुफ़्र के फ़तवे दिए हैं।

अहमद रज़ा साहब इन उलमा व फुक़हा के अनुयायियों, आम देवबन्दियों को काफ़िर क़रार देते हुए कहते हैं-

'देवबन्दियों के कुफ़्र में शक करने वाला काफ़िर है।"

(फ़तावा रिज़विया-6-82)

इसी पर बस नहीं करते, आगे लिखते हैं-

"इन्हें मुसलमान समझने वाले के पीछे नमाज़ जाइज़ नहीं।"

(फ़तावा रिज़विया-81)

आगे फ़रमाते हैं-'देवबन्दियों के पीछे नमाज़ पढ़ने वाला मुसलमान नहीं।" (फ़तावा रिज़विया-6-77)

और-'देवबन्दी अक़ीदे वाले काफ़िर व मुर्तद हैं।"

(बालिगुन्नूर, फ़तावा रिज़विया-6-43)

इतना कुछ कह कर भी ख़ां साहब का गुस्सा ठंडा नहीं हुआ, फ़रमाते हैं-

"जो मदरसा देवबन्द की प्रशंसा करे और देवबन्दियों को बुरा न कहे इतना ही उसके मुसलमान न होने के लिए काफ़ी है।"

(फ़तावा रिज़विया-6-110)

अभी भी बरेलवीयों के आला हज़रत के दिल की भड़ास नहीं निकली। आगे इर्शाद फ़रमाते हैं-

'देवबन्दियों आदि के साथ खाना, पीना, सलाम करना, उनकी

ज़िन्दगी व मौत में किसी तरह का कोई इस्लामी बर्ताव करना सब हराम है न उनकी नौकरी करने की ज़रूरत है न उनको नौकर रखने की इजाज़त कि उनसे दूर भागने का हुक्म है।"

(फ़तावा रिज़विया-6-95)

आगे लिखते हैं-"इनको कुरबानी का गोश्त देना भी जाइज़ नहीं।"

(6-167)

जनाब बरेलवी के एक अनुयायी लिखते हैं-

'दिवबन्दी शरीअत के हुक्म के अनुसार काफ़िर व मुर्तद हैं।"

(तफ़सीर मीज़ानुल अदयान-2-270)

बरेलवियों के आला हज़रत के निकट देवबन्दियों का कुफ़र हिन्दुओं, ईसाइयों और मिर्ज़ाइयों से भी बढ़कर है।- फ़रमाते हैं-

"यदि एक जलसे में आर्य व ईसाई और देवबन्दी, क़ादियानी आदि जो इस्लाम का नाम लेते हैं वे भी हों तो वहाँ भी देवबन्दियों का विरोध करना चाहिए क्योंकि ये लोग इस्लाम से निकल गए हैं मुर्तद़ हो गए हैं और मुर्तदीन की हिमायत बदतर है काफ़िर असली की हिमायत से।"

(मलफ़ूज़ात अहमद रज़ा-325,326)

और-'देवबन्दी अक़ीदे वाली किताबें हिन्दुओं की पोथियों से बुरी हैं इनकी किताबें देखना हराम है अलबत्ता इनकी किताबों के पन्नों से इस्तिंजा न किया जाए, अक्षरों के सम्मान के कारण न कि इनकी किताबों के सम्मान के कारण। और अशरफ़ अली के अज़ाब व कुफ़्र में संदेह करना भी कुफ़्र है।" (फ़तावा रिज़वियह-2-136)

एक और बरेलवी लेखक ने इस प्रकार अपनी भड़ास निकाली-

"देवबन्दियों की किताबें इस योग्य हैं कि उनपर पेशाब किया जाए। उनपर पेशाब करना, पेशाब को और अधिक नापाक करना है। ऐ अल्लाह हमें देवबन्दियों अर्थात शैतान के बन्दों से पनाह में रखें।"

(सुबहानुस्सुबूह-75)

देवबन्दी हज़रात व उनके बुज़ुर्गों के बारे में बरेलवियों के कुफ़्रियह फ़तवे आपने देख लिए। अब नदवतुल उलमा के बारे में भी इन की बक्वास सुन लीजिए। जनाब बरकाती ने हशमत अली साहब से तसदीक़ कराकर अपनी किताब तजानिब अहले सुन्नह में लिखा हैं-

"नदवतुल उलमा को मानने वाले नास्तिक और मुर्तद हैं।"

स्वयं ख़ां साहब बरेलवी का इर्शाद है-

नदवी खिचड़ी है नदवा विनाश की भागीदारी मर्दूद है इसमें केवल बद मज़हब हैं।"

(मलफ़ूज़ात बरेलवी-201)

जनाब बरेलवी ने नदवतुल उलमा से फ़ारिग़ होने वालों को काफ़िर व मुर्तद क़रार देने के लिए दो रिसाले "अल जामुस सुन्नह लिअहलिल फ़ित्ना" और मजमूआ फ़तावा अलहरमैन बरजफ़ नदवतुल मैन" लिखे। तजानिब अहले सुन्नह में भी नदवतुल उलमा से फ़ारिग़ होने वालों के ख़िलाफ़ तक्फ़ीरी फ़तवों की भरमार है। ख़ालिस वहाबियों के बारे में इनके फ़तवों को देखिए-

"वहाबिया और उनके रहनुमाओं पर अधिक कारणों से कुफ़्र

लाज़िम है और इनका कलिमा पढ़ना उनके कुफ़्र को उनसे दूर नहीं कर सकता।"

(अल कव्कबतुश शहाबिया-10)

और-"वहाबिया पर हज़ार वजूह से कुफ़र लाज़िम आता है।" (59)

और-"वहाबी मुर्तद फुक़हा की आम सहमति से हैं।" (115)

जनाब अहमद रज़ा आगे फ़रमाते हैं-

"वहाबी मुर्तद और कपटी हैं ऊपर ऊपर से कलिमा पढ़ते हैं।"

(अहकामे शरीअत-112)

"इबलीस की गुमराही बहाबिया की गुमराही से हल्की है।"

(अहकामे शरीअत-117)

और-"खुदा वहाबियों पर लानत करे उनको रूसवा करे और उनका ठिकाना जहन्नम करे।" (फ़तावा अफ़्रीक़ा-125)

"वहाबिया को अल्लाह बर्बाद करे यह कहाँ बहके फिरते हैं।" (172)

"वहाबी असफ़लुस्साफ़िलीन पहुँचे।" (ख़ालिसुल एतिक़ाद-54)

"अल्लाह ने वहाबियों के भाग्य में ही कुफ़र लिखा है।"

(फ़तावा रिज़विया-6-198)

स्पष्ट है कि जब तमाम वहाबी काफ़िर व मुर्तद हैं तो उनकी कोई इबादत भी कुबूल नहीं। इस बात का जनाब अहमद रज़ा ने यों फ़तवा दिया-

"वहाबियों की न नमाज़ है न उनकी जमाअत, जमाअत है।"

(मल्फ़ूज़ात-105)

ख़ां साहब से पूछा गया कि वहाबियों की मस्जिद का क्या हुक्म है तो जवाब दिया-

"इनकी मस्जिद आम घर की तरह है जिस तरह इनकी नमाज़ बातिल है असी तरह अज़ान भी अत: इनकी अज़ान को दोहराया न जाए।" (मलफ़ूज़ात-105)

बरेलवियों के निकट बहाबियों को "मुसलमानों" की मस्जिदों में दाख़िल होने की इज़ाज़त नहीं। ख़ां साहब के एक साथी नईमुद्दीन मुरादाबादी फ़रमाते हैं-

"मुसलमान वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिदों को अपनी मस्जिदों में न आने दें वे न मानें तो क़ानूनी तौर पर उन्हें रूकवा दें। उनका मस्जिद में आना फ़ित्ना है अतएवं अहले सुन्नत की मस्जिद में वहाबी व ग़ैर मुक़ल्लिद को आने का कोई हक़ नहीं।" (मजमूआ फ़तावा नईमुद्दीन-64)

बरेलवीयों ने वहाबियों को मस्जिदों से निकालने के बारे में एक किताब भी लिखी "इख़राजुल वहाबीन अनिल मसाजिद" अर्थात वहाबियों को मस्जिदों से निकालने का हुक्म। आज भी कुछ ऐसी मस्जिदें हैं जिनके दरवाज़ों पर लिखा हुआ है कि-"इस मस्जिद में वहाबियों का प्रवेश मना है।" खुद मैंने लाहौर में दो ऐसी मस्जिदें देखी हैं जहाँ यह वाक्य अभी तक मौजूद है। जनाब अहमद रज़ा ख़ां साहब बरेलवी लिखते हैं-

"वहाबियों के पीछे नमाज़ अदा करना बातिल है।"

(फ़तावारिज़्विया-6-43)

"इक़्तिदार अहमद गुजराती का भी यही फ़तवा है।"

(फ़तावा रिज़विया-4-218)

जनाब बरेलवी का इर्शाद है-

"वहाबी ने नमाज़ जनाज़ा पढ़ायी तो मानो मुसलमान बिना जनाज़े की नमाज़ के दफ़न किया गया।" (फ़तावा रिज़विया-4-12)

उनसे पूछा गया कि यदि वहाबी मर जाए तो क्या उसकी जनाज़े की नमाज़ पढ़ना जाइज़ है और जो पढ़े उसके बारे में क्या हुक्म है ? तो जवाब मिला-"वहाबी की नमाज़ जनाज़ा पढ़ना कुफ़्र है।"

(मलफ़ूज़ात-78)

"वहाबियों के लिए दुआ करना बेकार है वे सीधे रास्ते पर नहीं आ सकते।" (मलफ़ूज़ात-286)

केवल इसी पर बस नहीं बल्कि----

वहाबियों को मुसलमान समझने वाले के पीछे भी नमाज़ जाइज़ नहीं।" (फ़तावा रिज़विया-6-80-81)

इनके एक अनुयायी ने लिखा है कि-

"जो आला हज़रत को बुरा कहे उसके पीछे भी नमाज़ जाइज़ नहीं।" (फ़तावा नईमिया-64)

वहाबियों के साथ पूरी तरह सामाजिक बहिष्कार का फ़तावा देते हुए जनाब अहमद रज़ा बरेलवी फ़रमाते हैं-

"इन सबसे मेल जोल पूरी तरह हराम है इनसे सलाम व कलाम हराम, इन्हें पास बिठाना हराम, इनके पास बैठना हराम, बीमार पड़ें तो इनकी इयादत हराम, मर जाएं तो मुसलमानों का सा इनको गुस्ल व

कफ़न देना हराम, इनका जनाज़ा उठाना हराम, इनपर नमाज़ पढ़ना हराम, इनको मुसलमानें के क़ब्रिस्तान में दफ़न करना हराम और इनकी क़ब्र पर जाना हराम। (फ़तावा रिज़्विया-6-90)

एक और साहब लिखते हैं-

वहाबियह ग़ुमराह और गुमराह करने वाले हैं इनके पीछे नमाज़ ठीक नहीं और न उनसे मेल जोल जाइज़ है।" (फ़तावा नूरियह-1-213)

"इनसे ब्याह शादी करना नाजाइज़, सलाम करना मना, और इनका ज़ब्ह अनुचित, ये लोग गुमराह, बे दीन हैं। इनके पीछे नमाज़ नाजाइज़ और मिलना जुलना उठना बैठना मना है।

(मजमूआफ़ताबा नईमुद्दीन-112)

"वहाबियों से मुसाफ़ह करना नाजाइज़ व गुनाह है।"

(फ़तावा रिज़्वियह-4-218)

अहमद यार गुजराती कहते हैं-

हनफ़ियों को चाहिए कि वे ``हाबियों के कुएं का पानी बे तहक़ीक़ न पिएं। (जाअल हक़-2-232)

"वहाबियों के सलाम का जवाब देना हराम है।"

(फ़तावा अफ़्रीक़ा-170)

" जो व्यक्ति वहाबियों से मेल जोल रखे उससे भी ब्याह शादी नाजाइज़ है।" (फ़तावा रिज़्वियह-5-72)

अहमद रज़ा साहब का इर्शाद है-

"वहाबी से निकाह पढ़वाया तो न केवल यह कि निकाह नहीं हुआ

बल्कि इस्लाम भी गया। निकाह व इस्लाम दोबारा ज़रूरी।" (5-89)

"निकाह में वहाबी को गवाह बनाना भी हराम है।"

(फ़तावा अफ़्रीक़ा-69)

ख़ां साहब के एक ख़लीफ़ा इर्शाद फ़रमाते हैं-

"वहाबी से निकाह नहीं हो सकता कि वह मुसलमान ही नहीं कुफ़्र होना तो बड़ी बात है।" (बहारे शरीअत-7-32)

और स्वयं आला हज़रत का कहना है-

"वहाबी सबसे बुरा मुर्तद है उनका निकाह किसी जानवर से भी नहीं हो सकता जिससे होगा ख़ालिस ज़िना होगी।"

(फ़तावा रिज़विया-5-194)

मैं पहली बार बरेलवी हज़रात से पूछने का साहस करता हूँ कि उनके आला हज़रत के निकट यदि किसी वहाबी का निकाह जानवर से नहीं हो सकता तो क्या बरेलवियों का हो सकता है ? जनाब अहमद रज़ा को इस बात का सख़्त ख़तरा था कि लोग वहाबियों के पास जाकर उनकी दलीलें सुनकर सीधे रास्ते पर न आजाएं। इस ख़तरे को भांपते हुए ख़ां साहब फ़रमाते हैं-

"वहाबिया से फ़तवा तलब करना हराम और सख़्त हराम है।"

(बहारे शरीअत-46)

अम्जद अली साहब लिखते हैं:-

वहाबी को ज़कात दी ज़कात कदापि अदा न होगी।

(बहारे शरीअत-465)

बरेलवी आला हज़रत से पूछा गया कि वहाबियों के पास अपने लड़कों को पढ़ाना कैसा है ? तो जवाब दिया-

"हराम, हराम, हराम और जो ऐसा करे वह बच्चों को बुरा चाहने वाला और गुनाहों का शिकार है। अल्लाह तआला का इर्शाद है-

"अपने आपको व अपने घर वालों को जहन्नम की आग से बचाओ।" (अहकामे शरीअत-237)

वहाबियों के हाथ से ज़ब्ह किए हुए जानवरों के बारे में अहमद रज़ा साहब का इर्शाद है-

"यहूदियों का ज़ब्ह हलाल है मगर वहाबियों का ज़ब्ह केवल नजिस व मुर्दार और हराम है यद्यपि लाख बार अल्लाह का नाम लें और कैसे ही मुत्तक़ी, परहेज़गार बनते हों कि ये सब मुर्तद हैं।"

(अहकामे शरीअत-122)

एक दूसरी जगह लिखते हैं-

"ऐसे ज़ानी कि जिनका ज़िना करना साबित हो चुका हो उनका ज़ब्ह हलाल है।" (फ़तावा अफ़्रीक़ा-27)

यह सब कुछ इसलिए है कि-

"वहाबी यहूद व नसारा, हिन्दुओं और मजूसियों से भी बदतर हैं और उनका कुफ़्र इनसे भी अधिक है।" (फ़तावा रिज़वियह-6-13)

"वहाबी हर काफ़िर असली यहूदी, नसरानी, बुत परस्त और मजूसी सबसे अधिक अख़बस, गुमराह और दुष्ट हैं।" (अहकामे शरीअत-124)

"ये कुत्ते से भी बदतर व नापाक तरीन हैं कि कुत्ते पर अज़ाब नहीं

और यह अज़ाब सख़्त के अधिकारी हैं।" (फ़तावा रिज़विया-5-138)

व मा न-क़-मू मिन्हुम इल्ला अंय्यूमिनू बिल्लाहिल अज़ीज़िल हमीद०

"उन लोगों ने केवल इस बात का बदला दिया है कि ये (उनकी खुराफ़ात की बजाए) अल्लाह पर ईमान लाएं हैं। (बुरूज-8)

"बरेलवियों के निकट वहाबियों की किताबों का अध्ययन हराम है।"

(फ़तावा रिज़विया-6-9)

"ग़ैर आलिम को उनकी किताबें देखना भी जाइज़ नहीं।"

(बहारे शरीअत-5-11)

स्वयं जनाब बरेली के ख़ां साहब का कहना है-

"आलिम कामिल को भी उनकी किताबें देखना नाजाइज़ है।" कि इन्सान है कि कोई बात जम जाए और हलाक हो जाए। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि जनाब बरेलवी के ख़ां साहब स्वयं तो दूसरों की किताबें देखना भी हराम क़रार दे रहे हैं लेकिन जब इनके तर्जुमा कुरआन पर कुछ हुकूमतों की ओर से पाबन्दी लगायी गयी तो इसपर शोर करना शुरू कर दिया। दूसरों की किताबों के अध्ययन पर हराम होने का फ़तवा लगाने वालो को कैसे हक़ पहुँचता है कि वे इस पर शोर हंगामा करे पहले अपने फ़तवों को तो वापस लें फिर वे दूसरों से इस प्रकार की मांग करें। स्वयं तो वे लोगों को वहाबियों के साथ संबंध क़ाइम करने और मस्जिदों में दाख़िल होने से भी रोक रहे हैं और किसी को इतना हक़ भी नहीं देते

कि वे इनकी कतर बौंत माअ्नवी पर आधारित किताबों के दाख़िले पर पाबन्दी लगा सकें। एक किताब के बारे में फ़रमाते हैं-

"आम मुसलमानों को इस किताब का देखना भी हराम है।"

(फ़तावा रिज़विया-6-54)

नईमुद्दीन मुरादाबादी लिखते हैं-

इब्ने तैमिया और उसके शिष्य इब्ने क़य्यिम जोज़ी रहिम० आदि की किताबों पर कान धरने से बचो।" (फ़तावा नईमुद्दीन-33)

●

हज के मुल्तवी होने पर फ़तवा

बरेलवियों की अक्ल का मातम कीजिए उन्होंने वहाबियों की दुश्मनी में हज के फ़रीज़े को मुल्तवी होने का फ़तवा भी दे दिया और कहा कि चूँकि हिजाज़ पर वहाबियों की हुकूमत है और वहाँ मुसलमानों (बरेलवियों) के लिए ख़तरा है अत: हज मुल्तवी हो चुका है और जब तक वहाँ सऊदी ख़ानदान की हुकूमत है उस समय तक मुसलमानों से हज की फ़रज़ियत ख़त्म हो गयी। इस फ़तवे को उन्होंने एक रिसाले "तनवीरूल हज्जलिमन यजू जुलि इल्तवाइल हज्ज" में प्रकाशित किया है।

फ़तवा देने वाले बरेलवी हज़रात के कोई ग़ैर मारूफ़ व्यक्ति नहीं बल्कि उनके मुफ़्ती जनाब अहमद रज़ा ख़ां साहब बरेलवी के बेटे मुस्तफ़ा रज़ा साहब हैं। इस फ़तवे पर पचास के लग भग बरेलवी रहनुमाओं के हस्ताक्षर हैं जिनमें हशमत अली क़ादिरी, हामिद रज़ा बिन अहमद रज़ा बरेलवी, नईमुद्दीन मुरादाबादी और सय्यद दिलदार अली आदि शामिल हैं।

इसमें दर्ज है-

"नपाक इब्ने सऊद और उसकी जमाअत तमाम मुसलमानों को काफ़िर मुश्रिक जानती है और उनके मालों को शीरे मादर समझती है उनके अक़ीदे की वजह से हज की फ़र्ज़ियत मुल्तवी है और ज़रूरी नहीं है।

(तनवीरूल हज-10)

फ़तवे के अन्त में दर्ज है-

"ऐ मुसलमानो ! इन दिनों आप पर हज फ़र्ज़ नहीं या अदा अनिवार्य नहीं, विलम्ब ठीक है। और यह हर मुसलमान जानता है और अपने सच्चे दिल से मानता है कि इस नजदी को बाहर निकालने की हर सभंव कोशिश करना उसका फ़र्ज़ है और यह भी हर अक्लमन्द पर स्पष्ट है कि यदि हाजी न जाएं तो उसे तारे नज़र आ जाएं। नजदी सख़्त हानि उठाएं। उनके पांव उखड़ जाएं आपके हाथ में और क्या है यही एक ऐसी तदबीर है जो इन्शाअल्लाह कारगर होगी।" (तनवीरूल हज-24)

और-

अल्लाह सवाल करेगा कि जब तुम पर हज फ़र्ज़ न था तो तुमने वहाँ जाकर हमारे और हमारे महबूबों के दुश्मनों को क्यों मदद पहुंचायी जब तुम्हें इसको मुल्तवी करने की इजाज़त थी और यह हुक्म हमारे नाचीज़ बन्दे और तुम्हारे सेवक मुस्तफ़ा रज़ा ने तुम तक पहुँचा दिया था फिर भी तुम न माने और तुमने हमारे और हमारे हबीब सल्ल० के दुश्मनों को अपने माल लुटवाकर हमारे पाक शहरों पर उनका नापाक क़ब्ज़ा और बढ़ा दिया।" (तनवीरूल हज-25)

ये हैं बरेलवी मसलक के रहनुमा। मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी ने केवल जिहाद को मुल्तवी करने का फ़तवा दिया था इनके रहनुमाओं ने अंग्रेज़ के ख़िलाफ़ जिहाद के साथ साथ हज को भी मुल्तवी करने का फ़त्वा दे दिया।

दिल्ली के एक बरेलवी आलिम इस फ़तवे की तसदीक़ करते हुए लिखते हैं-"हज के मुल्तती होने से नज़दियह के नापाक क़दम से इन्शाअल्लाह हरमैन पाक हो जाएंगे।" (तनवीरूल हज-31)

"जब तक नजदी मुसल्लत हैं उस समय तक हज के लिए यात्रा करना अपनी दौलत को नष्ट करने के बराबर है।"

(तनवीरूंल हज-32)

यह फ़तवा जहाँ बरेलवी रहनुमाओं की सतही सोच को दर्शाता है वहीं इस्लाम मुल्यों का अपमान जैसा भी है।

पाकिस्तान की तहरीक के नेता बरेलवियत की नज़र में

बरेलवियों ने तहरीक पाकिस्तान के लिए संघर्ष करने वालों को भी माफ़ नहीं किया। उनके निकट क़ाइदे आज़म मुहम्मद अली ज़िन्नाह, अल्लामा इक़बाल, मौलाना ज़फ़र अली ख़ां, तहरीक ख़िलाफत् हुसैन हाली, नवाब मेहदी अली ख़ां और नवाब मुश्ताक़ हुसैन सब काफ़िर व मुर्तद थे। लिखते हैं-

"नवाब मोहसिनुल मुल्क मेहदी अली ख़ां, नवाब आज़म यार जंग, मौलवी अल्ताफ़ हुसैन हाली, शिब्ली नोमानी और डिप्टी नज़ीर अहमद

ख़ां देहलवी वज़ीरान नेचरियत, मुशीराने दहरियत और ज़िन्दीक़ियत के प्रचारक थे।'' (तजानिब अहले सुन्नत-86,87)

अल्लामा इक़बाल के बारे में फ़तवा सुनिए-

''फ़लसफ़ी, नेचरियत डाकटर इक़बाल की ज़बान पर इब्लीस बोल रहा है।'' (तजानिब अहले सुन्नत-340)

आगे लिखा गया-

''फ़लसफ़ी नेचरियत डाकटर इक़बाल साहब ने अपनी फ़ारसी व उर्दू कविताओं में दहरियत और नैतिकता का बड़ा ज़बरदस्त प्रोपगंडा किया है कहीं अल्लाह पर आपत्तियों की भरमार है कहीं उलमाए शरीअत व इमामे तरीक़त पर हमलों की बौछार है कहीं सय्यदना जिबरील अमीन व सय्यदना मूसा कलीम व सय्यदना ईसा मसीह अलैहि० पर आलोचनाओं का ढेर है कहीं शरीअते मुहम्मदिया व मज़हबी अहकाम व इस्लामी अक़ीदों का उपहास व इन्कार है कहीं अपनी ज़िन्दीक़ियत व बेदीनी का गर्व के साथ खुला हुआ इक़रार है।'' (तजानिब-335)

''मुसलमानाने अहले सुन्नत स्वयं ही न्याय कर लें कि डाकटर साहब के मज़हब को सच्चे मज़हब से क्या ताल्लुक़ ?'' (तजानिब-341)

अल्लामा इक़बाल रहिम० की तकफ़ीर करते हुए दीदार अली साहब ने फ़तवा दिया था कि मुसलमानों को चाहिए कि वे डाकटर इक़बाल से मिलना तर्क कर दें वर्ना सख़्त गुनाहगार होंगे।''

(ज़िक्रे इक़बाल-129)

साम्राज्य के ख़िलाफ़ अपनी कविताओं व भाषणों द्वारा मुसलमानों को

जिहाद की रूह फूंकने वाले महान शाइर मौलाना ज़फ़र अली ख़ां रहिम० को काफ़िर साबित करने के लिए एक मुस्तकि़ल किताब "अलक़सूरतु अला अदवारिल हम्रिल कुफ़रतिलमुल ल-क़ब अला ज़फरम्मतुमिन कुफ़र" लिखी। यह किताब अहमद रज़ा ख़ां साहब के बेटे की है और इसपर बहुत से बरेलवी रहनुमाओं के हस्ताक्षर हैं।

अंग्रेज़ के ख़िलाफ़ जिहाद का झंडा बुलन्द करने वाले मौलाना अबुल कलाम आज़ाद रहिम० की तकफ़ीर करते हुए बरेलवी हज़रात कहते हैं-

"अबुलकलाम आज़ाद मुर्तद है और उसकी किताब तफ़सीर तर्जुमानुल कुरआन नापाक किताब है।" (तजानिव अहले सुन्नह-166)

हिन्दुस्तान में शिक्षा का आम चलन होने के कारण विचारों व दृष्टिकोणों पर असर पड़ने लगा। वे दम तोड़ने लगे थे क्योंकि उनकी बुनियाद अज्ञानता पर थी इसी कारण बरेलवित अधिकांश जाहिल वर्ग ही में लोक प्रिय है। शिक्षा की प्राप्ती बरेलवियत के लिए बहुत बड़ा ख़तरा था और बरेलवी हज़रात के निकट सर सैयद अहमद ख़ां का यह बहुत बड़ा अपराध था कि वे मुसलमानों को शिक्षा की तरफ़ ध्यान दिलाते थे और इसी उद्देश्य के लिए उन्होंने जामिया उर्दू अलीगढ़ की बुनियाद रखी थी। चुनांचे बरेलवियत के अनुयायियों ने उन्हें भी तकफ़ीरी फ़तवों का निशाना बनाया। अहमद रज़ा साहब लिखते हैं-

"वह ख़बीस मुर्तद था उसे सैयद कहना ठीक नहीं।"

(मलफूज़ात-319)

तजानिब अहले सुन्नत कि जिसकी तसदीक़ बहुत से बरेली उलमा ने

की है जिनमें बरेलवियों के "मज़हर आला हज़रत" हशमत अली क़ादिरी साहब भी शामिल हैं। उसमें सर सैयद के बारे में लिखा है-

"जो व्यक्ति उसके पूरी तरह काफ़िर होने में से किसी एक ही कुफ़र पर बाख़बर होने के बाद भी उसके काफ़िर व मुर्तद होने में शक रखे या उसे काफ़िर व मुर्तद कहने में संकोच करे वह भी शरीअत के हुक्म से पूरी तरह काफ़िर व मुर्तद और अज़ाब का अधिकारी है।" (तजानिब-86)

पाकिस्तान के बानी क़ाइदे आज़म मुहम्मद अली जिन्नाह की तकफ़ीर का फ़तवा देखिए-

"मिस्टर मुहम्मद अली जिन्नाह काफ़िर व मुर्तद है उसके बहुत से कुफ़िरयात हैं। शरीअत के हुक्म से वह कुफ़्रिया अक़ीदे के कारण मुर्तद और इस्लाम से ख़ारिज है और जो उसके कुफ़र पर शक करे या उसे काफ़िर कहने में संकोच करे, वह भी काफ़िर है।" (तजानिब- 119-122)

उस दौर की मुस्लिम लीग के बारे में उनका फ़तवा है-

"यह मुस्लिम लीग नहीं मुज़लिम लीग है।" (तजानिब- 112)

"बद मज़हब सारे जहाँ से बदतर हैं बद मज़हब जहन्नमियों के कुत्ते हैं क्या कोई सच्चा ईमानदार मुसलमान किसी कुत्ते और वह भी जहन्नमियों के कुत्ते को अपना क़ाइदे आज़म सबसे बड़ा पेशवा और सरदार बनाना पसन्द करेगा, कभी नहीं।

(मुस्लिम लीग की बख़ियादरी-140)

"मुस्लिम लीग का दस्तूर कुफ़्रियात व गुमराही पर है।"

(तजानिब अहले सुन्नह-118)

"जो मुहम्मद अली जिन्नाह की प्रशंसा करता है वह मुर्तद हो गया। उसकी बीवी उसके निकाह से निकल गयी। मुसलमानों पर फ़र्ज़ है कि उसका पूरा बहिष्कार करें यहाँ तक कि वह तौबा करे।"

सैयद अताउल्लाह शाह बुख़ारी रहिम० के बारे में उनका फ़तवा यह है कि उनकी जमाअत नापाक और मुर्तद जमाअत है।"

(तजानिब-90-160)

बरेलवी पाकिस्तानी सदर जनरल ज़ियाउल हक़ और पूर्व गवर्नर पंजाब जनरल सवार ख़ां और उन मंत्रियो को जिन्होंने इमाम काबा अश्शैख़ अब्दुल्लाह इब्नुस्सबील के पीछे नमाज़ अदा की थी उन सब पर भी कुफ़्र का फ़तवा लगा चुके हैं। किसी ने उनके मुफ़्ती शुजाअत अली क़ादिरी से सवाल किया कि उनका क्या हुक्म है ? मुफ़्ती साहब ने जवाब दिया-

"हज़रत नूरानी फ़ाज़िल बरेलवी रज़ि० का फ़तवा है कि जो व्यक्ति वहाबी नजदियों को मुसलमान जाने या उनके पीछे नमाज़ पढ़े वह काफ़िर व मुर्तद है।" (फ़तवा मुफ़्ती शुजाअत अली क़ादिरी)

जनाब अहमद रज़ा और उनके हवारी फ़तवा बाज़ी करने में बड़े जल्द बाज़ थे। विभिन्न लोगों और जमाअतों को काफ़िर क़रार देने के अलावा मामूली मामूली बातों पर भी कुफ़्र का फ़तवा लगा देते थे। कुछ मिसालें देखिए- जनाब बरेलवी का इर्शाद है-

"जिसने तुर्की टोपी जलायी वह इस्लाम से निकल गया।"

"बिना ज़रूरत अंग्रेज़ी टोपी रखना निःसंदेह कुफ़र है।"

"उलवी सैयद को उलवी कहना कुफ़र है।"

"उलमा की बदगोई करने वाला कपटी व झूठा है।"

"उलमा का अपमान कुफ़र है।"

"जिसने कहा कि इमाम अबू हनीफ़ा का क़ियास हक़ नहीं है वह काफ़िर हो गया।" (फ़तावा रिज़विया-11,30,22,26,24,34)

एक ओर तो इन बातों पर कुफ़र के फ़तवे लगाए जा रहे हैं और दूसरी ओर इतनी ढील दी जा रही है कि-"ग़ैरूल्लाह को सज्दा ए तहय्यत करने वाला हरगिज़ काफ़िर नहीं।" (फ़तावा रिज़विया-70)

"यह कहना कि हमारे माबूद मुहम्मद हैं कुफ़र नहीं।"

(फ़तावा रिज़विया-124)

"बुजुर्ग का सुब्हानी मा आज़मु शानी, अर्थात''मैं पाक हूँ मेरी शान बुलन्द है कहना कुफ़र नहीं है।"

(फ़तावा रिज़विया-146)

लेकिन-"जिसने आलिम को अवैलम कहा वह काफ़िर हो गया।"

(फ़तावा रिज़विया-119)

और बड़े अचम्भे की बात यह है कि इतने तकफ़ीरी फ़तवों के, बावजूद बरेलवी आला हज़रत कहा करते थे-

"यदि किसी कलाम में 99 चीज़ें कुफ़्र की हों और एक इस्लाम की तो वाजिब है कि कलाम को कम पर समझा जाए।"

(फ़तावा रिज़विया-11)

"किसी मुसलमान को काफ़िर कहा और वह काफ़िर न हो तो कुफ़्र

कहने वाले की ओर लौट जाता है और कहने वाला स्वयं काफ़िर हो जाता है।" (फ़तावा रिज़विया-11)

और दूसरे भी अधिक अचम्भे की बात यह है कि बरेलवी हज़रात अपने आला हज़रत के बारे में लिखते हैं-

"आला हज़रत तकफ़ीर के मामले में बड़े सावधान थे और इस मसले में जल्द बाज़ी से काम न लेते थे।" (अनवारे रज़ा-291)

"वे तकफ़ीरे मुस्लिम में बड़ी सावधानी से काम लेते थे।"

(फ़ाज़िल बरेलवी उल्माए हिजाज़ा की नज़र में-44)

जनाब बरेलवी स्वयं अपने बारे में लिखते हैं-

"यह हुस्ने इहतियात अल्लाह ने हमें प्रदान की। हम ला इलाहा इल्लल्लाह कहने वाले को यथा संभव कुफ़्र से बचाते हैं।"

(फ़तावा रिज़विया-251)

इन तमाम सावधानियों के बावजूद बरेलवी हज़रात की तकफ़ीरी मुहिम के निशाने पर आने से एक ख़ास टोले के अलावा कोई मुसलमान भी न बच सका। यदि इतनी सावधानी न बरती जाती तो न जाने क्या कुछ हो जाता ? अन्त में हम इस बारे में एक दिलचस्प बात नक़ल करके इस अध्याय को ख़त्म करते हैं। उलमाए दीन ने जनाब बरेलवी की किताबों से यह साबित कर दिया है कि स्वयं उनकी ज़ात भी तकफ़ीरी फ़तवों से न बच सकी।

अहमद रज़ा ख़ां साहब कई स्थानों पर कई लोगों के बारे में लिखते हैं कि जो उनके कुफ़्र में शक करे वह भी काफ़िर मगर दूसरी जगह उनको

मुसलमान क़रार देते हैं जैसे शाह इसमाईल शहीद रहिम० को कई बार काफ़िर व मुर्तद क़रार देने के बावजूद एक जगह लिखते हैं-

"उलमा-ए मोहतातीन शाह इसमाईल को काफ़िर न कहें तो यही उचित है।" अर्थात पहले तो कहा कि जो इनके कुफ़र में शक करे वह भी काफ़िर (इस का बयान विस्तार से गुज़र चुका है) फिर खुद ही कहते हैं कि उन्हें काफ़िर नहीं कहना चाहिए मतलब यह कि कुफ़र में शक किया और शक करने वाला उनके निकट काफ़िर है अत: वे स्वयं भी काफ़िर ठहरे।

इसी तरह एक जगह फ़रमाते हैं-"सैयद का अपमान कुफ़र है।"

और स्वयं सैयद नज़ीर हुसैन मुहद्दिस देहलवी रहिम० और दूसरे कई सैयद उलमा का अपमान ही नहीं बल्कि उनको काफ़िर व मुर्तद क़रार देकर कुफ़र के हक़दार ठहरे।

अल्लाह हमें ज़बान की ग़लतियों से बचाए।

●

बरेलवियत और हिकायतें

किताब व सुन्नत से मुंह मोड़ने वाले सभी बातिल फ़िरक़े मनगढ़त क़िस्से कहानियों का सहारा लेते हैं। ताकि वे झूठी रिवायतों को अपनाकर सीधे सादे लोगों के सामने उनको दलील की हैसियत से पेश करके अपने बातिल दृष्टिकोणों को रिवाज दे सकें।

साफ़ सी बात है किताब व सुन्नत से तो किसी बातिल अक़ीदे की दलील नहीं मिल सकती। मजबूर होकर क़िस्से व हिकायतों और झूठी कहानियों की ओर रूख़ करना पड़ता है ताकि जब किसी की ओर से दलील मांगी जाए तो तुरन्त इन हिकायतों को पेश कर दिया जाए जैसे अक़ीदा यह है कि औलिया-ए-किराम अपने मुरीदों की हाजत पूरी और मुश्किलें दूर कर सकते हैं और इसकी दलील यह है कि शेख़ जीलानी रहिम० ने किसी औरत की फ़रियाद बारह साल बाद एक डूबी हुई कश्ती को पैदा करके उसमें मौजूद डूबने वाले सारे लोगों को ज़िन्दा कर दिया था।

अपनी ओर से एक अक़ीदा गढ़ा जाता है और फिर उसे तर्कसंगत बनाने के लिए एक हिकायत गढ़ दी जाती है और इस तरह बातिल

मज़हब का कारोबार चलता है। ऐसे लोगों के बारे में अल्लाह का इर्शाद है-

अल्लज़ीना ज़ल्ला साअ्युहुम फ़िल हयातिद्दुन्या वहुम यह्सबूना अन्नहुम युह्सिनूना सुन्आ० (नूर-40)

किताब व सुन्नत के अनुसरण में ही उम्मत के लिए बेहतरी है यदि हम इससे मुंह मोड़ेंगे तो हमारे भाग्य में सिवाए खुराफ़ात व अंध विश्वास के कुछ न होगा। मुसलमानों के लिए कुरआन व सुन्नत के अलावा कोई तीसरी चीज़ दलील नहीं हो सकती। यदि क़िस्से कहानियों को भी दलील का प्रणाली दे दिया जाए तो मुसलमानों के बीच एकता व मेल की कोई सूरत नहीं निकल सकती। मुसलमान केवल अल्लाह की किताब और रसूल की सुन्नत पर ही एक हो सकते हैं।

क़िस्से कहानियों व गढ़ी हुई हिकायतों से हक़ को बातिल और बातिल को हक़ क़रार नहीं दिया जा मकता। आज हमारे दौर में यदि हिन्दुओं की नक़ल में गढ़ी हुई हिकायतों को छोड़ कर केवल किताब व सुन्नत की ओर पलटा जाए तो बहुत से ग़ैर इस्लामी अक़ीदे ख़त्म हो सकते हैं। और एकता की भी कोई सूरत निकल सकती है।

बरेलवी हज़रात ने बहुत सी हिकायतों को सनद का दर्जा दे रखा है। हम निम्न में उनकी असंख्य हिकायतों में से कुछ एक को नक़ल करते हैं। जनाब बरेलवी का अक़ीदा है कि बुज़ुर्गाने दीन अपने मुरीदों की परेशानियों को दूर करते, ग़ैब का इल्म रखते और बहुत दूर से अपने

मुरीदों की पुकार सुनकर उनकी फ़रियाद पूरी करते हैं। वे कहते हैं-

"सय्यद मूसा अबू इमरान रहिम० का मुरीद जहाँ कहीं उनको पुकारता जवाब देते यद्यपि साल भर की राह पर होता या उससे ज़्यादा।"

(मजमूआ रसाइल रिज़विया-1-182)

"हज़रत मुहम्मद बिन फ़रग़ल फ़रमाया करते थे मैं उनमें से एक हूँ जो अपनी क़ब्रों में तसर्रूफ़ फ़रमाते हैं जिसे कोई हाजत हो मेरे पास मेरे चेहरे के सामने हाज़िर होकर मुझसे अपनी हाजत कहे मैं पूरी कर दूंगा।" (रसाइले रिज़विया- 1-182)

अब इन कथनों व अक़ीदों की दलील कुरआन करीम की कोई आयत या नबी सल्ल० का फ़रमान नहीं बल्कि एक हिकायत है जिसे ज़नाब अहमद रज़ा ख़ां साहब ने अपने एक रिसाले में नक़ल किया है-

लिखते हैं-

"एक दिन हज़रत सय्यदी मदयन बिन अहमद अशमूनी रज़ि० ने वुज़ू फ़रमाते समय एक खड़ांव मश्रिक की ओर फेंकी। साल भर के बाद एक व्यक्ति हाज़िर हुए और वह खड़ांव उनके पास थी। उन्होंने हाल बताया कि जंगल में एक बदसूरत ने उनकी बेटी पर ज़बरदस्ती करना चाही। लड़की को उस समय अपने बाप के पीर मुर्शिद हज़रत सय्यदी मदयन का नाम मालूम न था उसने विनती की 'ऐ मेरे बाप के पीर मुर्शिद ! मुझे बचाइए।" यह आवाज़ सुनते ही वह खड़ावं आयी। लड़की ने नजात पायी। वह खड़ांव उनकी औलाद में अब तक मौजूद है।

(अनवारूल इन्तिबाह-1-182)

इसी से मिलती जुलती एक और हिकायत नक़ल करते हैं-

"सय्यदी मुहम्मद शमसुद्दीन मुहम्मद हनफ़ी के एक मुरीद को सफ़र के दौरान चोरों ने लूटना चाहा। एक चोर उसके सीने पर बैठ गया। उसने पुकारा-"ऐ मेरे आक़ा मुझे बचाइए।" इतना कहना था कि एक खड़ावं उड़ती हुई आयी और उसके सीने पर लगी वह बेहोश होकर उलट गया।" (अनवारूल इन्तिबाह-180)

एक और मज़ेदार हिकायत देखिए-

"एक फ़क़ीर भीख मांगने वाला एक दुकान पर खड़ा कह रहा था। एक रूपया दे वह न देता था। फ़क़ीर ने कहा 'रुपया देता है तो दे वर्ना तेरी सारी दुकान उलट दूंगा। इतने में बहुत से लोग जमा हो गए। इत्तिफ़ाक़ से एक साहिबे दिल का गुज़र हुआ जिनके सब लोग मोतक़िद थे। उन्होंने दुकानदार से फ़रमाया-जल्द रुपया इसे दे वर्ना दुकान उलट जाएगी। लोगों ने कहा हज़रत ! यह बे शरअ जाहिल क्या कर सकता है ? फ़रमाया- 'मैंने इस फ़क़ीर के बातिन पर नज़र डाली कि कुछ है भी ? मालूम हुआ बिल्कुल खाली पाया। इसके शेख़ के शेख़ को देखा उनको अल्लाह वालों में से पाया और देखा कि वह इन्तिज़ार में खड़े हैं कि कब उसकी ज़बान से निकले और मैं दुकान उलट दूँ।"

(मलफ़ूज़ात मुजद्दिद-189)

अंदाज़ा लगाएं कि एक मांगने वाला जाहिल फ़क़ीर नमाज़ रोज़े का तारिक बे शरअ नफ़ा व नुक़सान पहुँचाने और तसर्रूफ़ात व इख़्तियार का स्वामी है। किस तरह ये लोग जिस, ग़लीज़, नापाकी व पलीदी से ना

आशना मुग़ल्लज़ात बकने वाले हाथ में कश्कोल गदाई लिए, गले में घुंघरू डाले और मैला कुचैला लिबास पहने लोगों के सामने हाथ फैलाए। पेट पूजा करने वाले जाहिल लोगों को आम लोग मुक़द्दस, पाक बाज़, बुजुर्ग और सब कुछ करने वाली हस्तियां समझते हैं और दीन इस्लाम की पाकीज़ा शिक्षा को मिटा रहे हैं। यही वे शिक्षाएं हैं जिनपर उस मज़हब की बुनियाद है।

कुरआन व सुन्नत में तो इन विचार धाराओं का कोई वजूद नहीं। इन्हों ने स्वयं ही अक़ीदे गढ़ लिए और फिर इनकी दलीलों के लिए इस तरह की मनगढ़त हिकायतों का सहारा लिया।

औलियाए किराम की कुदरत व ताक़त को बयान करने के लिए बरेलवी हज़रात एक अजीब सी रिवायत का सहारा लेते हैं। लिखते हैं-

"एक व्यक्ति सय्यदना बा यज़ीद बसतामी रज़ि० की सेवा में हाज़िर हुआ। देखा कि पंजों के बल घुटने टेके। आसमान की ओर देख रहे हैं और आँखों से आंसुओं की जगह खून दौड़ रहा है। कहा-

'हज़रत ! यह क्या हाल है ?'

फ़रमाया-'मैं एक क़दम में यहाँ से अर्श तक गया। अर्श को देखा कि रब्बे अज़्ज़ो जल्ल की तलब में प्यासे भेड़िए की तरह मुंह खोले हुए हैं। हमें निशान देते हैं कि रहमान अर्श पर मौजूद है मैं रहमान की तलाश में तुझ तक आया तेरा हाल यह पाया।'

अर्श ने जवाब दिया-मुझे इर्शाद करते हैं कि ऐ अर्श ! यदि हमें ढूंडना चाहे तो बा यज़ीद के दिल में तलाश करो।"

(हिकायते रिज़वियह-181,182)

बरेलवी मसलक के निकट औलिया किराम से जंगल के जानवर भी भय खाते हैं और उनका पालन करते हैं इसकी दलील के लिए जनाब अहमद रज़ा जिस हिकायत की ओर रूख़ करते हैं वह यह है-

"एक साहब औलिया-ए किराम से थे। उनकी सेवा में दो आलिम हाज़िर हुए। आपके पीछे नमाज़ पढ़ी। तजवीद के कुछ क़वाइद मुसतहबा अदा न हुए। उनके दिल में ख़तरा गुज़रा कि अच्छे वली हैं जिनको तजवीद भी नहीं आती। उस समय तो हज़रत ने कुछ न फ़रमाया। मकान के सामने एक नहर जारी थी। ये दोनों वहां नहाने के लिए गए। कपड़े उतार कर किनारे पर रख दिए और नहाने लगे। इतने में एक अत्यन्त ख़ौफ़नाक शेर आया और सारे कपड़े जमा करके उनकर बैठ गया। यह साहब ज़रा ज़रा सी लंगूटियां बांधे हुए थे। अब निकलें तो कैसे ? उलमा की शान के ख़िलाफ़ है जब बहुत देर हो गयी तो हज़रत ने फ़रमाया कि भाइयो ! हमारे दो मेहमान सवेरे आए थे वे कहाँ गए ?

किसी ने कहा- 'हुज़ूर ! वे तो बड़ी मुश्किल में हैं।' आप तश्रीफ़ ले गए और शेर का कान पकड़ कर एक तमांचा मारा। उसने दूसरी ओर मुंह फेर लिया। आपने इस ओर मारा। उसने दूसरी ओर मुंह कर लिया।

आपने उनसे कहा-'हमने कहा था कि हमारे मेहमानों को न सताना जा यहाँ से जा। "शेर उठकर चला गया। फिर इन दोनों से फ़रमाया, तुमने ज़बानें सीधी की हैं और हमने दिल सीधा किया है। यह उनके ख़तरे का जवाब था।" (हिकायते रिज़वियह-110)

कुछ ऐसी हिकायतें भी हैं जिन्हें सुनकर हंसी के साथ साथ रोना भी आता है। इनमें से कुछ एक को यहाँ बयान किया जाता है। कहते हैं-

"सय्यदी अहमद सहज लमासी की दो पत्नियां थीं। सय्यदी अब्दुल अज़ीज़ रज़ि० ने उनसे फ़रमाया-

"रात को तुमने एक पत्नी के जागते दूसरी के साथ संभोग किया। ऐसा नहीं करना चाहिए था।"

अर्ज़ किया-"हुज़ूर ! वह उस समय सोयी हुई थी।"

फ़रमाया-सोती न थी सोते में जान डाल ली थी (अर्थात झूठ मूठ की सोयी हुई थी)

अर्ज़ किया-'हुज़ूर को किस तरह पता चला ?'

फ़रमाया 'जहाँ वह सो रही थी कोई और पलंग भी था ?'

अर्ज़ किया-'हां एक पलंग खाली था।'

फ़रमाया-उस पलंग पर मैं था।"

(हिकायते रिज़वियह-55)

इस प्रकार की खुराफ़ात नक़ल करते हुए भी शर्म महसूस होती है इन लोगों ने इनको किताब व सुन्नत के मुक़ाबले में दलील व बुरहान की हैसियत दे रखी है। इस तरह की ग़लीज़ नजिस और जिन्सी हिकायतों का नाम इन्होंने दीन व शरीअत रख लिया है। इससे इन्कार को ये लोग वहाबियत कुफ़र व इर्तिदाद से ताबीर करते हैं। एक बदमाश इन्सान जिसे ये लोग शेख़ और पीर के अलक़ाब से नवाज़ते हैं। पीर मुरीद और उसकी पत्नियों के बीच सोता रहा और संभोग के समय पति व पत्नी की हर

हरकत व काम को देखकर आनन्द उठाता रहा क्या यह अश्लीलता व नंगा पन है या दीन व शरीअत ?

यदि यही दीन व शरीअत है तो आंख नीची रखने और बदकारी से बचने आदि के अहकाम का क्या अर्थ है ? और यदि बरेलवी क़ौम के बुजुर्गाने दीन ही इस प्रकार की गन्दी हरकतें शुरू कर दें तो मुरीदों का क्या हाल होगा ?

और फिर बड़ी ढिठाई के साथ यह हिकायत नक़ल करने के बाद जनाब ख़लील बरकाती फ़रमाते हैं-

"इससे साबित हुआ-शेख़ मुरीद से किसी समय जुदा नहीं होता हर पल साथ है इस प्रकार बेशक औलिया और फुक़हा अपने अनुयायियों की सिफ़ारिश करते हैं और वे उनकी देख भाल करते हैं जब उस का हश्र होता है जब उसका कर्म पत्र खुलता है जब उससे हिसाब लिया जाता है जब उसके कर्म तुलते हैं और जब पुलसिरात पर चलता है हर समय हर हाल में उसकी निगाहबानी करते हैं किसी जगह इससे ग़ाफ़िल नहीं होते।" (हिकायते रिज़वियह-55)

जनाब बरेलवी अपने "मलफ़ूज़ात" में एक और हिकायत नक़ल करके क़ब्रों पर उर्स व मेलों के फ़ाइदे बतलाना चाहते हैं ताकि बदमाश लोग इन मेलों और उर्स में ज्यादा संख्या में भाग लेकर मज़ारों से फ़ैज़ हासिल करें। कहते हैं-

"सय्यदी अब्दुल वहाब अकाबिरे औलिया किराम में से हैं। हज़रत सय्यदी अहमद बदवी कबीर के मज़ार पर एक व्यापारी की कनीज़ पर

निगाह पड़ी। वह आपको पसन्द आयी। जब मज़ार शरीफ़ पर हाज़िर हुए तो साहिबे मज़ार ने इर्शाद फ़रमाया-

'अब्दुल वहाब ! वह कनीज़ तुमको पसन्द है ?"

अर्ज़ किया-'जी हां--'

शेख़ से कोई बात छिपाना नहीं चाहिए। इर्शाद फ़रमाया-

'अच्छा वह कनीज़ हमने तुम्को हिबा कर दी। आप सोच में हैं कि वह कनीज़ तो उस व्यापारी की है और हुज़ूर हिबा फ़रमाते हैं। वह व्यापारी हाज़िर हुआ और उसने वह कनीज़ मज़ारे अक़दस की नज़र की (यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि कनीज़ों को मज़ारो की नज़र करने के बाद क्या इसमें हिन्दुओं और अज्ञानता की नज़र व नियाज़ में कोई फ़र्क़ बाक़ी रह जाता है)

ख़ादिम को इशारा हुआ-उन्होंने वह कनीज़ आपको नज़र कर दी।

(साहिबे मज़ार ने) इर्शाद फ़रमाया-'अब किस बात की देर है फ़ला हुजरे में ले जाओ और अपनी इच्छा पूरी करो।" (क्या इस उद्देश्य के लिए मज़ारों के आस पास ऐसे हुजरे भी बनाए जाते हैं और क्या इनको नफ़सानी इच्छाओं की पूर्ति के लिए औरतों को मज़ारों पर अधिक्ता से आने की तर्ग़ीब दी जाती है)

जनाब बरेलवी असल में इन हिकायतों से यह साबित करना चाहते हैं कि औलियाए किराम को ग़ैब का ज्ञान हासिल है वे अपने मुरीदों के दिलों की बातों से न केवल परिचित हैं बल्कि उनकी इच्छा पूर्ति पर कुदरत व तसर्रूफ़ भी रखते हैं दावा और फिर उसकी दलील आपने देख

ही ली।

अब जनाब बरेलवी एक और हिकायत नक़ल करके इस बात की दलील पेश करना चाहते हैं कि केवल मुर्शिद और पीर ही ग़ैब का ज्ञान नहीं रखते बल्कि उनके मुरीदों से भी कोई चीज़ छिपी नहीं रहती। फ़रमाते हैं-

''हज़रत सय्यदी सय्यद मुहम्मद गेसु दराज़ कुदुस सिर्रहु कि अकाबिरे उलमा और सादात से थे जवानी की उम्र थी सादात की तरह शानों तक दो बाल रखते थे। एक बार रास्ते में बैठे थे हज़रत नसीरूद्दीन महमूद चराग़ दिल्ली रहिम० की सवारी निकली। उन्होंने उठकर ज़ानूए मुबारक बोसा दिया। हज़रत ख़्वाजा ने फ़रमाया 'यय्यद और नीचे बोसा दो। उन्होंने पाए मुबारक को बोसा दिया। एक बाल रकाब में उलझ गया था वहीं उलझा रहा और रकाब से सुम तक बढ़ गया। हज़रत ने फ़रमाया- 'सय्यद और नीचे बोसा दो।' उन्होंने हट कर ज़मीन पर बोसा दिया।

बाल को रकाब से अलग करके तशरीफ़ ले गए। लोगों को हैरत हुई कि ऐसे जलीलुल क़द्र सय्यद ने यह क्या किया ?' यह आपत्ति हज़रत गैसू दराज़ ने सुना, फ़रमाया कि लोग नहीं जानते कि मेरे शेख़ ने इन बोसों के बदले में क्या प्रदान किया ? जब मैंने ज़ानुए- मुबारक पर बोसा दिया आलमे नासूत मुझ पर खुल गया, जब पाए अक़दस पर बोसा दिया आलमे मल-कूत खुल गया। जब घोड़े के सुम पर बोसा दिया तो आलमे जबरूत रोशन हुआ और जब ज़मीन पर बोसा दिया लाहोत का राज़ खुल

गया।"   (हिकायते रिज़वियह-63,64)

इस प्रकार के लोगों के बारे में अल्लाह का इर्शाद है-

उलाइकल्लज़ीनश्तरवुज़्ज़लालति बिल हुदा फ़-मा रबिहत तिजा-र-तुहुम व मा कानू मोहतदीन०

"यही वे लोगा हैं जिन्होंने हिदायत के बदले में गुमराही ख़रीद ली है उनकी तिजारत लाभदायक नहीं। ये सीधी राह से भटके हुए हैं।"

(सूरह बक़रा)

बरेलवी हज़रात का अक़ीदा है कि अम्बिया किराम और औलिया किराम अपनी क़ब्रों में ज़िन्दा हैं। मौत के बाद भी वे दुनियावी ज़िन्दगी की तरह उठते बैठते सोते और जागते हैं अपने मुरीदों की बातों को सुनते और उनकी मांगों को पूरा करते हैं।

ज़ाहिर है कि यह अक़ीदा किताब व सुन्नत से तो साबित नहीं है अलबत्ता बहुत सी हिकायतें ऐसी हैं जिनसे इस अक़ीदे की दलीलें उपलब्ध हो जाती है। ख़ां साहब बरेलवी लिखते हैं"-

"इमाम व कुतुब हज़रत सय्यद अहमद रिफ़ाओ रज़ि० हर साल हाजियों के हाथ नबी सल्ल० पर सलाम भेजते। स्वयं जब हाज़िर होते तो रौज़ए अक़्दस के सामने खड़े हुए और अर्ज़ की--

"मैं जब दूर था तो अपनी रूह भेज देता था कि मेरी ओर से ज़मीन को बोसा दे तो वह मेरी नायब थी और अब नम्बर मेरे शरीर का है कि शरीर स्वयं हाज़िर है। आपका दस्ते मुबारक अता हो कि मेरे लब उससे

मिल जाएं।"

अतएवं नबी करीम सल्ल० का दस्ते मुबारब रौज़ा शरीफ़ में से बाहर आया और इमाम रिफ़ाअी ने उस पर बोसा दिया। अर्थात नबी सल्ल० क़ब्र से उठकर तश्रीफ़ लाए और शेख़ रिफ़ाअी से मुसाफ़ह किया। यह तो था नबी सल्ल० के बारे में उनका अक़ीदा। अब यही अक़ीदा उनके अपने बुज़ुर्गाने दीन के बारे में भी देखिए-

"इमाम अब्दुल वहाब शोअ़रानी क़ुदुस सिर्रूहु हर साल हज़रत सय्यदी अहमद बदवी कबीर रज़ि० के उर्स पर हाज़िर होते। एक बार उन्हें देर हो गयी तो मुजावरों ने कहा कि तुम कहाँ थे ? हज़रत बार बार मज़ार मुबारक से पर्दा उठा कर फ़रमाते रहे हैं।

अब्दुल वहाब आया ? अब्दुल वहाब आया ? (ज़रा देखिए कि एक ओर तो हज़रत को यह अक़ीदा कि औलिया-ए-किराम को ग़ैब की तमाम बातों का इल्म होता है दूसरी ओर कहते हैं कि--शेख़ बदवी मुजावरों से पूछते हैं कि अब्दुल वहाब आया है या नहीं ? यदि हज़रत को ग़ैब का इल्म था तो बार बार अब्दुल वहाब के आने के बारे में पूछने की क्या ज़रूरत थी और इसकी क्या तुक है कि मैं मज़ार पर आने का इरादा करने वाले हर व्यक्ति के साथ होता हूँ और उसकी हिफ़ाज़त करता हूं कितना विरोधाभास है इन बातो में ?)

तो अब्दुल वहाब कहने लगे-'क्या हुज़ूर को मेरे आने की ख़बर होती है ?'

मुजावरों ने कहा 'ख़बर कैसी ? हुज़ूर तो फ़रमाते हैं कि कितनी ही

दूर से कोई व्यक्ति मेरे मज़ार पर आने का इरादा करे तो मैं उसके साथ होता हूं और उसकी रक्षा करता हूं।" (मलफ़ूज़ात बरेलवी-275)

"दो भाई अल्लाह के रास्ते में शहीद हो गए उनका एक तीसरा भाई भी था जो ज़िन्दा था। जब उसकी शादी का दिन था तो दोनों भाई भी शादी में शिर्कत के लिए तशरीफ़ लाए। वह बड़ा हैरान हुआ और उनसे कहने लगा कि तुम तो मर चुके थे। उन्होंने कहा कि अल्लाह ने हमें तुम्हारी शादी में शरीक होने के लिए भेजा है।

अतएवं इन दोनों (मरने वाले) भाइयों ने अपने तीसरे भाई का निकाह पढ़ाया और वापस चले गए।" (हिकायत रिज़वियह-116)

अर्थात वफ़ात के बाद वे दुनिया में आए। शादी में शिर्कत की, निकाह पढ़ाया और वापस अपने स्थान पर चले आए।

यह दलील है इस बात की कि नेक लोग मरने के बाद भी ज़िन्दा होते हैं और दुनिया से उनका संबन्ध ख़त्म नहीं होता। इन्न-लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन०

एक और दलील देखिए-

अबू सईद फ़राज़ कुदुस सिर्रहु रावी हैं कि मैं मक्का मोअज़्ज़मा में था। बाब बनी शीबा पर एक जवान मरा पड़ा था। जब मैंने उसकी ओर नज़र की तो मुझे देखकर मुस्कुराया और कहा-

"ऐ अबू सईद ! क्या तुम नहीं जानते कि अल्लाह तआला के प्यारे (मरने के बाद भी) ज़िन्दा होते हैं यद्यपि वे ज़ाहिर में मर जाते हैं। वे तो एक घर से दूसरे घर की ओर लौटते हैं।" (मजमूआ रसाइल-2-243)

आगे सुनिए-

सय्यद अबू अली कुदुस सिर्रहु रिवायत करते हैं-

"मैंने एक फ़क़ीर (अर्थात सूफ़ी) को क़ब्र में उतारा। जब कफ़न खोला उनका सर मिट्टी पर रख दिया। फ़क़ीर ने आंखें खोल दी और मुझसे फ़रमाया 'ऐ अबू अली ! तुम मुझे उसके सामने ज़लील करते हो जो मेरे नाज़ उठाता है ?

मैंने अर्ज़ की-ऐ मेरे सरदार ! क्या मौत के बाद भी तुम ज़िन्दा हो?

फ़रमाया- 'मैं ज़िन्दा हूं और खुदा का हर प्यारा ज़िन्दा है। बेशक वह इज़्ज़त जो मुझे क़ियामत में मिलेगी उससे मैं तेरी मदद करूंगा।"

(मजमूआ रसाइल)

हिकायत की सूरत में एक और दलील देखिए-

"एक बी बी ने मरने के बाद ख़्वाब में अपने लड़के से फ़रमाया-

"मेरा कफ़न ऐसा ख़राब है कि मुझे अपने साथियों में जाते शर्म आती है (साबित यह करना चाहते हैं कि मुर्दे एक दूसरे से मुलाक़ात करते हैं) परसों फ़लां व्यक्ति आने वाला है उसके कफ़न में अच्छा कपड़ा रख देना। सुबह को साहबज़ादे ने उठकर उस व्यक्ति का पता किया। मालूम हूआ कि पूरी तरह ठीक है और उसे कोई रोग नहीं।

तीसरे दिन ख़बर मिली कि उसका इन्तिक़ाल हो गया है लड़के ने तुरन्त बड़ा अच्छा कफ़न सिलवाकर उसके कफ़न में रख दिया। और कहा, यह मेरी मां को पहुँचा देना।' रात वह बीबी सपने में अपने बेटे से बोली खुदा तुम्हें अज्र दे तुमने बड़ा अच्छा कफ़न भेजा।

"जौनपुर की एक नेक लड़की मर गयी उसे कहीं दफ़न कर दिया गया। इसी तरह जौनपुर का एक गुनाहगार व्यक्ति मदीना में दफ़न कर दिया गया। फिर कोई साहब हज को गए तो देखा कि मदीना में गुनाहगार की क़ब्र में तो लड़की है और जौनपुर में उस लड़की की क़ब्र में वह गुनाहगार है।" (मवाइज़े नईम-24)

अर्थात मरने के बाद वे एक दूसरे की क़ब्रों में चले गए। बरेलवी मसलक के अनुयायियों का अक़ीदा है कि औलिया न केवल मरने के बाद स्वयं ज़िन्दा रहते हैं बल्कि वे दूसरे मुर्दों को भी ज़िन्दा कर सकते हैं। देखिए इस तरह की दलील-

"हजूर ग़ौस पाक रज़ि० की वाअ्ज़ की मज्लिस में एक बार तेज़ हवा चल रही थी। उसी समय एक चील ऊपर चिल्लाती हुई गुज़री जिससे वाअज़ सुनने वालों का ध्यान बट गया। आपने नज़र भर कर ऊपर देखा वह चील मर गयी सर बदन से अलग हो गया। वाअ्ज़ के बाद हुज़ूर चलने लगे वह चील मरी पड़ी थी आपने एक हाथ में सर उठाया और दूसरे हाथ में बदन और दोनों को बिस्मिल्लाह कह कर मिला दिया। वह उड़कर चली गयी।" (बाग़ेफ़िरदौस-27)

बरेलवी हज़रात की कुछ हिकायतों में बड़ी दिलचस्प लतीफ़े होते हैं। ऐसी ही एक हिकायत आप भी सुनें-

"दो साहब औलिया किराम में से एक दरिया के इस किनारे, दूसरे दरिया के उस किनारे रहते थे। इनमें से एक साहब ने अपने यहाँ खीर पकायी और सेवक से कहा, इसे मेरे दोस्त के यहाँ चहुंचा दे।'

सेवक ने कहा-हुजूर ! रास्ते में दरिया पड़ता है मैं किस तरह पार उतरूंगा कश्ती आदि तो है नहीं।

फ़रमाया-दरिया के किनारे जा और कह ! मैं उसके पास से आया हूं जो आज तक अपनी औरत के पास नहीं गया।'

सेवक हैरान था कि यह क्या पहेली है ? इस लिए कि हज़रत तो सन्तान वाले थे। बहर हाल आज्ञा का पालन करना ज़रूरी था। दरिया पर गया और वह पैग़ाम जो उन्होंने बताया था कह दिया।

दरिया ने तुरन्त रास्ता दे दिया।

उसके पार पहुंच कर उस बुजुर्ग की सेवा में खीर पेश की।

उन्होंने खीर खायी और फ़रमाया, हमारा सलाम अपने आक़ा से कह देना। ख़ादिम ने अर्ज़ की-सलाम तो तभी कहूंगा जब दरिया से पार जाऊँगा। फ़रमाया, दरिया पर जाकर कहिए-मैं उसके पास से आया हूं जिसने तीस बरस से आज तक कुछ नहीं खाया। सेवक बड़ा हैरान हुआ कि अभी तो उन्होंने मेरे सामने खीर खायी है मगर सम्मान के कारण ख़ामोश रहा, दरिया पर आकर जैसा फ़रमाया था कह दिया। दरिया ने फिर रास्ता दे दिया।" (हिकायते रिज़विया-53)

औलिया-ए-किराम की कुदरत पर एक और दलील-

"हज़रत यह्या मुनीरी के एक मुरीद दरिया में डूब रहे थे। हज़रत ख़िज़्र अलैहि० ज़ाहिर हुए और फ़रमाया-अपना हाथ मुझे दे कि तुझे निकालूं। उस मुरीद ने अर्ज़ की-यह हाथ हज़रत यहया मुनीरी के हाथ में दे चुका हूँ अब दूसरे को न दूंगा। हज़रत ख़िज़्र अलैहि० ग़ाइब हो गए

और हज़रत यहया मुनीरी ज़ाहिर हुए और उनको निकाल लिया।"

(मलफूज़ात-2-164)

हज़रत बशर हाफ़ी कुदुस सिर्रहु पांव में जूता नहीं पहनते थे। जब तक ज़िन्दा रहे तमाम जानवरों ने रास्ते में लीद गोबर पेशाब करना छोड़ दिया ताकि बशर हाफ़ी के पांव ख़राब न हों, एक दिन किसी ने बाज़ार में लीद पड़ी देखी-कहा, इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन०

'पूछा गया क्या बात ?' कहा गया-हाफ़ी ने इन्तिक़ाल फ़रमाया, तहक़ीक़ के बाद यह बात मालूम हुई। (हिकायते रिज़वियह-172)

औलियाए किराम चाहें तो अहले कुबूर पर से अज़ाब भी उठा सकते हैं ज़रा दलील देखिए-

"एक बार सय्यदी इस्माईल हज़रमी एक क़ब्रिस्तान में से गुज़रे। इमाम मुहिब्बुद्दीन तिबरी भी साथ थे। हज़रत सय्यदी इस्माईल ने उनसे फ़रमाया-क्या आप इस पर ईमान लाते हैं कि मुर्दे ज़िन्दों से सलाम करते हैं।"

अर्ज़ किया- हां, इस क़ब्र वाला मुझ से कह रहा है 'मैं जन्नत की भरती में से हूं।'

आगे चले, चालीस क़ब्रें थीं। आप बहुत देर तक रोते रहे, यहां तक कि धूप चढ़ गयी। इसके बाद आप हंसे और फ़रमाया, तू भी उन्हीं में है।

लोगों ने यह कैफ़ियत देखी तो अर्ज़ की-"हज़रत ! यह क्या राज़ है ? हमारी समझ में कुछ न आया।'

फ़रमाया-इन क़ब्रों पर अज़ाब हो रहा था जिसे देख कर मैं रोता रहा और मैंने शफ़ाअत की। अल्लाह ने मेरी शफ़ाअत कुबूल की और उनसे अज़ाब उठा लिया।

एक क़ब्र कोने में थी जिसकी ओर ख़्याल न गया था उसमें से आवाज़ आयी-

ऐ मेरे आक़ा ! मैं भी तो उन्हीं में हूं मैं फ़लां गाना गाने वाली डोमनी हूं।

मुझे उसके कहने पर हंसी आ गयी और मैंने कहा 'तू भी उन्हीं में से है।' अत: उस पर से भी अज़ाब उठा लिया गया।"

(हिकायते रिज़वियह-200,201)

ख़ां साहब बरेलवी लिखते हैं-

"हज़रत शेख़ अक्बर मुहियुद्दीन इब्ने अरबी रहिम० एक जगह दावत में तश्रीफ़ ले गए। आपने देखा कि एक लड़का खाना खा रहा है। खाना खाते हुए अचानक रोने लगा। पूछने पर कहा कि मेरी मां को जहन्नम का हुक्म है और फ़रिश्ते उसे लिए जाते हैं।

हज़रत शेख़ अक्बर के पास कलिमा तय्यबा सत्तर हज़ार बार पढ़ा हुआ सुरक्षित रखा हुआ था। आपने उसकी मां को दिल में ईसाले सवाब समझ कर दिया। तुरन्त वह लड़का हंसा। आपने हंसने का कारण पूछा-लड़के ने जवाब दिया कि हुज़ूर ! मैंने अभी देखा कि मेरी मां को फ़रिश्ते जन्नत की ओर ले जा रहे हैं।" (मलफ़ूज़ात अहमद रज़ा-82)

ये हैं बरेलवियों के वे मज़बूत दलीलें जिनका इन्कार कुफ़्र व इर्तिदाद

के जेसा है जो इनका इन्कार करेगा उसपर वहाबी व कुफ़्र का फ़तवा लगा दिया जाएगा।

फिर सितम पर सितम यह है कि बरेलवी हज़रात इन हिकायतों व क़िस्सों द्वारा न केवल यह कि लोगों को मन गढ़त बुज़ुर्गों का गुलाम बनाना चाहते हैं बल्कि लोगों को अल्लाह के सारे इख़्तियारात व तसर्रूफ़ात इन औलिया की ओर परिवर्तित हो चुके हैं अब फ़रियाद व हाजत केवल औलिया उल्लाह ही से की जाए। खुदा से मांगने की कोई ज़रूरत नहीं जो कुछ लेना है वह बुज़ुर्गों से लिया जाए जो मांगना हो इन से मांगा जाए। यही मदद करने वाले फ़रियाद सुनने वाले हैं। अल्लाह ने सारे अधिकार इन्हें सौंप कर खुद मुअत्तल हो चुके हैं। उस तक किसी की पहुंच भी संभव नहीं और उससे मांगने की किसी को ज़रूरत भी नहीं। जनाब बरेलवी लिखते हैं-

''एक बार हज़रत सय्यद जुनेद बग़दादी रहिम० दजला पर तशरीफ़ लाए और या अल्लाह कहते हुए उस पर ज़मीन की तरह चलने लगे। बाद में एक व्यक्ति आया उसे भी पार जाने की ज़रूरत थी कोई कश्ती उस समय मौजूद न थी। उसने हज़रत को जाते देखा तो कहा-मैं किस तरह आऊँ ? फ़रमाया-या जुनेद या जुनेद कहता चला आ। उसने यही किया और दरिया पर ज़मीन की तरह चलने लगा। जब बीच दरिया में पहुंचा तो शैतान ने उसके दिल में वस्वसा डाला कि हज़रत स्वयं तो या अल्लाह कहें और मुझसे या जुनेद कहलवाते हैं मैं भी या अल्लाह क्यों न कहूं ?' उसने या अल्लाह कहा-और इसी के साथ ग़ोता खाया-पुकारा

हज़रत मैं चला। फ़रमाया वही कह-या जुनेद या जुनेद---जब यह कहा तो दरिया से पार हुआ।

उसने कहा हज़रत यह क्या बात थी ? आप अल्लाह कहें तो पार हों और मैं कहूं तो डूबने लगूं। फ़रमाया-अरे नादान ! अभी तू जुनेद तक नहीं पहुंचा अल्लाह तक पहुंचने की हविस है।"

(हिकायते रिज़वियह-52-53)

अर्थात आम इन्सानों को चाहिए कि वे केवल अपने बुजुर्गों और पीरों को ही पुकारें क्योंकि अल्लाह तक उनकी पहुंच संभव न ीं जबकि अल्लाह का इर्शाद है-

व-इज़ा स-अ-ल-क अिबादी अन्नी फ़इन्नी क़रीबुन उजीबुदाअ्-वतद दाअि इज़ा दआनि०

"जब (ऐ नबी) तुझसे मेरे बन्दे मेरे बारे में पूछें तो फ़रमा दीजिए मैं उनके निकट हूं। जब कोई पु ारने वाला मुझे पुकारे मैं उसकी पुकार सुनता हूं और कुबूल करता हूं।" (कुरआन)

व नहनु अक़रबु इलैहि मिन हब्लिल वरीद०

"हम इन्सान की शह रग से भी अधिक क़रीब हैं।" (कुरआन)

बहरहाल बरेलवी हज़रात हिकायतों से जो कुछ साबित करना चाहते हैं कुरआन मजीद की आयतें उस सब का विरोध करती हैं। हम एक और हिकायत बयान करके इस अध्याय को ख़त्म करते हैं-

जनाब बरेलवी इर्शाद फ़रमाते हैं-

"एक साहब पीर कामिल की तलाश में थे बड़ी कोशिश की मगर पीर कामिल न मिला। सच्ची तलाश थी। जब कोई न मिला तो मजबूर होकर एक रात अर्ज़ किया-ऐ रब ! तेरी इज़्ज़त की क़सम आज सुबह की नमाज़ से पहले जो मिलेगा उससे बैअत कर लूंगा। सुबह की नमाज़ पढ़ने जा रहे थे। सबसे पहले रास्ते में एक चोर मिला जो चोरी के लिए आ रहा था। उन्होंने हाथ पकड़ लिया कि हज़रत बैअत लीजिए वह हैरान हुआ, बड़ा इन्कार किया, न माने। आख़िरकार उसने मजबूर होकर कह दिया कि हज़रत मैं तो चोर हूं यह देखिए चोरी का माल मेरे पास मौजूद है। आपने फ़रमाया, मेरा तो मेरे रब से यह वादा है कि आज सुबह की नमाज़ से पहले जो भी मिलेगा बेअत कर लूंगा। इतने में हज़रत ख़िज़्र अलैहि० तशरीफ़ लाए और उस चोर को मरातिब दिए। तमाम मक़ामात तुरन्त तै कर लिए। वली किया और उससे बैअत ली और उन्होंने उनसे बैअत ली।" (हिकायते रिज़वियह-71,72)

ये हैं बरेलवियों की हिकायतें। इन हिकायतों से बरेलवी हज़रात ऐसे अक़ीदे साबित करना चाहते हैं जिनका वजूद किताब व सुन्नत में नहीं है और आयतों व हदीसों के मुक़ाबिल में वे इनको ही दलील की हैसियत से पेश करते हैं।

ज़ालिका मबलग़ुहुम मिनल्‌अिल्मि इन्ना रब्बका हुवा आअ्‌-लमु बिमन ज़ल्ला अन सबीलिही व हुवा आअ्‌-लमु बि-मनिह त-दा०

"यह हैं उनके इल्म की सीमा, बेशक अल्लाह उन लोगों को भी भली प्राकर जानता है जो उसके सीधे रास्ते से भटके हुए हैं और उनसे भी भली प्रकार परिचित हैं जो हिदायत वाले हैं।" (नजम-30)

अम तहसबु अन्ना अक्स-र-हुम यस्मऊना अव याअ्-क़िलूना इन हुम इल्ला कल अन्आमि बल्हुम अज़ल्लु सबीला--

'ऐ नबी क्या तू ख़्याल करता है कि लोगों की अक्सरियत सुनती और समझती है नहीं--इनका हाल तो जानवरों जैसा है बल्कि ये उनसे भी गए गुज़रे हैं।" (फुरक़ान-44)

अल्लाह तआला हिदायत प्रदान करे और गुमराही से बचाए रखे।